

विचारचन्द्रोदय ।

ब्रह्मनिष्ठपरिणतश्रीपीताम्बरजीकृत ।

उनके जीवन चरित्र और सटीक

श्रुतिपङ्क्तिङ्गसंग्रहसहित ।

नवीनरुढियुक्त ।

दशमावृत्ति ।

मुमुक्षुओंके हितार्थ

पं० ब्रजवल्लभ हरिप्रसादजीके लिये

सोल एजेन्टः—

रघुनाथदास पुरुषोत्तमदास अग्रवाल

ने छपवाया ।

यह पुस्तक शरीर भाले महमद नूरानी के पुत्र दाउदभाई और अन्नादीन भाईके पाससे सब प्रकारके रजिस्टरी दफ्तरीय प्रकाशकते ले लिया है और इसके सब दफ्तरीय कार्यान्वयके अनुसार प्रकाशित करने हैं ।

पुस्तक मिलने का पता—

हरिप्रसाद भागीरथजी लि०,

प्राचीन पुस्तकालय

कालवा देवी रोड, बम्बई नं० ७

दूसरा पता—

रघुनाथदास पुरुषोत्तमदास अग्रवाल

चूना ककड़, मथुरा ।

मुद्रक—राधू प्रभुदयालजी मीतल, ✓
अग्रवाल इलेक्ट्रिक प्रेस, मथुरा

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ।

प्रस्तावना ।

सर्वमतशिरोमणि श्रीवेदान्तसिद्धांत है । ताके जानने-वास्ते कनिष्ठ औ मध्यम आदिक अधिकारिनके अर्थ अनेक संस्कृत औ प्राकृत ग्रंथ हैं । परंतु जाकी बुद्धिमें विशेष शंका हावे नहीं ऐसा मन्दनतिमान्, परम-आस्तिक, शुद्धचित्तवाला जो उत्तम अधिकारी है, ताके अर्थ सरल, श्रेष्ठ, अल्प औ विरुधात वेदांतप्रक्रियाका ग्रन्थ कोउ नहीं है, यातैं मैंने यह विचारचंद्रोदयनामक वेदांतप्रक्रियाका प्रश्नोत्तररूप ग्रंथ किया है । यामैं षोडश प्रकरण हैं । तिनका "कला" ऐसा नाम धरयाहै । एक एक कलाविषै एक एक विलक्षण प्रक्रिया धरी है । मुमुक्षूकं ब्रह्मसाक्षात्कारविषै अवश्य उपयोगी जे प्रक्रिया हैं वे सर्व संक्षेपतैं यामैं हैं । अंतर्की षोडशवीं कलाविषै अनेकवेदांतपदार्थनके नाम रखे हैं । वे धार-नेमें अन्य महद्ग्रंथनके श्रवणविषै उपयोगी होवेंगे ॥

या प्रथक प्रह्न निष्ठगुरुके सुखसै जो मुमुक्षु अवश्य करैगा
 वा याक प्रथक बुद्धिमें धारण करैगा, वाके चित्तरूप
 आकाशमें अवश्य ज्ञानरूप युवा अवस्थाक धारनैवाला
 विचाररूप चद्रमा उदय होवैगा औ सशय घर आति-
 महित अज्ञानरूप अधकारवृ दूरी करैगा, पाडीसै
 याका नाम विचारचन्द्रोदय ह । याका विषय नीचे
 धरी अनुक्रमशिकाविषै स्पष्ट लिख्या है । तहां देख
 लना । (या प्रथके विशेषज्ञानविषै उपयोगी श्रीमरीक
 मालघोष हमनै किया है । ताकी २१० टिप्पण भर
 मूलगङ्गागत वृद्धिमहित द्वितीय आवृत्ति अधी छपी है ।
 जाकू इच्छा हावै सो देखे) विशेष विज्ञप्ति यह है
 कि — यह प्रथ प्रह्ननिष्ठ गुरुक सुखसै ही भङ्गापूर्वक
 पढ़ना । स्वतन्त्र नहीं । काहते गुरु बिना भिद्धान्तके
 रहस्यका ज्ञान होता नहीं औ गुरुसुखसै सकल अभिप्राय
 जान्या जायै ह । यानै गुरुक सुखसै ही पढ़ना चाहिये ।

लि० पण्डितपीताम्बरजी ।

पुस्तक मिचने का पता—

प० हरिप्रसाद भागीरथजी,
 काढाबन्दी रोड, मुम्बई

श्रीविचारचन्द्रोदय ।

अष्टमावृत्तिकी प्रस्तावना ।

संवत् १९७०—सन १९१४ में शरीफ साले महम्मद नूरानीकी प्रकाशित की हुई सप्तमावृत्तिकी प्रतिसे यह अष्टमावृत्तिका संस्करण हमने यथाप्रति ज्योंका त्यों प्रकाशित किया है । किसी प्रकारका परिवर्तन अथवा न्यूनाधिक भाव नहीं किया है । क्योंकि शरीफ सालेमहम्मद नूरानीके सुयोग्य पुत्र दाउद भाई और अलादीन भाई इनबन्धुद्वयके पाससे सब प्रकारके रजिस्टरी हक सहित इसे हमने ले लिया है । अतः वेदान्तानुरागी सुमुक्त जनौसे सविनय प्रार्थना है कि इसका सदाकी भांति सादर संग्रह करनेमें अग्रसर हों ।

नजबल्लभ हरिप्रसाद ।

ठि० हरिप्रसाद भागीरथजीका

प्राचीन पुस्तकालय,
कालबादेवी गेज नगर ।

। ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचन्द्रोदय ॥



॥ अथ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥

यह प्रथम चदान्तविद्याकी प्रथमपोथीरूप होनेसे
मुमुक्षुजनोंके अत्यन्त उपयोगी भयाई । नाते यह
सप्तमावृत्ति संहिता इस प्रथमकी आजपर्यन्त अनु-
मान १५ ० प्रति छपायी गई है ॥

इस प्रथम कला प्रत्यक्षारिय प्रत्यक्ष पंडित
धीमान् यशना महागुरुका पूर्वावस्थाका फोटा
प्राप्त पुरश्चावृत्तियामें रखाई और इस आवृत्तिमें
तिन वं उत्तमगद्यस्याका फाटाप्राप्त तिनोके जाया
व रथक आरम्भ रखा है ॥

औ यह आवृत्तिविषै श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह नामके लघुग्रन्थकूँ प्रविष्ट करीके पञ्चावृत्तितै नवीनता करीहै । तातैं इस आवृत्तिमें ८५ पृष्ठकी अधिकता भई है ॥

श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह । हमारे परमपूज्य गुरु पंडित श्रीपीतांबरजी महाराजनैं श्रीवृहदारण्यक-उपनिषद् छाप्याहै । तिसपरसैं लियाहै । तथापि हमनै मुद्रणशैलिविषै भिन्नप्रकारकी रचना करीके प्रत्येकस्थलमें ६ लिंगोंकूँ प्रत्यक्ष दृश्यमान कियेहैं । तातैं मुमुक्षुजनोंकूँ अभ्यासविषै अत्यंत सुलभता होवैगी ॥ यह श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह इस ग्रन्थविषै मुद्रांकित करनेमें ऐसा हेतु रखाहै किः—आजकल वेदांतविद्याविषै मुमुक्षुजनोंकी प्रवृत्ति अधिकाधिक होती जाती है तातैं श्रीविचार-चन्द्रोदयके अभ्यास किये पीछे । वेदांतके भूल-

८ सप्तमावृत्तिर्मा प्रस्तावना ॥ [विचार-

रूप कितनेक उपनिषद् हैं । ताके तात्पर्यसँ ज्ञात होना आवश्यक है ॥ वे उपनिषदोंके ऊपर रा मानुजआदिक द्वैतवादिओंनै जे भाष्य कियेहैं । तिनमें ' वेदका अभिप्राय द्वैतविषैहोई है ' ऐनै प्रतिपादन करनेका परिधम कियाहै । परंतु वे परिधम निष्फलहोई ह । कारण कि जगन्विषै द्वैत तौ विचारमें बिना मिडहो पडाहै । यार्तें ऐसै विषयक मिड करनेविषै वेदका अभिप्राय न-भविता नहोई ॥ " एक परमात्मतरयविना अन्य जो रह्यु प्रतीत होवै है । सो सर्व मायाएत भ्रान्तिरगिहो प्रतीत होवैहै " । ऐसै प्रतिपादन करनरा वेदका अभिप्राय जगद्गुरु श्रीमच्छंकराचार्यनै उपनिषदोंक भाष्यमें सिद्ध कियाहै ॥ कइयो ग्रन्थके तात्पर्य शोधनअर्थ ताके पट्लिगनहु अलोकन किये चाहिये ॥ इस कारणन

चन्द्रोदय] ॥ मत्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ ६

प्रत्येक उपनिषद्के ६ लिंग श्रीश्रुतिपङ्क्ति-लिंगसंग्रह-
विषय दिखाये हैं ॥ यह लिंगोंका श्रवण कोई
महात्माके मुखद्वाराहीं करना उचित है । काहेतैं
कि तैसैं 'करनैतै' वेदांतविद्याकी महत्ताका भान
होवैगा औ तदनंतर वे उपनिषदों का भाष्य-
सहित अभ्यास करनैकी जिज्ञासा बी उत्पन्न
होवैगी ॥

इस ग्रन्थका वा कोईवी अन्यशास्त्रका अभ्यास
करनैकी रीतिविषय हमारा आधीन अभिप्राय एक
दृष्टांतसैं प्रथम स्फुट करैहैं:—

दृष्टांत:-एक जौहरीका पुत्र अपनै मृतपि-
ताके मित्रसमीप एकछोटीसी मुद्रांकित मंजूष लेके
गया औ कहने लगा कि:-मेरे पितानै अपनै
अंतकालसमय यह मंजूष मेरे स्वाधीन करीहै औ
कहा है कि तिसमें एक अमूल्य हीरा है । सो

मेरे मित्रके पास तूं लेजाना नौ वे मित्र बड़ी
 कीमतमें बेच देवैगा ॥ वे जौहरीकी आशासें
 निसने मंजूष खोलके देखी तो एक बड़ा प्रकाशित
 हीरा देखनेमें आया ॥ हीरेसहित वह मंजूष पुनः
 बंध कीन्ही औ निसकुं प्रथमकी न्याई मुद्रित-
 कर्मां वे मित्रनै कहा कि यह हीरा बहुतमूल्य
 का है । जब कोई योग्य दाम देनेवाला प्रादक
 मिलगा तब बेचेंगे । यानै अथ इस मंजूषकुं
 रख छोड़ो ॥ जौहरीने उस पुत्रकुं अपनी दुकान
 पर बिठाया औ हीरेमालिक्यादिककी परीक्षा
 करनेकुं मिस्राया ॥ जब प्रयोग भया तब वे
 मित्रनै निसकुं कहा कि हे पुत्र ! यह हीरेकी
 मंजूष लेआव । तब वह उक्तमंजूषकुं ले आया
 औ खोलके हस्तमें लेके परीक्षा करो तब

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ ११

ज्ञात हुआ कि वह हीरा नहीं परन्तु काचका
तुकड़ा है ॥

सिद्धांत:-जैसे उक्त जौहरीका पुत्र काचकूँ
हीरा मानिके तिसद्वारा धनाढ्य होनैकी मिथ्या
आशाकूँ रखताभया । तैसेँ मनुष्य वी बालपन
सैहि जगत्के पदार्थोंकूँ क्षणिक औ नाशवान
देखते हुये वी यथार्थज्ञानके अभावतैँ तिनचित्रै
सत्यताकी बुद्धिकूँ धारणकरिके सुखकी मिथ्या
आशा रखते हैं औ अनेक तौ “ यह जगत्के
पदार्थोंसैँ विना अन्य कछुवी सत्य नहीं है” ऐसैँ
वी मानते हैं ॥

उपरि कहा तैसेँ मनुष्यमात्र मायाकरि भ्रांति
विषैँ भ्रमण करी रहेहैं तिनमेंसैँ कचित् कोईकूँही
“ मैं कौन हूँ ” । “ जगत् क्या है । ” “ मेरा
औ जगत्का अवसान क्या है ” इत्यादि अने-

मेरे मित्रके पास तू लेजाना तौ ये मित्र बड़ी
 फीमनसै* रेच देवेगा ॥ ये जौहरीकी आशासै
 तिसने मजूय खोलके देखी तो एक बड़ा प्रकाशित
 हीरा देखनेमें आया ॥ हीरेसहित वह मजूय पुन
 बध कीन्ही औ तिसकु प्रथमकी न्यार्द मुद्रित
 कराऊ ये मित्रने कहा कि यह हीरा बहुतमूल्य
 का है । जय कोई या य काम देनेवाला प्राइक
 मिलगा तब रेचेंगे । यातैं अब इस मजूयकु
 रख छाडो ॥ जौहरीन उस पुत्रकु अपनी दुकान
 पर बिठाया औ हीरेमालिकआदिककी परीक्षा
 करनैकु मियाया ॥ जय प्रवीण भया तब य
 मित्रनै तिसकु कहा कि हे पुत्र ' यह हीरेकी
 मजूय लगाय । तब यह उक्तमजूयकु ले आया
 औ खोलके दस्तमें लेके परीक्षा करो तब

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ ११

ज्ञात हुआ कि वह हीरा नहीं परन्तु काचका
तुकड़ा है ॥

सिद्धांतः-जैसे उक्त जौहरीका पुत्र काचकूँ
हीरा मानिके तिसद्वारा धनाढ्य होनेकी मिथ्या
प्राशाकूँ रखताभया । तैसे मनुष्य वी बालपन
तैहि जगत्के पदार्थकूँ क्षणिक औ नाशवान
देखते हुये वी यथार्थज्ञानके अभावतै तिनविपै
इत्यताकी बुद्धिकूँ धारणकरिके सुखकी मिथ्या
प्राशा रखते हैं औ अनेक तौ “ यह जगत्के
पदार्थकूँ बिना अन्य कछुवी सत्य नहीं है ” ऐसै
वी मानते हैं ॥

उपरि कहा तैसे मनुष्यमात्र मायाकरि भ्रांति
विपै भ्रमण करी रहेहैं तिनमैसै कचित् कोईकूँ ही
“ मैं कौन हूं ” । “ जगत् क्या है । ” “ मेरा
औ जगत्का अवसान क्या है ” इत्यादि अने-

कानेक प्रभ उद्भव हैं । जैसे कोई कटक के जग-
लविषै फसा हुआ दु गलक पावता है । तैसें सशय
औ शकारूप कटकसमूहसे जे पीड़ित ह ।
ये मात्र ता दु गल मुक्त होतकी इच्छा करतें ।
पराक्षित राजाक जन्मजन्म जे उपदेश किया सो
महानमनुष्याने श्रवण किया परंतु मोक्षप्राप्ति
मात्र परीक्षित राजाक भई कारण कि तिसका
मृ यु समय दिन निश्चित भयाथा औ अन्य धोत-
होतु 'सा को भय रही था ॥ आज भी वही
श्रीमद्भागवतकी सप्ताह पारायण अनन्यजन
धरण करत ह ॥

आधुनिक समयसँ कोई कोई इंग्रेजीभाषाशा-
नविषै कुशल पुरुष गुरुगम्य उपनिषद् आदिमहन्
ग्रंथोंका स्वतंत्र अवलोकन कर हैं औ तदनंतर
आपक वेदान्तसिद्धान्तके चेत्ता मानिषे अन्यजन

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ १३

नोंकूँ वेदांतका बोध देनेवास्ते इंग्रेजीमें ग्रन्थ लिख
तेहैं वा मासिकअंकनविषै लेख प्रकट करतेहैं ।
परंतु वे लेखमें मुख्यकरके द्वैतप्रपंचका प्रतिपा-
दनमात्र देखनैमें आताहै ॥ तैसेँ श्रीयोसाफि
नामक मण्डलके नेता वी वेदांतसिद्धांतकूँ
कछुक स्वतंत्र देखिके मुख्य द्वैतकाही वर्णन करेहैं
श्री अद्वैत महात्माओंकी सहायतासेँ
असंख्यवर्षोंके पीछे मुक्त होनेकी आशा रखतेहैं॥
ऐसेँ होनेका प्रधानकारण वेदांतविद्याका
स्वतंत्रअभ्यास है ॥ इसविषै श्रीविचारसागर
में सम्यक् कहाहै कि:—

॥ दोहा ॥

वेद अविद्य विनगुरु लखै, लागै लौन समान ।
वादरगुरुमुखद्वार है, अमृततैं अधिकांत ॥

पुरातनकालसेँ प्रचलित हुई रुढ़ि अनुसार

१० ॥ सप्तमावृत्तिर्ही प्रस्तावना ॥ [विचार

कानेक प्रभ उद्भवै हैं ॥ जैसें कोई कटक के जग-
लविपै फसा हुआ दु खकु पावता है । तैसें सशय
औ शकारूप कटकसमूहसे जे पीड़ित हैं ।
वे मात्र ता दु खसे मुक्त होनेकी इच्छा करतेहैं ।
परीक्षित राजाकु ^{अन्मन्त्र} अन्मन्त्र जो उपदेश किया तो
सहस्रनमनुष्योंने ध्वण किया परंतु मोक्षप्राप्ति
मात्र परीक्षित राजाकु भई । कारण कि तिसका
मृत्यु सप्तम दिन निश्चित भयाथा औ अन्य धोतरा
ओकु तैमा कोई भय नहीं था ॥ गाज भी वही
धीमद्भागवतकी सहाह पारायण अन्ययजन
ध्वण करते ॥ ॥

आधुनिक समयसे कोई कोई इमेजीभाषाशा
नविपै कुशल पुष्प गुरुगम्य उपनिषद् आदिमहर्ष
प्रयोगा म्यनत्र अउलोकन कर हैं औ तदनंतर
द्यापद् यदानमिद्धानके घेसा मानिषे अन्यज

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ १३

नांछूँ वेदांतका बोध देनेवास्ते इंग्रेजीमें ग्रन्थ लिख
तेहैं वा मासिकअंकनविषै लेख प्रकट करतेहैं ।
परंतु वे लेखमें मुख्यकरके द्वैतप्रपंचका प्रतिपा-
दनमात्र देखनैमें आताहै ॥ तैसैं थीयोसाफि
नामक मराडलके नेता वी वेदांतसिद्धांतछूँ
कछुक स्वतंत्र देखिके मुख्य द्वैतकाही वर्णन करेहैं
औ अदृश्य महात्माओंकी सहायतासैं
असंख्यवर्षोंके पीछे मुक्त होनेकी आशा रखतेहैं॥
ऐसैं होनेका प्रधानकारण वेदांतविद्याका
स्वतंत्रअभ्यास है ॥ इसविषै श्रीविचारसागर
में सम्यक् कहाहै किः—

॥ दोहा ॥

वेद अविद्य विनगुरु लखै, लागै लौन समान ।
वादरगुरुमुखद्वार है, अमृततैं अधिकांत ॥

पुरातनकालसैं ऽचलित हुई रुढि अनुसार

१४ ॥ मन्त्रमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ [विचार-

अनरु म्थलविषै जो वेदान्तकी कथा होतीहै ।
तामें काइरु शास्त्रका पठनरुतिके तिसपर कोई
महा मा पुरुष लिखन करेहे । तार्ते यद्यपि थोता
जनौरु लाभ हार्येहे तथापि शास्त्राभ्यासकी
पडति नौ विलक्षणही है ॥

जैसे दण्डातगत जोहरीरा पुत्र जोहरीकी सहा
यतासे हारेकी परीक्षा करनेमें कुशल भया ।
तैसे प्रपञ्चिकाका अभ्यास की कोई प्रह्वधोरिय
प्रचनिष्ठगुणद्वाग करमें आव । तथीही तामें
कुशलता प्राप्त हार्य ।

अर वेदान्तशास्त्रका अभ्यास कोई महात्माके
समीप किमगीतिरु करना आवश्यक है मा नाचे
वर्णन करेहे —

श्रीविचारचन्द्रान्य ग्रन्थ वेदान्तकी प्रथम भाषी-
रूप है ॥ यह ग्रन्थ प्रश्नोत्तररूप होनेसे प्रथम

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ १५

मुमुक्षु ताका व्याख्यासहित प्रतिदिन श्रवण करै
औ ताके पीछे जहांपर्यंत अभ्यास किया होवै ।
तहांपर्यंत कमसैं विना पूछनमें आवे तिनके
उत्तर मुमुक्षु देवै ॥ इस रीतिसैं ग्रंथ पूर्ण करिके
पीछे श्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहका मात्र श्रवण करै ।
तदनंतर—

मुमुक्षु श्रीविचारसागरका श्रवण करै औ
जितने भागका अभ्यास पक्का हुवापोवै । तितनैं
भागगत मुख्य पारिभाषिक शब्द । प्रक्रिया । वा
प्रसंगके प्रश्न महात्मा उत्पन्नकरिके पूछे ताके
उत्तर वह मुमुक्षु देवै ॥ यह ग्रन्थकी समाप्ती पीछे
श्रीपंचदशीग्रंथकावी तिसीहीं रीतिसैं दृढ अभ्यास
करै औ श्रीविचारसागरके छंदनमेंसैं तथा श्रीपंच
दशीके श्लोकनमेंसैं जितनै कंठ करनेकी महात्मा
आज्ञा करे तितनै मुमुक्षु कंठ करै ॥ गत

१६ ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ [विचार-

अभ्यासकी बारम्बार पुनरावृत्ति करनी थी
अन्यन्त आवश्यक है ॥

उपरोक्तरीतिसे उक्त ग्रन्थनका अथवा अन्य
वेदांत ग्रन्थनका रसंत श्री श्रद्धापूर्वक मुमुक्षु
अभ्यास करे तो ब्रह्मविद्याविषे कुशल होई नाम
शंका नहीं । तथापि ब्रह्मनिष्ठ होना तो अत्यन्त
शिकट है । काहेसे कि जगन्विषे सत्यताकी
बुझिहू दूरीकरणके असत्यताकी बुझि हट करनी
चाह्य थी अपनविषे निर्विकार ब्रह्मस्वरूपको
बुझिहू दृष्टिगो करनी होईहै । इस प्रकारकी
बुझि हूई ह या नहीं मा आपही अपने
आतमम गुणनेम उत्तर मिलताहै ॥ यद शान
मयमयदा ह ॥

ब्रह्मनिष्ठपनकी दुर्लभताविषे श्रीमद्भागवद्
गीतासे हट है । ३

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ १७

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये । यतता-
मपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ ७ । ३ ॥

ऊपर कहे अनुक्रमसे अभ्यासकी पूर्णता हुवे
पीछे कोई महात्माद्वारा श्रीमच्छंकराचार्यकृत
उपनिषद् भाष्य । सूत्र भाष्य । श्री गीता भा-
ष्यका अवलोकन करनेसे आनंदसहित ब्रह्मनि-
ष्ठाकी दृढ़तामें अधिकता होवैगी ॥ तदनंतर
इच्छा होवै तो श्रीयोगवासिष्ठादिक अनेक
वेदांतके ग्रंथ हैं सो भी देखना ॥ संक्षेपमें इत-
नाही कहना है कि जगत् व्यवहारोपयोगी अनेक-
विषयनका जैसे आदर श्री दृढ़तापूर्वक आधु-
निक शालाओंविषे विद्यार्थीजन अभ्यास करते हैं।
तैसे दीर्घ अभ्यासविना वास्तविक लाभ होसक-
नाहीं ॥ बहुतग्रंथनके पठनसेही ब्रह्मज्ञान होवै

ऐसा नियम नहा । उतमअधिकारी मात्र एक
 श्रीविचारसागर अथवा श्रीपद्मदगी श्रद्धापूर्वक
 गुरुद्वारा विचारिते निरमित विचारपूर्वक
 अभ्यास करै तौ ब्रह्मज्ञानकी प्राप्ति अवश्य होवै ।

जिसकू आधुनिककालसयधि अनेक गुंजा
 उद्भूत होती हार्थ । सा शास्त्रअभ्यासके पीछे
 इमेजाम किलतुनीके या सायन्सके अनेक धन्य
 ह वे देख तौ तार्ते बुद्धिका क्षेत्र अत्यन्तविस्तृत
 हार्थिगा श्री जगत्क मायिकता आदिक दृश्यन्त
 स्पष्ट हार्थिगी ऐसा स्वानुमय है ॥

भाटे समयमें हमने कुलनाम 'नूरानी' का
 हमारी मश्राफे अन्तर्मे प्रवेश किया है ॥ इति ॥

॥ ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचन्द्रोदय ॥

॥ अथ षष्ठावृत्तिकी प्रस्तावना ॥

इस ग्रंथकी पंचमावृत्तिमें पूर्वकी आवृत्तिनमें नवीनता करीथी तैसैं इस आवृत्तिविषै वी जो नवीनता औ अधिकता करीहै । सो नीचे दिखावे हैं:—

१. इस ग्रंथके कर्त्ता ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीताम्बरजी महाराजने मुमुक्षुनके उपरि अत्यन्त अनुग्रह करीके इस आवृत्तिके लिये ग्रंथभाग औ टिप्पणभागका पुनः संशोधन किया है । तथा टिप्पणोंविषै कहि कहि अधिकता करीके गहन अर्थकी विस्पष्टता करी है ॥

२ पूर्वमीमांसा । उत्तरमीमांसा (वेदांत) । न्यायश्रौतिकादिक षट्दर्शनोंविषै जीव । जगत् । बंध ।

मोक्षआदिक मुख्यपरार्थोंके कैसे भिन्नभिन्न लक्षण किये हैं । औ वे लक्षणविषय उत्तरोत्तर की समानताअसमानता हैं । सो दृष्टिगत मात्र सैं छा होयै ऐसा “वददर्शनसारदर्शकपत्रक ” श्रीपद दशी सटीका समागकी द्वितीयावृत्ति औ श्री विचारसागर की चतुर्थावृत्तिविषय हमनै दिया है तैसाही पत्रक इस ग्रन्थके अभ्यासीनके अघलोफ अर्थ इस आवृत्तिमें अतविषय छाप्या है ॥

३ इस आवृत्तिमें प्रथमविषय बहुतपर्यवे योगसैं चार चित्र दिये गये हैं । तिमविषय

१ प्रथमचित्र पूजाविषय स्थित हुये द्विजका है
(२) दूसरा चित्र राजाका है ॥

(३) तीसरा व्यापारीका है ॥ औ

(४) चतुर्थ चित्र घट बनानैविषय प्रवृत्त भये कुत्तालका है ॥

इमरानिस यद्यपि व्यास ग । जत्रिय । तैर्य औ यद् यद् चाग्निजानि दृश्यमान होयै हैं । तयापि

तेन च्यारिचित्रनविणै स्थित जो पुरुष है ।
 उसकी मुखाकृति लक्षपूर्वक अवलोकन करनेस
 ात होवैगा कि वे च्यारिचित्र एकहीं पुरुषके
 । मात्र तिनोंकी भिन्नभिन्नवस्त्र औ सामग्रीरूप
 उपाधिके भेदसँ ऐकहीं पुरुष भिन्नभिन्न च्यारि-
 णका प्रतीत होवैहै । अर्थात् तिनोंकी उपाधिके
 ाध कियेतै वे च्यारिपुरुषनका परस्पर केवल
 भेद है ॥

जीवब्रह्मका भेद सत्य नहीं किंतु मात्र उपाधि
 इतहीं है । ऐसा सर्वमतशिरोमणि वेदांतमत का
 जो महान् औ अबाधित सिद्धांत है औ जो इस
 ग्रंथकी “तत्त्वंपदार्थैक्यनिरूपण ” नामक ११ वीं
 कृत्ताविणै अनेकदृष्टांतसँ निरूपण कियाहै । तिसकूं
 अथास्थित समजनेमें औ तदनुसार दृढनिश्चयकर-
 नेमें मुमुक्षुनकूं सहायभूत होवेंगे । इतनाहीं नहीं
 परंतु दृष्टिगोचर होतेहीं वे महान् सिद्धांतकूं स्मरण
 करिवेंगे । ऐसैं मानिके उक्त चित्रनकूं छापे हैं ॥

इस ग्रन्थके कर्त्ता घननिष्ठ पंडितश्रीपीताम्बरजी महाराज । जिन्होंने जीवनचरित्र इस आवृत्ति-विषे यी छाप्याहै श्री जिन्होंने मुमुक्षुनके कलश-अर्थहां जन्म धारण किया था ऐसी कहिये ती तामें किंचित् वो अतिशयोक्ति नहीं है । श्री जिन्होंने अत्यन्तदयार्ते अनेक ग्रंथनहूँ रचिके तथार्थ पचदशी । श्रीमद्भगवद्गीता श्री वेदांतके

.....

.....

.....

ग्रामविधि सवत् १९६१ के वैशाख कृष्णपक्ष ७ शुक्लवारके दिन इस कृष्णभगुर जगत्का त्याग करीके विदेहमुक्त भयेहैं ॥ तिन्होंने तिन्नी वर्षके क्षेत्र कृष्णपक्ष १३ भौ.वारके रोज संन्यास ग्रहण करीके श्रद्धातन्त्रप्रकृति सदा धारण किया था ॥

शराफ सलामहंमद ॥

॥ ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचन्द्रोदय ॥

॥ अध पंचमाष्टिका की प्रस्तावना ॥

यह ग्रंथ ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजकरि
रघुनंदन रचित है। यामें पौडशप्रकरणरूप पौडशकला
हैं। श्री तिन प्रत्येक कलाविषे एकएक बिलक्षणप्रक्रिया
लखी है। यद्यपि ये सर्वप्रक्रिया संचिप्ताकारसें धरी हैं तथापि
सुमुत्तुनकूं ब्रह्मसाक्षात्कारकी प्राप्ति करनेमें सहाय-
कारिणी होवै हैं। यह ग्रंथ आदिमें अंतर्गृत प्रश्नोत्तररूप
होनेतैं श्री श्रेष्ठ अल्प श्री विख्यात वेदान्तप्रक्रियाकरि
युक्त होनेतैं। श्री सुवर्णशास्त्रशिरोमणि वेदान्तशास्त्रके
अभ्यासके आरम्भकालमें जो जो अवश्यज्ञातव्य है सो
सर्व इस लघुग्रन्थविषे समाविष्ट किया होनेतैं। वेदान्त
अभ्यासविषे नवीनजन कूं तो यह ग्रन्थ वेदान्तकी प्रथम-
पेयोरूप है ॥

ग्रन्थकारमहात्माने इसका सातभूत पद्यात्मक "वेदान्त-
पञ्चिका" नामक अष्टग्रन्थ किया है । सो "वेदान्तपञ्चिका"
के प्रथम अर्धग्रन्थ में प्रतिज्ञा है ॥ काम्य । कष्ट करने में
सुगम भी अशक्यमान किये विस्तृत अर्थों का समारक होवे है ।
इसकारण सुमुमुक्षु उपायो जो आत्मिक वेदान्तपञ्चिकागत
वेदान्त इस ग्रन्थविषय प्रत्येककलाके आरम्भ में पावे है ॥

अंग्रेजी वाङ्मयी कलाविषय ३०० से अधिक वेदान्त-
पञ्चिकाविस्तारों के अर्थ पाई । वे भी प्रत्येक महा-
राजकी कलाका ही एक है ॥ यह अष्टवेदान्तकोश
अष्टमहर्षि के अष्टविषय आश्रय महाग्रन्थ होवे है ॥

वा । आरम्भ में बड़ी आकाशिक अनुक्रमिका मिलेगी ।
निर्वाण का तत्त्व अथवा तृष्णा विनाशक प्राप्त होवे ॥
इस अनुक्रमिकाविषय अष्टवेदान्तकोशगत आश्रय भी
होवे ॥

श्रंकयुक्त पांश्राफनकी जो नवीनमुद्रणशैलि हमारे छापे हुवे श्रीपंचदशी सटीकासभाषा द्वितीयावृत्ति श्री श्रीविचारसागरचानुथांवृत्तिके ग्रन्थोंमें प्रविष्ट करीहै । तैसीही रूढिमें इस ग्रंथकी यह पंचमावृत्ति छापीहै ॥ इसरूढिसँ अश्यापीनकूँ अत्यन्त सुलभता होवैहै । कारण कि ग्रन्थके भिन्नभिन्न त्रिषयोका समानासमानपना । उत्तरोत्तरक्रम । तद्गन शंकासमाधान । दृष्टांतसिद्धांत श्री विकल्प । दृष्टिपातमात्रपैहीं ज्ञात होवैहै ॥ इस रूढिसँ ग्रंथनकूँछापनै आदिकतँ इस आवृत्तिका विस्तार गतआवृत्तिसँ अनुमान १०० पृष्ठोंका अधिक हुवाहै श्री काशज बी उत्तम डालेहै।

ग्रंथकारमहात्मा ब्रह्मनिष्ठ पद्मिन श्रीपातांबरजीमहाराज । जिनोंने अनेक स्वतंत्र ग्रन्थ रचिकें । श्रीपंचदशी श्री दशोपनिषद् आदिक महद्ग्रंथोंके भाषांतर करीके । श्री विचारसागरादिक अनेक ग्रंथनपर टिप्पण करिके । अखिल मुमुक्षुसमुदायउपरि मझान् अद्भुत कियाहै । तिनोँके जीवनचरित्रके लिये अनेक-

२६ ॥ पंचमावृत्तकी प्रस्तावना ॥ [विचार-

मुमुक्षुनकी नायकाकायाकू देखिके । सो जीवनचरित्र
इस आवृत्तिविषे विभक्तारसै व्याख्याई ॥ तदुपरि दर्शन-
करनै योग्य पूज्य महाराजश्रीकी परुषाकाशरी यथा-
स्थितचित्रितमूर्ति तिनो के हस्ताक्षरमद्वित प्रधारमसै
स्थापित करोई ॥

ग्रन्थविषे मुमुक्षुनकी प्रवृत्तिरै मनोरंजक ग्रन्थकी
सुन्दरता या सहायक है । ऐसै मानिके इस ग्रन्थके पूठे
सुन्दर कियई । परन्तु सुन्दरताके साथि सिद्धान्तका स्मरण
कर लाभ प्राये हर हेतुसै इस पंचमावृत्तिके पूठे
अतिउत्थ करोक विज्ञापितसै समवायई ॥ श्री रूपेरी
जाकि रगसै चित्तार्थक कियई ॥ पूठे ऊपर जे
भ्रान्तिप्रादिक चित्र व्यापेगयइ तिनके अर्थका विवेचन
म से करैई —

निर्गुणउपासनाचन्द्र इमार दुवाये धीविचार
सागरासै निर्गुणउपासनाचक्र घेरयाई । निसका एक
मसिप्त चय या पूठेमुलझागपर रखाई ॥ इसमें प्रत्येक
पद धनके अदिके अक्षरमात्र तिन पदार्थनकी स्मृतिके
लिये रखेई ॥ सुगमताका अर्थ स्पष्टता करियई —

चन्द्रोदय] ॥ पंचमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ २७

अ-अकार }
वि-विराट् } ॥ १ ॥ इन तीन उपाधिवान्की
वि-विश्व } एकता चिंतनीय है ॥

उ-उकार }
हि-हिरण्यगर्भ } ॥ २ ॥ इन तीन उपाधि-
तै-तैजस } चान्की एकता चिंतनीय है ॥

म-मकार }
ई-ईश्वर } ॥ ३ ॥ इन तीन उपाधिवान्की
प्रा-प्राज्ञ } एकता चिंतनीय है ॥

अ-अमात्र }
ब्र-ब्रह्म } ॥ ४ ॥ इन तीन शुद्धनकी एकता
तु-तुरीय } चिंतनीय है ॥

प्रथमत्रिपुटीकी द्वितीयके साथि औ तिसकी
चतुर्थके साथि औ तिसकी चतुर्थके साथि
एकता चिंतनीय है ॥

उक्तअर्थ श्रीविचारसागरकी चतुर्थआवृत्तिके २८१
सँ ३०२ अङ्कपर्यन्त ग्रन्थकर्त्ताने विस्तारसँ दिखाया है

दो सीधीरेषायुक्त आकृतिः—जिनके मुख-
भागउपरि चन्द्राकारविषै ग्रन्थका नाम त्थाप्या है । ताके
नीचे दो सीधीरेषावाली एक आकृति है । ये दोनों



रेषा शक्तिगदित। तत्क मङ्गोचित सो वामरिशातरक
विकसित हुई भावनाह । परन्तु द्वावविह नैमि नहीं है
किं सर्वस्थलमे व ममान अतरवाञ्छ ही हैं । यह घाली
दामूरय सो के आश्रिभागरू अन्तभागक साथि कष्टप्रकरिके
द्वयमे निर्विवाद मित होवैह ॥

परिमाणभ्रांतिदर्शक दो आकृतिः—जिल्दकी पीठविषे चर्तु लाकारमें " शरीफ " नाम है । ताके ऊपर उक्त दो-आकृतियां छापी हैं । सो नीचे दिखावेहैंः—



उभयचित्रोंकी दोनूँ सीधीमध्यरेखा यद्यपि समान परिमाणकी हैं । तथापि तिमके अग्रभागविषे धरीहुई तिर्यकरेखारूप उप धिके बजसै' भ्रांतिद्वारा वामचित्रकी मध्यरेखा दक्षिणचित्रकी मध्यरेखासै' बड़ी प्रतीत होवैहैं ॥

दीर्घरेखायुक्त दो आकृतिः—पूँठेके पृष्ठभागपर मध्यमें पट्चक्राकार औ उपरि तथा नीचे दीर्घरेखा-युक्त । ऐसै' रू'र्व तीन आकृति रखीहैं । तिनमेंसै' दीर्घ रेखायुक्त आकृतिनका वर्णन करेहैंः—

पूँठेके पृष्ठभागके उपरि की दो दीर्घरेखा । नीचे

प्रथमआवृत्तिसमान दृष्टयावती है:—

१ प्रथम आवृत्ति,

क ख क

उपरिकी दोरेषा,

आदिअ--में दोन् दोरेषाका क क भाग संकोचित

तथा मध्यक स्व भाग विकसित दृष्ट यावना है ।

यानें ये रेखा बकाकार हैं ऐसे प्रतीत होवै हैं ॥

पूठक पृष्ठभागके नीचेकी दोदोरेषा । नीचेकी

दूसरी आवृत्तिपरत भ सता है:—

२ दूसरी आवृत्ति,

क ख क

नीचेकी दोरेषा,

आदिअ--में दोन् दोरेषाका क क भाग विक-

सित तथा मध्यका स्व भाग संकोचित देखनैमें

यावना है । अर्थात् प्रथम आवृत्तिसँ विपरीत बकाकार

प्रदान हाव है ॥

तथापि पूंठेके पृष्ठभागके उपरि की औ नीचे की दो दीर्घरेपा । प्रथम औ दूसरी आकृतिके समान वक्र नहीं हैं । सीधीहीं हैं । मात्र भ्रांतिसँ वक्ररेपा-कार प्रतीत होवैहैं । यह वार्ता प्रत्यक्षरूप चालुप प्रमाणसँ जैसँ सिद्ध होवैहै । तैसँ स्पष्ट करैहैं:—

जैसँ कोई बाणकूँ ओडनैके समयपर बाणकूँ लक्ष्यके साथि दृष्टिसँ सांधताहै । तैसँ उक्त नीचेऊपरकी दोनूँरेपाओं आदिके साथि अन्तकूँ लक्ष्यकरिके देखनैसँ वे दोनूँरेपा । बाजूकी तीसरी आकृति समान सीधीहीं दृष्ट आवैगी ॥

यातै पूंठेके पृष्ठभागपर उक्त प्रथमाकृतिसदृश ख भाग विस्तृत । तथा दूसरी आकृतिसदृश ख भाग संकोचित दृष्ट आवतेहैं सो भ्रांतिकरिकेहीं भासतेहैं । यह सहजही निश्च होवैहै ॥

भ्रातिका कारण - प्रत्येक दीर्घरेखा के ऊपर तथा नीचे जे अनुमान १८ वा २० छोटी टेढ़ीरेखा हैं । हा उप धिरूप है औ वे उपाधिरूप रेखाई इस चित्रनदृष्टांतविषे भ्रातिकी कारण हैं ॥

जैसे मरुभूमि विषे मृगजलका भान भ्राति रूप है । तैसे उहा चित्रनदृष्टांतविषे (१) प्रथम तथा (२) दूसरी आकृतिगत स्व भागके विकसित औ रुकाचित्रपनैका भान भी भ्रातिरूप है ॥

जैसे मरुभूमि विषे " व्यावहारिक जल नहीं है । गतिभासि गता है " तैसे निश्चित भये पीछे भी उपाधूमिके साथ सुयस्त्रिरणके सबधरूप उपाधिक मतमें नज की प्रतीति दूरि नहीं होवेहे । तैसे उहा शरवारूप चित्रनदृष्टांतविषे भी प्रथम तथा दूसरी आकृतिगत " स्व भाग विकसित औ संकोचित नहा है किन्तु आदिअन्तपर्यंत समानहा है " तैसे निश्चित भये पीछे भी छोटी टेढ़ीरेखाक सबधरूप उपाधिक चित्रमें (१) प्रथम तथा (२) दूसरी आकृति की न्याई स्व भागके विकास औ संकोच की प्रतीति दूरि नहा होवेहे ॥

चन्द्रोदय] ॥ पंचमावृत्तिको प्रस्तावना ॥ ३३

१ सिद्धांत—श्रुतिः—परां च खानि व्यतृणत्स्वयं-
भूस्तस्मात्पराङ् पश्यति नांतरात्मन् ” अर्थः—स्वयंभू
(परमात्मा) इन्द्रियनकूँ वहिमुख रचनाभया । तातें
देवतिर्यग्मनुष्यादिक । बाह्यवस्तुनकूँ देखतेहैं । अन्तर-
आत्माकूँ नहीं ॥ ” टोकाः—यद्यपि इससृष्टिविषे
सर्वप्राणी वहिमुखहीं वर्ततेहैं । काहेतें जातें तिनोँकी
इन्द्रियनकी रचना स्वयंभूनै तिसप्रकारकीहीं करीहै । तातें
इन्द्रियनकी तृप्ति करनेविषेहीं सर्वजीवोंकी प्रवृत्ति होवै-
हे श्रीं धाहींतै मनुष्यनसँविना अन्यप्राणी तौ ता प्रवाहके
शोकनैविषे सर्वथा वहिमुखप्रवृत्ति प्रवृत्तिप्रवाहके बलसँ हत
भये असमर्थ हैं । वे अन्तरआत्माकूँ देखी शक्ते नहीं ।
वहिये अपने आपकूँ अपरोक्ष निश्चय करी शक्ते नहीं ।
यह स्पष्टहीं हैं ॥ काहेतें तिन शरीरोँविषे अन्तमुखतारूप
विरोधाप्रवाह करनेवास्ते समर्थबुद्धिरूप साधन हैं नहीं ।
तथापि केवलमनुष्यशरीरविषेहा यह सर्वोत्तमसाधन
वो स्वयंभूपरमात्मानै रखाहै । यातें स्वस्वरूप ज्ञानके
अधिकारी मनुष्योँविषे केईक कदाचित् गुरुकृपासँ

यदिमुखप्रवृत्तिप्रवृत्ति इसके विरोधी अन्तर्मुखप्रवृत्ति के माधन-
 विचारादिकक संपादन करें श्री अन्तर्यामाक प्रस-
 स्वरूप अपनायापकरिके निश्चय करें ॥ वे वै मुक्तमनुष्य।
 ज पूर्व स्वयंभूचित इन्द्रियनसे प्रथम अज्ञानदश विवे-
 कवल रूपरसआदिकक हा दखतवे वे गुरुकृपास ज्ञान-
 भवे पांछ जोवमोचदशानिद दोषीधर्मरूप विप्रित-
 भ्रातिके दृष्टांतका न्याई । सबरूपरसआदिकक दखने-
 हुये श्री अन्तर्मुखप्रवृत्ति के बन्नवे सर्वरूपरसआदिक
 निष्ठाही है तेम भ्रातिक बाधकके तिस भ्रातिके
 अधिष्ठान प्रहार-रूप आत्माक अपरोक्ष निश्चय करें ॥

पटचक्रयुक्त आकृति — पूछेदेष्टप्रमाणपर मध्य
 विषे पटचक्रमकरि युक्त जो आकृति है । तिसका उप-
 पाग अब दिखावैं — मध्यक दक्षिणरसविषे मध्यमुख
 धरिके । बायसे दक्षिणकी तरफ तरासे लघुचक्राकर
 केरनकरि पटचक्र है वे दक्षिणकी तरफ फिरते दृष्ट
 पड़ैग श्री इसी आकृतिक मध्यविषे दत्तयुक्तचक्र है
 सो पटचक्रनसे विपरीत कदिय बायकी तरफ फिरता
 . अन्तर्मुख आचमा ॥ यह श्री श्रीविषय विप्रितदृष्टान्त है

१ रंगितपट औ स्याहीका दृष्टान्तः—इस ग्रन्थके पृष्ठके मुख औ पृष्ठभागविषे जितनी आकृति दृष्ट आ-
 चरतैं । तिन सर्वविषे रंगितअक्षररेपाआदिक देख-
 नेमें आवतेहैं वे भ्रांतिकरिहीं भासते हैं । कारण कि:-
 स्याहीरूप उपाधिसै रंगितपटविषे रंगितअक्षरआदि-
 ककी कल्पना होवैहै ॥ स्याहीरूप उपाधिके बाध किये
 “ वास्तविक कोइ अक्षररेपादि है नहीं परंतु सर्व
 रंगितपटहीं है ” ॥ तैसै सिद्धांतमें । परमात्मनत्वविषे
 यह जो जगत् भासताहै सो केवलभ्रांतिकरिहीं भास-
 ताहै । कारण कि:-मायारूप अज्ञानउपाधिसै परम-
 त्वविषे जगत्की कल्पना होवैहै । तासै तिस मायारूप
 अज्ञानउपाधिकूं गुरुमुखद्वारा बाध करिके “ वास्तविक
 जगत् कछुही है नहीं किंतु सर्व आत्माहीं हैं ” ऐसा
 निश्चयरूप मोक्षका साधन जो तत्त्वज्ञान सो उक्त-
 चित्रितदृष्टान्तनके दर्शनस्मरणकरि मुमुक्षु नकूं होइ ॥

शरीफ खालेअहंमद ॥

ॐ

मङ्गलाचरणम्

ब्रह्मनिष्ठपांडितश्रीपातांबरजीकृतम् ॥



॥ नारायणवृत्तम् ॥

फलं कलक कडजल तमो निवारि सडजल
गगानिचयलागल सुगानिशीलमुज्ज्वलम् ॥
सदा सुखादिफल त्रितापपापशामक ।
नमामि ब्रह्मधामक सदापुरामनामकम् ॥ १ ॥
समानदानदायक भवाववाक्यसायक ।
सुशुद्ध धीविधायक मुनीन्द्रमौलिनायकम् ॥
स्वसङ्गानगायक व्यक्त त्रिलोक्यरामक ।
नमामि ब्रह्मधामक सदापुरामनामकम् ॥ २ ॥
शमत्तमादिलक्षणं प्रनिक्षण्य राशिक्षणं ।
मुमत्तुरन्मे क्षम क्षमपु वै निक्षणम् ॥

सुलदय लदय संशयं हरं गुरुं हि मामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ३ ॥
 कलेशंलेशवेशशून्यदेशके प्रवेशकं ।
 गताविशेषशेषकं ह्यशेषवेपदेशकम् ॥
 परेशकं भवेशकं समस्तभूपभामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ४ ॥
 सकालकालिजालभातं भेदिभानभङ्गकं ।
 प्रभिन्नखिन्ननुन्नभाविजन्ममत्तमल्लकम् ॥
 सभेदखेदछेदवेदवाक्यग्रूथयामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ५ ॥
 भवाष्टकष्टपाशदासभावभासनाशकं ।
 सुशुद्धसत्त्वबुद्धतत्त्वब्रह्मतत्त्वभासकम् ॥
 स्वलोकशोकशोषकं वितोषदोषवामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ६ ॥
 संबधुजन्मसिंधुपारकारिकर्णधारक ।
 सलोभशोभकोपगोपरूपमारमारकम् ॥

गयालकालवारक समाममनेकामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामक सयापुरामनामकम् ॥ ७ ॥
 स्वस्तदपदचयचुपं स्वरूपसौख्यसंजुपं ।
 एतार्थयेतनायुष गतार्थगाभितस्युगम् ।
 विभोग्यज्ञानदुर्विष मुपं गुणातिशामक ।
 नमामि ब्रह्मधामक सयापुरामनामकम् ॥ ८ ॥
 भवाटुयीविहारकारि जीवगांधपारदं ।
 सुमुक्तिमुक्तिहारमारद सुदुद्रिशारम् ॥
 सवीतपादकावरो प्रवीति त स्वरामक ।
 नमामि ब्रह्मधामक सयापुरामनामकम् ॥ ९ ॥

श्रीमन्महत्तमूर्तिपूर्तिमुयशस्यानद्यायुं व्रसन् ।
 सौभाग्यं सारथ्यति प्रविहन्प्रोद्भूतनावययम् ॥
 ससारस्तलेप्रमप्रमनसामृद्धारं प्रागत ।
 ॥ यस्त्वेतत्सुचित् । रूपसुगुरु राम भजेऽह मुदा ११ ॥

(आवश्यकसंजुपागत)

॥ श्रीसद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथ ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतांबर-
जीकां जीवनचरित्र ॥

॥ उपोद्धात ॥

॥ श्लोकः ॥

पीताम्बराहविदुषश्चरितं विचित्रम्
यद्वै वरिष्ठनरसद्गुणरत्नयुक्तम् ॥
ज्ञानादिसद्गुणगणैर्गृथितं स्वकीय-
ज्ञानाब्जमुत्तुमतिशुद्धकरं च वक्ष्ये ॥१॥

टीकाः—

पीतांबर है नाम जिनका ऐसै जे पंडितजी

५०॥ पण्डितधोपाभावरनीका जीवनचरित्र॥ [नि ग

तिनका चरित्र कहिये जीवनचरित्र । अर्थ यह
जो — नामसे आरम्भकरिये अद्यपर्यंत जीवित
अवस्थाविवेके तिनोका आचरण । ताहू मैं कहूँगा ।

१ सो चरित्र कैसा है ? विविध है कहिये अद्
भुत (आश्चर्यरूप) है ॥

२ पर कैसा है ? जो प्रसिद्ध अत्यन्तश्रेष्ठ पुरुषों
के सद्गुणरूप रत्नोंकरि युक्त है ॥

३ फेर कैसा है ? ज्ञानादिसद्गुणोंके गणों
(समूहा करि गुंथित है ॥

अर्थ यह जो — जिस चरित्रविवेके पण्डितजीके
आ तिनसें मध्यमाले सपुरुषनके नामोंसे
स्मारित ज्ञान भक्ति वेदांग्य उपरतिआदिगुणोंका
घणन किया है ॥

४ फेर कैसा है ? जो चरित्र अपने ज्ञानमें
स्वयत्तर्गत पुण्योपादान औ स्वसत्तातीय

वंद्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ४१

गुणोत्पादक महात्माओंके गुणोंके विज्ञापन-
द्वारा याके विचारनैवाले मुमुक्षुनकी बुद्धिकी
शुद्धिका करनैवाला है ॥

इस श्लोकविषै आरंभमें ।

१ “पीतांबर” शब्दकरिके ब्रह्मनिष्ठसद्गुरु श्री-
पीतांबरजीका औ ।

२ पीत है अंबर नाम वस्त्र जिसका । ऐसै
विष्णुरूप सगुणब्रह्मका । औ

३ पीत कहिये स्वसत्तासै कवलित कियाहै ।
अंबर कहिये आकाशादिप्रपंचरूप गर्भसहित
अव्याकृत (माया) रूप आकाश जिसनै

ऐसे सर्वाधिष्ठान निगुणपरब्रह्मका स्मरणरूप

तीनमंगलोंके आचरणपूर्वक इस जीवनचरित्ररूप
ग्रंथके आरंभकी प्रतिष्ठा करी ॥१॥

५- ॥पंडितश्रीपोनावरजीका जीवनचरित्र॥[विचार-

अब द्वितीयश्लोकविषय इस वर्णन करनेयोग्य
महात्म्यके विशेषणभूत "पंडित" शब्दके अर्थक
हेतुमद्दिन बनेह —

॥ श्लोक ॥

धंशाघटंकनिगमागमशालियुद्धि
विज्ञानशालिमनियुक्तनया हि लोके ॥
यः पंडितनात्मकविशेषणयुक्तनाम्ना
पीतांपरेनि प्रथितः पुरुषुययपुञ्जः ॥३॥

टीका:—

- १ स्वकुलके "पंडित" जैसे अघटंककरि । अरु
- २ धंशशास्त्रकी बुद्धिरूप ज्ञानकरि । अरु
- ३ ब्रह्मात्मैक्यनिष्ठारूप विज्ञानकरि

विशिष्टमनियुक्त होनेकरि जो लोकविपै "पंडित"
रूप विशेषणयुक्त ' नामभे पीतामर' ऐसे प्रसिद्ध
पुरुषुययके पञ्जरूप है ॥

चंद्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ४३

इहां “पंडित” पदके उक्तत्रिविधअर्थनके मध्य प्रथम अरु द्वितीय अर्थ गौण हैं औ तृतीय अर्थ मुख्य है । काहेतैं

“यस्य सर्वे समारंभाः कामसंकल्पवर्जिताः ॥
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पंडितं बुधाः” ॥१॥

अस्यार्थः— जिसके लौकिकवैदिकसमारंभ-
कामना अरु संकल्पसैं वर्जित हैं । याहीतैं
ज्ञानरूप अग्निकरि दग्ध भयेहैं संचित अरु
क्रियशरणरूप कर्म जिसके । ऐसा जो पुरुष है
ताकूं बुधजन “पंडित” कहतेहैं ॥ इस गीता-
स्मृतितैं ज्ञाननिष्ठपुरुषचिपैहीं “पंडित” पदकी
वाच्यताके निश्चयतैं ॥२॥

॥ कुलपरपरा ॥

कच्छुदेशजिनै अज्ञातनामा नगर है । तामें राजपूत्र मन्नाज्जेतिर्षोपद्वित " नरेन्द्र " भयेथे जिसकी विद्वत्ताके माहात्म्यसे अद्यापि ताका सांग वश पडित" इस अथटक करि युक्त भया- है । तिनक क्यारिपुत्र ये । तिनमेंसै

१ एउ भुजनगरमें रहिके श्रीमहाराजाओंका दानाभ्यस्त भया ॥

२ छितीःपुत्र नारायणसंगेऽरतीर्थका पुरोहित भया ॥

३ सुतायपुत्र अज्ञातनगरमेंही ज्योतिषीपद्वित प्रहृष्ट पाया । श्री

४ ताका चतुर्थ अवरजपुत्र चागला भया । सो आसधीया नामक ग्राममें ग्रामाधीशक अनिआवरसे निधाम करताभया ॥

चंद्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ४५

एक समयमें गढसीसाग्रामनिवासी सारस्वत गंगाधरशर्मा था । सो कोडायग्राममें पाठशाला पढावताहुया रात्रिकूं अश्वारूढ होयके चार-कोशपर आसंधियाग्राममें पंडितजीके पास ज्योति-पशास्त्रके पढनै निमित्त प्रतिदिन जाता था । सो गुरुवरणोंकूं गोदमें लेके मुखसैं पढता था । एक दिन पंडितजीकूं निद्राआगई औ गंगाधरजी गुरुआज्ञाविना चरणोंकूं न छोडिके बैठा रहा ॥ सवेरमें सो देखिके ताकूं वर दिया कि:-“तेरेकूं सरस्वती मुहूर्तप्रश्न करूंमें कहैगी” ऐसैं प्रसादित-सरस्वतीवाले वे चागला नामक पंडित थे ॥ तिनके पुत्र दामोदरजी परमज्योतिपी भये । तिनके १ लीलाधर २ प्रेमजी औ ३ गोवधन ये तीन पुत्र थे । तिनमें लीलाधरजी परमज्योतिपीऔभगवद्भूत थे । वे आसंधियाग्रामसैं कदाचित् मज्जलग्राममें पर्यटन करने जाते थे । तहां ग्रामाधीशोंकों मुहूर्त-

६ ॥ पंडित श्रीपोतारजीका जीवनचरित्र । [विचार-

प्रभोंके प्रसंगत घड़ी भविष्यत्त्वमन्त्रि दिखाई
थी । निम्न करिके तीनोनें मत्कारपूर्वक गृह अरु
जमीन देके निम्न मजलसग्राममें स्थापित किये ।
ये बाधेन्यमें तोर्ययात्रा करनेकुं गये । सो पीछे
लोटे नहीं ॥

लालाधरजीके पुत्र १ गोपालजी तथा
२ अमरबिहारी थे । निम्न गोपालजीके पुत्र
पंडित १ लडागम २ पुरुषोत्तमजी तथा ३ पार-
पया । ये तीन थे । निम्न पुरुषोत्तमजी जितेंद्रिय
निष्कपट जगन्ममयुक्त अरु मुहूर्त प्रभर्म वाक्-
मिडिमानर मुख्य थे ॥

॥ जन्मवृत्तान्त ॥

पंडित श्रीपुरुषोत्तमजीके पुत्र पंडित १ मूलराज
तथा २ पानागज न ग ३ लालज । ये तीन भये ॥
निम्न मालाका नाम पारथाई (पारचता) था ।
सा ग ३ःतथासन जनित विवचयना थी ॥

चंद्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ५७

भूलराजके जन्मके अनंतर । सप्तभगिनियां । ८
भईयां । अनंतर पंडितपीतांबरजीका जन्म विक्रम
संवत् १६०३ के ज्येष्ठशुद्ध १० रूपगंगा जयं-
तीके दिन भयाहै ॥ तिनके जन्मदिनमें माता
पिताकूं औ भगिनीयोंकूं औ सुहृदलोकनकूं
“ भगवत्का जन्म भया ” ऐसा उत्साह भया
था ॥ यथाशास्त्र जातकर्म पुण्यदानादि कियागया ॥
वे गर्भवासमें थे तब माताकूं नारायणसर
आदिक तीर्थयात्रा भई थी औ वेदांतश्रवण अह
अनवच्छिन्नसत्संग भयाथा तिस हेतुसँ वे बाल्या
वस्थालैहि वेदांतशास्त्रमें रुचिवाले भये ॥ वृद्ध-
कहते हैं किः—पट्टमासके गर्भके हुये जा माता
कूं सनशास्त्रका श्रवण होतारहे तां पुत्र बी
शास्त्रसंस्कारवान् होता है ॥ यह वार्ता प्रह्लाद-
अष्टावक्रादिव में प्रसिद्ध है ॥

॥ कौमार औ पौगण्डसँ लेके किशोरवयका वृत्तांत ॥

पंडित पीतांबर जी के जन्म अनंतर तिनके पिता की दिनदिन भाग्यशुद्धि होती गई ॥ ऐसे तिनके लालनपालन पोषण करने लगे तिनविषे माता पिता का प्रीति बढ़ती गई ॥ पाचवयस के अनंतर लघुवयसविषे तिनके पिता सुभाषित प्रकीर्ण श्लोकानि मुखपाठ पढ़ाते थे सो धारण करने रहे । तदनंतर पिता द्वारा ही देवनागरी लिपिका ज्ञान भया । तदनंतर मदिगद्विषय जानेआते सन्यासी माधु प्राप्तगारे पान्थी स्तोत्रपाठादिकी शिक्षा लन भय आ तिनार्ये नीर्यादिकको वार्ता श्री प्राचीन इतिहास प्रेमते सुनते रहे ॥ अनंतर अष्टवयसकी वयस होकर विधिपूर्वक उपवीत भया ॥ ॥

चन्द्रोदय]॥पण्डितश्रीपोतांवरजीका जीवनचरित्र ४६

फेर श्रीत्रियब्रह्मनिष्ठसद्गुरु श्रीवापु महाराज-
ब्रह्मचारी जे दशवर्षसँ रामगुरुकी आज्ञाकरि
सत्सङ्गीजनोंकी भक्तिपूर्वक प्रार्थनासँ मज्जलग्राम
में रहतेथे । तिनोंकेपास अक्षरवाचनकी परि-
पक्वता अरु संध्यावंत उपनिषद्पाठ गीतापाठ अरु
रुद्राध्यायादिवेदके प्रकरणोंका पठन दोवर्षतक
करतेभये ॥ तिनके साथि अन्य वी सहाध्यायी
थे । परंतु इनके सदृश किसीकी धारणशक्ति नहीं
थी । सो देखिके तिनके उपरि गुरुकी पूर्ण कृपा
रहतीथी । याहितैं तिनकी बुद्धिमें ब्रह्मविद्याके
संस्कार डालते रहतेथे । तवहीं “मैं देहेन्द्रियादि-
संघातसँ भिन्न साक्षीरूप हों ” । यह निश्चय
दृढ़ होरहाथा अरु तिन महात्माविपै तिनकी
गुरुनिष्ठा वी दृढतर होरहीथी । तब कौपोन-
धारण गुरुसमीपवास गुरुसुश्रूषा इत्यादि ब्रह्म-
चारीके धर्म संपूर्ण पालनकरिके रहतेथे ॥

५८॥ पण्डित श्रीपीताम्बरजीका जीवनचरित्र॥ [विवा

आधुनिकरूढ़िमें निनका उद्वाह १० वर्षके अनंतर
भयाथा । तदनंतर श्रीसद्गुरुवा बटपत्तनमें
निगमन भया ॥ निनके वियोगके समयमें प्रेम
पूर्णक गद्गदकठान्निप्रेमकं चिह्न यी होतेरहे श्री
आगुरुने साथिही अध्ययनके निमित्त जानेका
बहुत आग्रह भयाथा । परन्तु मानापितान बहुत
दृढलेने निवारण किया ॥

यहोपगीतके अन्तर सोमप्रदोष एकादशी
आदि । शास्त्रात्तग्रन अनवच्छिन्न करतेरहे श्री
ग्रन्तक दिनमें धान्यदेवका पूजन श्री प्रतिदिन
स्वपिताक पचायतनपूजाका स्वीकार आपकी
कियाथा ॥ तिस तिस स्तोत्रादिकके पठनरूप
भजनमें काल व्यतीत करतेथे ॥ प्रासादिक
लघुस्तोत्रका पाठ प्रतिदिन नियमस करतेथे
अ' महागार्ज्जनीके निर्गमन यये पीछे श्रीरामगुरु-

चन्द्रोदय]॥परिहृतश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र५१
की चरणपादुका मज्जलग्राममें महाराजकेहीं
स्थानमें स्थापित थी उसकी पूजाअर्चादि वहीं
करतेरहे ॥ तिस वयमें स्वमित्रोंके पास“चलोहम
स्वगृह छोड़िके तीर्थयात्रादिक करें वा विद्याध्ययन
करें वा सत्समागम करें” । ऐसी शुभ वासना
तिनोंके चित्तमें उद्व होती रही परंतु वे-
मित्र सलाह देते नहीं थे ॥ महाराजके गमना-
नंतर तिनोंकेहीं स्थानमें कोई देशांतरवासी राम-
चरण नामक वेदांतसंस्कारयुक्त विरक्तसाधु
रहतेथे । तिनके साथि बहुत परिचय रखतेहीं
रहे ॥ पीछे सो साधुरामगुरुकी पादुकाका पूजन
वी करतेथे औ प्रतिदिन ब्राह्ममुहूर्तमें स्नानादिक
क्रिया तथा संपूर्णगीतापाठ औ अनुक्षण राम-
नामका भजन करतेथे औ रामयण भागवत
वेदांतके प्रकरणग्रन्थोंकी कथा करतेथे ॥

५० ॥ पण्डित श्रीपीताम्बरजीका जीवनचरित्र [विचार

पण्डितजीनें कितनेककाल गढ़सीमामामके^१
स्वस्वसापत्ति देवचन्द्र नामक ज्योतिर्विद्के पास
मुहूर्त ज्यातिष आदिकका कलुष अभ्यास किया
था । तिस प्रसंगमें तदासें सप्तिरष्ट एकप्रति
ष्ठित शिवेश्वर नामक महादेवका चित्रघनविधै
प्राचीन धाम है तदा पूजनक गयेथे औ धावण
मासमें बहुतदेशभरके विद्वान्प्रासणपूजननिमित्त
आतहें तिन्होंल अनेकशास्त्र प्रसंग औ धार्ता /
लाए कियाथा ॥

तदनन्तर भजलमाममें एक व्याकरणआदिक
विधाविधै कुशल लब्धिविजय नामक यतिवर थे
तिनके पास पिताजी आज्ञासें व्याकरणभ्यास
करतेरहे ॥ कदाचित तदा देशातरपर्यटनशील
परमधिरक्त क्षमा दया धैर्य मौन तिनिजा आदिक

चन्द्रोदय] पण्डित श्रीतीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥ ५३ ॥
 अनेकसद्गुणरत्नाकर पद्मविजयजी नामक यति-
 चरिष्ठ आयेथे। तिनके पास व्याकरणाभ्यासनिमित्त
 जातेआते रहे ॥ इन्नोंकी सुशीलतादिक शुभगुण
 देखिके तिनोंकी वी परमप्रीति भयोथी ॥ परस्पर
 चित्त बहुत मिलता रहा ॥ फेर कितनेक कालपर्यंत
 वह पिताकी आज्ञासँ तिनके साथि विचरतेरहे
 औ व्याकरणाभ्यास करतेरहे ॥ अंतमें कितनैक
 काल भुजनगरमें तिनके साथि रहतेथे ॥ जितना
 कछु प्रतिदिन पाठ लेतेथे तितना कंठहुं करलेते-
 थे ॥ बहुतसा व्याकरणाभ्यास तहां पूर्ण भया ॥
 फेर तिस महात्माकी देशांतरविषै तीर्थयात्राके
 निमित्त जिगमिषा भई । तिनके साथिहीं पिताकी
 आज्ञासँ पण्डितजी निर्गमन करतेभये । परन्तु
 माताके अतिस्नेहसँ दूतद्वारा मध्यसँ बुलायेगये ॥

५४ ॥ पण्डितश्रीपीतांबरजीकी जीवनचरित्र विचार

॥ मध्यययौवृत्तांतः ॥

फेर साधु श्री रामचरणदासजीके साथि रामा-
यणादिग्रन्थनका विचार करतेरहे ॥ कदाचिन्
काकतालीयन्यायकरि कोइक ब्रह्मनिष्ठपरमहंस
स्वगृहम आयके रहेंथे तिनोँनै येदाँनके संस्कारका
उज्जीवन किया । फेर भिनाजीके साथिनौकाद्वारा
श्रीसुर्यनगरविनै गमन किया ॥ नहा नालिक-
नगरनिवासी नमारांपरत श्रीनारायणशास्त्रीके
विद्यार्थी श्रीसूर्यरामशास्त्रीने पास काव्यकोश
व्याकरण भागवतादि शास्त्रनका अध्ययनकरिके
मरुतवालीविषय व्युत्पन्न मतिवाले मय ॥ फेर
येदातार्थकी जिज्ञासाकरिकेस्वामीश्रीरामगिरीजीके
पास पञ्चदर्शाका अभ्यास करने रहे ॥

चंद्रोदय]॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥५५

तावत् पूर्णपुरायपुञ्जपरिपाकके वशतैं सद्गुरु श्रीवापुमहाराजजी अकस्मात् मुम्बईमें पधारे।
तिनोंके पास विधिपूर्वक गमनकरिके पञ्चदशी
आदिकग्रन्थनका अध्ययन तथा श्रवण करनेहुये
श्रीगुरुके साथि नासिकक्षेत्रमें जायआयके
नौकाद्वारा श्रीकच्छपदेशविपै आयके स्वकीयश्री-
मज्जलग्राममें पधारे ॥ तहां स्वतन्त्र वेदांतग्रन्थनका
अध्ययन तथा अनेक मुमुक्षुनके साथि अध्ययन
श्री श्रवण करतेरहे ॥ तब श्रीसद्गुरु जहां जहां
सत्सङ्गीजनोंके ग्रामोंमें विचरतेथे । तहां तहां
सहचारी होयके अध्ययन श्री श्रवण करतेरहे ॥
दोवर्षपर्यंत श्रीगुरु कच्छदेशमें विचरिके फेर जब
वटपत्तन (वडोद्वरानगर) के प्रति पधारे तब
श्रीभुजनगरपर्यन्त बहुतसत्सङ्गीजनसहित श्री
भुरुके साथि आयके फेर तिनोंकी आज्ञाके
अनुसार मज्जलग्राममें आवतेभये ॥

चंद्रोदय] ॥ पंडित श्री पीतांबर जी का जीवनचरित्र ॥ ५७

सत्संगीजनोंकी प्रार्थनासें एकोनविंशति (१६)
मासपर्यंत श्रीमुंघईमें निवास करतेभये ॥ तब
श्रीवृत्तिप्रभाकर तथा श्रीविचारसागर इन दोग्रं-
थनका सम्यक्श्रवण होतारहा श्री अहर्निश तिन
महात्माके पास एकांतवासविष रहिके तत्कृपा-
पूर्वक अनेकवेदांतके पदार्थनका शंकासमाधान-
कि निर्णय करतेरहे श्री तिन महात्माके
खसैं सुनिके अरु देखिके अनेककल्याणकारी
अद्गुणोंका स्वचित्तमें आधान करतेभये ॥ बीचमें
अचकाश देखिके परिंडत श्रीजयरूपजीमहात्मा-
के पास श्रीआत्मपुराणआदिक ग्रंथनका वी
श्रवण करतेरहे ॥ श्री भट्टाचार्य श्रीभिकुशास्त्रीके
विद्यार्थी श्रीभीमाचार्यशर्मनैयायिकके पास
न्यायग्रन्थनका अभ्यास वी करतेरहे श्री तहां
आयके प्राप्त भये निर्मलसाधु श्रीगंगासंगजीके
पास वेदांतके प्रकरण देखतेरहे ॥

३८ ॥ पंडितश्रावणाश्रमाका नीलचरित्रा ॥ विचार

किसी दिन स्वामाश्रमध्यानदजीन पंडितनकी
सभा कम्बोइथी तहा पंडितजीने वेदांतविषयक
पूयपक्ष कियाथा ताका समाधान आशुक्रषि श्री
गहलालोपनामक गोवर्तनशर्जानै कियाथा श्री
अष्टभुजि दक्षिक प्रसन्न होयके कहा कि - हमारे
घहा कहु अध्ययन करनेहु आतेरहो ॥ तब
तिनार पास शररउपनिषद्भाष्यका अध्ययन
करनेरह ॥

वर सम्बन् १६८६ के वर्षमें बर्मंडी मडली
सहित स्वामाश्रमाश्रमजाके माधि श्री-
प्रयागराजक कावपर जायके करेपयाम किया तहा
पंडितजीका आश्रमजीक विद्यार्थी प्रयागवासी
महापराम सनायरूप खड्गधारा महा माधामल्ल
प्रियानवा नरा तिनके विषय उत्तमपरमहंस

चंद्रोदय]॥पंडित श्रीपीचांवरजीका जोवनचरित्र॥५६

श्रीकाशीवाले अमरदासजी । कनखलवाले अमर-
दासजी । बडे आत्मस्वरूहजी । महापंडित ज्योतिः-
स्वरूपजी । तथा मंडलेश्वर आदित्यगिरिजी ।
आदित्यपुरीजी । फणीन्द्रयति । ब्रह्मानंदजी ।
महंतहरिप्रसादजी । सुमेरगिरिजी । वालदेवा-
नंदजीआदिक अनेकमहात्माओंका समागम
भया ॥ तहां किसी प्रसंगसँ महात्मा काशीवाले
अमरदासजीके पास पंडितजीनँ प्रश्न कियाः—

५ ? (१) प्रश्नः—किं विदुषो लक्षणं ?

(२) उत्तरः—रागादिदोषराहित्यम् ॥

(१) प्रश्नः—रागाद्यभावे संति इष्टनिष्ठयोः
प्रवृत्तिनिवृत्त्यनुपपत्तेर्विदुषः प्रारब्धः-
भोगो न स्यात् ?

✓ (२) उत्तरः—अदृढरागादित्वं विदुषो
लक्षणम् ॥

॥ परिहृतभीषीनां परजीवा जीवनचरित्राः [विचार-

३ (१) प्रश्न — अदृढरामादे किं लक्षणम् ?

(२) उत्तर — नैरतय्येण रागाद्यभावत्वं
(विचारनिघर्त्यरामादित्य) अदृढ-
रामादित्य ॥

४ (१) प्रश्न — सुपुत्तौ सर्वप्राणिनां रागा-
द्यभावेन नैरतय्येण रागाद्यभावात्
अज्ञेयपि तज्जलक्षणस्यातिव्याप्ति-
रस्येति ?

(२) उत्तर — यद्यपि सुपुत्तौ अतः करणा-
भावात्त्वेवमस्तु तथापि आप्रदा-
द्यत करणमयधे सति नैरतय्येण
रागाद्यभावत्थमदृढरामादित्य इति न
नानिब्याप्ति ॥

५ (१) प्रश्न — सुपुत्तौ संस्काररूपेणान्तरण-
मदभावेनात करणसम्यक्सत्त्वाद्युक्तल-
क्षणस्याज्ञेयतिव्याप्ति ? ॥

[दीप्य] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ६१

(२) उत्तरः—स्थूलांतःकरणसंबंधे सति इति
स्थूलपदस्य निवेशे कृते नातिव्याप्तिः ॥

३ (१) प्रश्नः—कृष्यादिकर्मणि संलग्नस्याज्ञरया-
पि स्थूलांतःकरणसंबंधे सत्यपि रागा-
द्यभावाद्भुक्तलक्षणस्याज्ञेत्वतिव्याप्तिः ?

(२) उत्तरः—स्त्रीशत्रुप्रभृत्यनुकूलप्रतिकूल-
पदार्थसान्निध्ये स्थूलांतःकरणसंबंधे च
सति नैरंतर्येण रागाद्यभावत्वं अदृढ-
रागादित्वं तदेव विदुषो लक्षणम् ॥ .

७ (१) प्रश्नः—पृष्ठसप्तमभूम्योस्तु सर्वथा रागा-
द्यभावेनादृढरागाद्यभावाद्भुक्तलक्षणस्य
तत्राव्याप्तिः ॥

(२) उत्तरः—दृढरागादिराहित्यं विदुषां
लक्षणं सिद्धमिति वाच्यम् ॥

इसरीतिसै प्रयागमै प्रश्नोत्तरं भयाथा ॥

६० ॥ पंडित श्रीपोतांवरजीका जीवनचरित्र ॥ [विचार

घरंपरोजकी तीर्थयात्राके मिषकरि आगेसँ
निर्गम श्री तहाही प्राप्त भये श्रीगुरुका दर्शन
करिये तिनोकी आज्ञासँ श्रीकाशीपुरीमें पधारे।
तहा गौघाटपर स्थित अर्घ्य परमोपरत स्त्रीदर्श-
नादिरहित एकातयामी समाहित माठतालाप-
रहित किन्तिमसठ्ठनालापी श्रीरामनिरजनोप-
नामक पदवाक्यप्रमाणदा स्वामीश्रीमहादयाश्रम-
जाक पास जातग्राम रहे ॥ तिनोके पासजो कुछ
प्रश्नासर भया सा पंडितजीहृत प्रश्नोत्तरकदन
नामक ग्रन्थमिनिद है ॥

तहा दर्शनस्पर्शत करिके श्रीगवाभाउकरि
आय तर श्रीकाशीराजक मन्त्रीनै मिलनकी इच्छा
प्रज्ञापन करी। अनंतराशन मिलाप न भया।
केर तहाम गाहु नमभुगआदिक मजमदलकी
गात्रा करीक पुन मुखई पधार। तहा पुन श्री-
गुरुका कहुकदिन समागम भया ॥

चन्द्रोदय] ॥पंडितश्रोपीतांवरजीका जीवनचरित्र॥ ६३

फेर तदाज्ञापूर्वक कच्छदेशमें आयके स्वानुज-
लालजीका विवाह किया ॥ पीछे रामावाई
नामक स्वकन्याका जन्म भयाहीथा । तदनंतर
गार्हस्थ्यसुखभोगविषै उदासीन हुये पाशेनद्वि-
वर्षपर्यंत कर्णपुरनामक ग्राममें ग्रामाधीशोंके गृहमें
पूज्य होयके स्थित एकांतभजनशीलताआदिक
अनेकसद्गुणालंकृत देशप्रतिष्ठित महात्मासाधु
श्रीमान्ईश्वरदासजीकूं श्रीवृत्तिप्रभाकररूप भाषा-
ग्रंथ औ श्रीपंचदशीआदिक संस्कृतग्रन्थनका
अध्ययन करतेहुये रहतेथे ॥ वे महात्मा पंडित-
जीविषै देहांतपर्यंत कृतघ्नतानाशक गुरुबुद्धि
धारतेथे ॥ ताके मध्य कोटडी महादेवपुरीविषै
स्थित श्रीमान्अर्जुनश्रेष्ठ नामक महात्माकूं
मिलने गयेथे । तहां तिनोंकी इच्छासँ सार्धद्वि-
मासपर्यंत रहिके सानंदगिरिश्चोनीताभाष्यका
परस्पर विचार करते भये ॥

फेर तहां कच्छदेशमें द्वितीयवार श्रीगुरुका
 आगमन भया । तब तिनोंके साथि विचरतेहुये
 श्रवणाध्ययन करतेरहे । तब तिनोंके माथिहीं
 शमोज्जर (पेठ) श्री द्वारिकाक्षेत्रमें जायके
 स्वदेशमें आये ॥ फेर गुरुप्राज्ञापूर्वक मुंवाई पधारे
 तब उत्तमसस्कारवान् उत्तमाधिकारी रा. रा.
 श्रेष्ठशरीफभाई सालेमहमद तथा परमविद्वान्
 मुसुहन् उत्तमाधिकारी रा. रा. मनःसुखरामो
 मूर्यरामभाई त्रिपाठी इन दोअधिकारिनकुं
 श्रवणाध्ययन करावनेरहे ॥ तब प्रसंगमास तैलंग-
 देशीय पदवाक्यप्रमाणन पाक्षिकमुग्रहण्यमर्षाद्र-
 शर्माशास्त्रीजी तहां विराजेथे तिनोंके पास
 शरीरभाण्डसहित ब्रह्मसूत्रनका शांतिपाठपूर्वक
 श्रवण करतेरहे । तब श्रीगामीस्वरूपानंदजी
 सहाध्यायो ये ॥

चन्द्रोदय]॥पण्डितश्रीपोतांवरजीका जीवनचरित्र ६५

अनंतर शरीफभाईआदिककी प्रार्थनासँ श्री-
पंचदशीकी भाषाटीका तथा श्रीविचारसागरके
मंगलके पंचदोहाकी टीकापूर्वक टिप्पणिका तथा
श्रीसुन्दरविलासके विंशतित्तमें विपर्ययनामक
अंगकी टीकासहित टिप्पणिका तथा श्रीविचार-
चन्द्रोदय । वृत्तिरत्नावलि । सटीक बालबोध ।
संस्कृत श्रुतिपङ्क्ति संग्रह । श्रीवेदस्तुतिकी
टीका । स्वामीश्रीत्रिलोकरामजीकृत मनोहर-
मालाकी टिप्पणिकासहित सर्वात्मभावप्रदीप
आदिकग्रंथनकूँ रचतेभये ॥ उक्त सर्व ग्रंथ छपेहैं
श्री श्रीवेदांतकोष । बोधरत्नाकर । प्रमादमुग्दरा
प्रभोत्तरकदंब । पट्टदर्शनसारवलि । मोहजि-
त्कथा । सदाचारदर्पण । ज्ञानागस्ति । भूमिभाग्यो-
दय रूपकादर्श श्री संशयसुदर्शनआदिकग्रन्थ
किंचित् अपूर्ण होनैतैं छपे नहीं हैं । पूर्ण होयके
छपेंगे ।

६६ ॥ पंडित श्रीपीताम्बरजी का जीवनचरित्र ॥ [विचार

संवत् १६३० की शालमें आप बड़ोदामें
पधारेथे । सार्धमासपर्यंत रहे ॥ तद्दार्से मुई
पधारे पीछे श्रीगुरु परमसमरसभावकू प्राप्त
भये ॥ जब पंडितजी महोत्सवपर पधारेथे श्री
संवत् १६३३ की शालमें माघनगरके महाराजा
तर्कसिंहजी तथा महामंत्री गौरीशंकर उदय
शंकर तथा उपमंत्री श्यामलदासभाई परमानंद
दास मुईधियें मिले श्री तिसीवर्यम स्वयं
आता मूलराज अरु धर्मपत्नीका देहात भया
था जूनागढ़के महामंत्री प्रह्लादसिंह श्रीगोकुलजी
आला मुईगन च न यागमें मिले । तदा प्रथम
अज्ञात हुये पीछे जिस्का स्वामीके चान्यसैं चिदित
भये । यातें रीतरागताकरि उपमित भये ॥

द्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ६७

त्रिपाठी रा. रा. मनःसुखराम सूर्यराम
शर्माकी श्रीकच्छमहाराजाओंकी आज्ञापूर्वक
रात्रोवहादुर दिवानवहादुर महामन्त्री श्री-
मणिभाई यशभाईद्वारा पूर्णसहायताप्रदानपूर्वक
प्रार्थनासँ तथा श्रीभावनगरके महाराज तथा
श्रीबढवाणके महाराज तथा श्रेष्ठ हरमुखराय
खेतसीदास तथा श्रेष्ठ प्रयागजी मूलजीआदिक
सद्गृहस्थनकी सहायताप्रदानपूर्वक इच्छासँ
ईशा केन कठवल्ली प्रश्न मुंडक मांडूक्य तैत्तिरीय
औ पेटरेय इन अष्टउपनिषद्नका सटीक श्री-
शंकरभाष्यके व्याख्यानसहित व्याख्यानकरिके
छपवाया है ॥

६८ ॥ पंडित श्री पीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥ [विचार-

तदनंतर सन् १८२६ की शालमें भावनगर
जायक तदा राज्यादिकसं यो यमत्कारम् पायके
आप्रयागक पुं भपर द्वितीयवार पवारे ॥ वहाँ
महात्मा स्वामी आत्रिलोकरामजी तथा श्रीमद
मरदासजी तथा खेरपुरके महत जन्मते वाकिस
द्विषान् साधुश्रीगुरुपतिजी तारु शिष्य सगति
दासजी तथा साधनेलाके महत आहरिमलादजी
तथा आत्रिलोकरामजीक शिष्य पंडितअनता,
नदजी तथा पंडित केशवानन्दजी तथा पंडित
भोलारामजी तथा पंडितस्वरूपदासजी तथा
परमविरक्त महलेश्वर साधुश्रीब्रह्मानन्दजी तथा
साधुश्रीदयालदासजी तथा श्रीमपारामजी
आदिक अष्टधूनमडल इत्यादि अनेक महात्माओं
का दर्शनसमायल किया ॥

चंद्रोदय]॥ पंडित श्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्राः ६६

फेर श्रीकाशीजीमें आये ॥ तहां स्वामी त्रिलोकरामजीकी मंडलीके साथिही पंचकोशीकी यात्रा करी औ ब्रह्मनिष्ठ महात्मा पंडित अमरदासजी तथा श्रीद्वितीयतुलसीदासजीके शिष्य चरणानदीपग त्रिराजित साधुश्रीलालदास जीका दर्शन भाषण किया । तथा अवधूत दंडी-स्वामी श्रीभास्करानंदजीका तथा दंडीस्वामी नरपंडित श्रीविशुद्धानन्दजीका तथा स्वामी श्री-नारकाश्रमजीका तथा द्रुवेश्वरमठाधीश स्वामी धीरामगिरिजीका तथा तिनके शिष्य योगिराज श्रीवृद्धानन्दजीका तथा त्रिशूतयतिके मठमें स्थित स्वामी श्रीवीरगिरिजीका औ भरूचवासी स्वामी श्रीअद्वैतानन्दजी आदिकका दर्शन संभाषण किया ॥ पीछे स्वामी श्रीत्रिलोकरामजी की आज्ञासैं श्रीअयोध्याके प्रति पधारे ।

७७ ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र। [विचार

सर्वदा सरगुन्या रामाबाई तथा भ्रातृपुत्री लीला^१
बाई साथि रही ॥ तहां मंगवन्मंदिरोंके दर्शन-
पूर्वक सिद्ध धीरघुनायदासजी तथा सिद्ध
धीमाधवदासजीके दर्शन तथा सरयूस्नान
करिके धीनेमिषारण्यविषै पर्यटन करिके ब्रज-
मंडलमें विचरिके धीपुष्करराज तथा सिद्धपुर
के सन्निध सरस्वतीका स्नानादि कराने धी-
डाकोरनाथका तथा बडोदानगरगत क्षानमठमें
धीरामगुदकी तथा धीमदगुडवापुसरस्वतीकी।
समाधिके तथा चरणपादुकाके दर्शन पूर्वक मंत्रीवर
धीमणिभाईका यशभाई मिलाप करिके फेर
मुम्बरम पधारे ॥ तहांसे धीकच्छदेशविषै आये।
तहां मणिभाई मंत्रीसहित धीकच्छमहाराष्ट्रोंका
मिलाप भया ॥

फेर सन् १६४० की शालर्म महाराजाधिरा-
जश्री ५ भतृदधुआधीशरुष्णप्रतापसाहिवहादुर-

चन्द्रोदय] परिडत श्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥ ७१

शर्माका प्रेमपत्र आया सो बांचिके बडा हर्ष भया ॥
फेर श्रीहथुवासैं काश्मीरी पंडित जनार्दनजीकूं
दर्शनके निमित्त मज्जलग्राममें भेजा था ।
अनंतर बहुत मुमुक्षुजनोंकी जिज्ञासापूर्वक
प्रार्थनासैं यजुर्वेदीय श्रीबृहदारण्यकोपनिषद्के
हिन्दीभाषामैं व्याख्यानके लिखानेका स्वपुत्रके
हस्तसैं ही प्रारम्भ करिके पाँच वर्षोंमें ताकी
समाप्ति करी ॥ बीचमें श्रीकच्छमहाराजोंकी
आज्ञासैं श्रीसिंहशीशागढग्राममें मकान बनायके
निवास किया । अर्वांतरकालमें ही श्रीहथुआ-
महाराजकी तीव्र जिज्ञासासैं आकर्षित हुए
स्वानुज लालजीसहित श्रीकाशीपुरीके प्रति
जिगमिषा करिके मुम्बईमें आये ॥ तहां तीन
दिनके अनंतर महाराजके भेजे परिडत जना-
ईनजी सामने लेनेकूं आये ॥ श्रीपुरीमें
पहुंचे तब श्रीहथुआमहाराज सन्मुख पधारे औ

७२ ॥ पंडित श्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥ [विचार-

दंडवन प्रणाम किया श्री दुर्गाघाटपर महाराजा
भीडुमगचोके समीचेमं श्रेष्ठमत्कारपूर्वक निवास
करवाया था। तदा प्रतिदिवस आप मुग्धचर्चा-
ध्वजार्थ पधारते थे। फेर पंडितजीके साथिही
स्यसद्गुरु दंडोम्यामी श्रीमाघयाधमजीकी
सन्निधिमें चैनन्यमठविदे राजा पधारते थे।
तदा श्री परमानंदकाजी प्रश्नोत्तररूप पचनवि-
लास होता रहा। तिस प्रसंगमें अनेक महा-
ग्माश्राव दर्शनार्थ महाराजके सहचारी दा-
त्मगौर महिन प्रतिदिन पंडितजी पधारते थे ॥
फेर महाराजकी आज्ञामें मुम्बईपर्यंत पंडित
जनार्दनजीरूप सार्थवाहकमहिन पधारते। मध्यमें
नार दस्तर्भ निरदिन अन्नक् सादातु हरि
भागत ८ वर्षी समन। शिष्या हरिवार्द दासणी
ए दशन दिनअर्थ मभगा घामम ७ दिन घमिक
मृषइहाग १४ व्याकन्यइगमं म्यानुजमहिन
आयव उन व्यापान समान किया ॥

चंद्रोदय] ॥ पंडित श्री पीतांबर जी का जीवनचरित्र ॥ ७३

कछुक काल स्वदेशगत सत्संगी जनों के ग्रामों में
विचरते रहे। फेर संवत् १६४७ की शाल में
श्री हरिद्वार के कुंभपर गमन अर्थ साधु श्री ईश्वर-
दास जी के शिष्य प्रेमदास सहित श्री कराची नगर में
पधारे ॥ तहां पंडित स्याणुराम के तनुज पंडित
श्री जयकृष्णजी आदिक अनेक सत्संगी जन वाहनों से
सन्मुख आय के लगये ॥ तहां दशदिन कथा-थवण
भया तब हैदराबाद के केइक सत्संगी लेने कुं
आये तिस करिके तहां पधारे। तब पंडित जय-
कृष्णजी सार्थिही रहे ॥ फेर कोटडी में आय के
ताकी सन्निधि में स्थित गोधुमल के ठंडे में पंडित
स्याणुराम जी के गृह में एक रात्रि रहे ॥ सवेर में सिध
दफतरदार साहेब का अवलकार कुन मिस्टर तनुमल
चोइथराम, विष्णुराम, केवलराम औ छत्तूमल ये
गृहस्थ अश्वशकटिकासै लेने कुं आये तब नदा-
नद होय के शहर हैदराबाद की शोभा देखते
हुए नगर से बाहिर छत्तूमल के शिवालय में चार

७४। पण्डितश्रीपीताम्बरजीको चीजनचारित्र । [विचार]

दियस निराम किया। तदा अहर्निश ईश्वरभजन
परायण मौनी दुग्धाधारो एक अपूर्व ब्रह्मचारीका
दर्शन भया औ नगरम एक परमोपलब्ध ज्ञानादि
गुणस्वपन्न फलाच्चन्दनामक भक्तका दर्शन भया
औ फेरु उत्तम भजनयानोंके स्थान देखे ।
स्वनिवासस्थानमें समुत्सवीचन प्रतिदिन श्रवण
अर्च आन थ अह दर्शननिमित्त नरनारीका प्रवाद
प्रबलित भया था। यहास चलनैके दिनमें पण्डित
मुक्तिरामनामक जनने स्वस्थानमें आग्रहपूर्वक
बुल कर पूज स कर किया ॥ यहासे लेखनियान
गन्ध हा रेलनर छोड़नक आवे । फेर तहासे
जिबन सहस्र आयक एक रात्रि रहे ॥ सायरेला
नामक मतनर स्थानका दर्शन किया औ राडो
पामम जायक उदासीनपरमहंस पण्डित कशवा
नगरा जा अमूलकद मजो महाभाके शिष्य थे
उनक मिल औ परमार्थी वसणुभक्तू भी मिले ।

घंटोदय]॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥७५

फेर वहांसँ मुलतान तथा लाहोरके मार्गसँ
अमृतसरमें आये । तहां शेठ ताराचंद चेलारामकी
दुकानपर एक रात्रिरहे॥वहां महाराजा श्रीकृष्ण-
प्रतापसाहिबहादुर शर्माका प्रेमपत्रक आयाथा सो
वांचिकेप्रसन्न भये । प्रातःकालमें श्रीगुरुनानकजी
के दरवारका सरोवरके मध्य दर्शन भया ॥ फेर
वहांसँ श्रीहरिद्वारपुरीमें पधारे । तहां नीलधारा-
पर महात्मा श्रीत्रिलोकीरामजीकी मंडलीका
निवास था । वहां वसति करी॥ब्रह्मकुण्डकास्नान
महजनोंका दर्शन संभापण भया ॥ फेर वहांसँ
उक्त मंडलीके साथि ही हृषीकेश पधारे ॥ वहां
परोपकारक कमलीवाले महात्मा श्रीविशुद्धानंदजी
मिले औ गंगातीरनिवासी तपस्वीजी श्रीगुरुमुख
दासजी मयारामजी अवधूतआदिक अनेक उत्तम
संतोंका दर्शन भया॥वहांसँ लौटिके श्रीअयोध्या
पुरीमें आये ॥ वहांसँ रेलमें बैठिके श्रीदधुवा-

७६ ॥ पंडित श्री पोताधरजीक जीवनचरित्र ॥ [विचार

नगरमें जाने अर्थ अलीगजमें आये । तहा अश्व-
शकटिकासहित महाराजका पंडित सामने लेनेवृ
आया था सो ओहधुयानगरमें लेगवा ॥ उसी
दिनमें महाराजजी मुलावान भई ॥ प्रतिदिन महा
राजका समागम होनारहा। बीचमें श्रीसालिग्रामी
नारायण मंडरनामक मंडानदीपर स्वारीआदि
नामप्रसन्निक काम करिआये ओ स्वधापुर
राजिनी दवाका दशन वा किया ॥ केर पहारें
महाराजजी आगामें भयानी गये । तहा थाइ
करिश्च गंगानगरजिनि निगाघाटपर महाराजके स्थान
में पड़ा ॥ उसा दिनमें महाराजाधिराज
आरण्यप्रतापसाहिबहादुर शर्मा या तहा
पड़ारे अन्वयनताया नहा भई ओ तीन दिन
महाराजका समागम होनारहा । केर पहारें ,
धानापुर आवकधुधशकटिकामें महाराजके साथि
ही एक आरागणमें आये । तहा विमान

चक्षोदय]॥ पंडित श्री पीतांबर जीका जीवनचरित्र ॥ ७७

मोचनपर स्थित हथुआधीशके वगीचेमें तीन दिन
निवास भया ॥ गंगास्नान औ महात्माओंका
दर्शन सम्भाषण भया ॥

फेर वहांसें महाराजांकी तरफसें मिलित भेट औ
पोशाक स्वीकार करिके तदाज्ञापूर्वक श्रीप्रयाग
चित्रकूट पुंडरीकपुर औ पुन्यनगरके मार्गसें
श्रीमुम्बईमें आयके शेट श्रीयादवजी जयरामके
स्थानमें चातुर्मास्यपर्यंत बसिके ब्रह्मसत्रकीसामग्री
सम्पादन करिके रेलके रस्ते स्वदेशविषे आयके
संवत् १९४८ के आश्विन शुद्ध १० से आरंभिके
भगवन्महोत्सव नामक ब्रह्मलत्र किया । तहां
केइक अपूर्व संन्यासी साधु ब्राह्मण औ सत्समा-
गमीजनोका अपूर्व समाज एकत्र भया था ॥
संभाषणादि अद्भुत आल्लाह भया था । सो
समाप्त करिके श्रीमुम्बईमें आयके भापाटीका
युक्त श्रीवृहदारण्यक तथा छांदोग्य ये दो उप-
निषद् सार्ध द्विचर्पमें छपवाये ॥

७८ ॥ पण्डितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र विचार

फेर धीप्रयागराजके कु मपर जायके स्वामिधो
त्रिलोकरामजीकी गंगापार स्थित मंडलीमें कल्प-
वास किया ॥ वहा ह्युगधोशके मनुष्य आये थे
तिनके साथ राजाने पत्रसहित सौपरशतक भेजा
था जो स्वामोत्रीके समक्ष निनोंकी आज्ञासे
गंगातीरस्थ पण्डितनके अर्थ यथायोग्य विभक्त
किया गया ॥

फेर उद्दाम धे मंडलोमहित श्रीकाशीपुरीमें
पधारे स्वामीजी दुर्गाघाटपर रहे। पण्डितजी पिशा-
चमोचनपर स्थित महा राजके धर्मोद्येमें २४ दिन रहे।
प्रतिदिन महाराजका समानम होनारहा चारपजे
घाट नियम अश्वशक्तिवर्त्म महाराजके सहचारियों,
करिमहित भिन्न भिन्न स्थानमें महात्माओंके दर्शन क्रू

चन्द्रोदय]॥परिडतश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र७६

जाते थे ॥ स्वामी श्रीमाधवाश्रमजी । स्वामी
श्रीविशुद्धानंदजी । स्वामी श्रीभास्करानन्दजी ।
स्वामी श्री पूर्णानन्दजी । महात्मा श्रीअमरदास-
जी । पंडित श्रीरामदत्तजी । महान्त श्रीपवारिजी ।
साधु श्रीविक्रमदासजी आदिक अनेक उपरति-
शील महात्माओं का दर्शन भाषण भया ॥ महा
राजकी यहशालाका भी इष्टिसहित दर्शन भया ॥
फेर चलनैके पहिले दिन सायंकालमें परिडत
शिवकुमारजी । राखालदासन्यायरत्नभट्टाचार्य ।
कैलासचन्द्रभट्टाचार्य आदिक उत्तमपरिडतनकी
सभा करवाईया । तिन विद्वद्वरोंका दर्शन संभा-
षण भया ॥ परिडतनके विदा हुए पीछे स्वकृत
आशीर्वचनरूप श्लोक महाराजके समक्ष अर्थ-
सहित उच्चारया ॥

८२॥ पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र [त्रिचार-

॥ श्लोकः ॥

श्रीमत्कृष्णप्रनापतुल्यनृपनि-
लोकैऽधुना दुर्लभः
श्रीमद्रामसमांऽस्त्यसौ शुभगुणैः
सद्धर्मसत्संतुष्टः ।
रवाज्ञानैककुरावणस्य कहरं
मुक्ताग्रेकलकासुजितं
शांतिश्राज्जनकात्मजाऽपि संहितां
भूयात्स्वधामैकराट् ॥ १ ॥

सा चतुर्धा अर्थमहिम मुनिके पंडितसमासहित
नृपति परमप्रमथ भय ॥ उत्थान करिके अमि
वदत क्रिया आनन्दमै आलिंगित दोषके मिले
भट श्री योगाङ्ग सप्तर्षिके विशा करी । मात -
पालन प्रशमै प्रयाण करिके पंडितजी श्रीमुन्यर्चन
१११ पीठ श्रीकम्पदशर्म पधारि ॥ फेर सयस्

चंद्रोदय] पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥ ८१

१८५१ के वर्षमें प्रभासाद्रियात्राकी जिगमिषा करिके गृहसँ निर्गत हुए अगनवोट (धूमनौका) सँ बेरावलपधारे। तद्द्वारा ववहादुर जूनागढ़के दीवान-जीसाहेब श्रीहरिदास बिहारीदास जालीवोटमें बिठायके चंदरपर लेगये ॥ वहां शेठ शरीफ साले-महंमदादि सदगृहस्थों का मिलाप भया ॥ तिनकी भावनासँ २५ रोज तक श्रीजूनागढ़सरकारके मकानमें निवास भया ॥ मध्यमें प्रभास औ प्राची-नामक तीर्थकी यात्रा करि आये ॥ फेर धूम्र-शकटिकाद्वारा श्रीजूनागढ़ पधारे । तद्द्वारा श्री-दिवानसाहेबकी आज्ञासँ शकटिकासँ छापेखाने का मैनेजर महादेवभाई सामने आयके लेगया ॥ औ नाथवदिवानसाहेब श्रीपुरुषोत्तमरायके नवीन गृहमें निवास करवाया ॥ तहां एकमास-भर रहे ॥ वहां श्रीनरसिंहमेहेता, दामोदरकुंड, मुचुकुंदगुफा और शहरके सुंदर स्थानोंका

८० पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र [विचार

प्रदर्शन भया और रैयताचल (गिरिनारपर्यंत
की यात्रा भई ॥ एकच भई सभाके मध्य थी
द्विपानसाहेबके शुद्धमें पंडितजीका वेदांतविषयक
सभापण भया॥फेर वहाँसें विदा होयकें घेराघल
आये ॥ तहां घंघटदारसाहेब और व्यापार-
धिकारी शेठ शरोक भाई रेलवर गामने आयके
निघासस्थानमें खेगये ॥

फिर वहाँमें धुन्ननीकाद्वारा श्रीमु'र्यमें आग-
मन भया । तहां महाराज श्रीजयदृष्णजी तथा
साधु श्रीसगतिदामजी और परममुद्गन् श्रीमनः
सुम्बराम सूर्यरामजी आदिक सज्जनोंका समा-
गम भया । और स्वकीय दो पौवनके भाँजी
बंधनके प्रसंगमें चारि यमकी चिकीर्षाके लिए
मर्ममामलों सपाशनरूपिसे स्पष्टेशमें पधारे ॥

चंद्रोदय] पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ८३

संवत् १६५२ के वैशाख कृष्णद्वितीया द्वाद-
शीपर्यंत श्रीगायत्रीपुरश्चरण । श्रीमहारुद्रयज्ञ ।
विष्णुयज्ञ और शतचंडी ये चारि यज्ञ किये ॥
तहां स्वामी श्रीआत्मानंदजी और केइक संत
अरु सत्समागमियोंका वो आगमन भया था ॥
अवंतर संवत् १६५४ सालसैं आरंभकरिके
गढ़सीसासैं सार्दैंककोशपर पूर्वदिशामैं प्राचीन
विल्ववनविपै प्राचीनकालमें आविर्भूत देशप्रति-
ष्ठित स्वयंभू श्रीविल्वेश्वर नामक महादेवका
मंदिर स्वरूप होनेतैं श्रावणमासमें बहुत पूजक
ब्राह्मणोंके समावेशके अयोग्य जानिके और
तहां जन्माष्टमीके दिन होते मेलामैं विष्णुदर्शन
का अलाभ दर्शनार्थीजनोंकूं मार्गका
कष्ट जानिके कच्छदेशमें पर्यटन करिके राज्या-
दिकसैं प्राप्त द्रव्यसैं विस्तीर्ण सुंदर शिवालय
तथा विष्णुमंदिर तथा वहांसैं गढ़सीसा तोड़ी
सड़क करावले भये ॥

८४ ॥ पहिडनधीपोताघरलोका जीवनचरित्र ॥

अशी स वत् १९५६ के वर्षमें आप स्वदेशमें ही जीवन्मुक्ति के विलक्षणआनन्दअर्थ अरुपा प्राप्त युक्त हुए स्थित भये हैं ॥

उक्तप्रकारके सत्कर्मोंके करनेकी इच्छा इनकु सर्वदा रहती है ॥ ये महात्मा राग,द्वेष, मत्सर, ईर्ष्या, भिषमता, निंदा, अस्व्या-आदिक दुर्गुणोंन रहित ह । और अमानित्व, अदभित्व, अहिंसा, क्षमा, मौशीत्य, सौजन्य, अहोद्य, शांति, धैर्य, मोहशोकराहित्य, आस्तिक्य, भक्ति, वैराग्य, ज्ञान अरु उपरति आदिक अनेकसद्गुणोंकरि अलटन है ।

॥ इति ॥



ॐ

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

॥ नवमः आवृत्तिकी अनुक्रमणिका ॥

कलांकः	विषय	आरंभ-पृष्ठांक.
१	उपोद्घातवर्णन ...	१
२	प्रपंचारीपापवाद ...	२०
३	देह तीलका में द्रष्टा हूं ...	२६
४	मैं पंचकोशातीत हूं ...	६६
५	तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं...	११४
६	प्रपंचसिध्यास्त्रवर्णन ...	१३३
७	आत्माके विशेषण ...	१६६
८	सत्चित्तआलोकका विशेषवर्णन ...	१८८
९	अवाक्यमिद्धांतवर्णन ...	२१३
१०	सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ...	२२३
११	‘सत्त्वं’ पदार्थैक्यनिरूपण ...	२४६
१२	ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकारवर्णन ...	२७३

આરંભ-પૂર્વાક.

૧૩ સપ્તજ્ઞાનમૂલિકાવર્ણન	..	૨૭૭
૧૪ જાવન્મુક્તિવિદહમુક્તિવર્ણન		૨૮૪
૧૫ વદાતપ્રમય (પદાર્થ) વર્ણન		૨૯૦
૧૬ પ્રથમવિભાગ-શ્રીશ્રુતિપદ્ધતિગસપદ્ધ		૨૯૬
૧૭ દ્વિતીયવિભાગ-વદાતપદાર્થસંજ્ઞાવર્ણન		
અથવા લઘુવેદાંતકાશ	.	૩૭૧



॥ पौडशकला प्रथमविभागः ॥

श्रीशुनिषडलिंगसंग्रहकी अनुक्रमणिका ।

विषय

पृष्ठांक.

१ उपोद्घातकीर्तनम् ...	२६६
२ ईशावास्योपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३१०
३ केनोपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३१३
४ कठोपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३१६
५ प्रश्नोपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३२२
६ मुण्डकोपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३२५
७ माण्डूक्योपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३३०
८ तैत्तिरीयोपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३३२
९ ऐतरेयोपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३३६
१० छान्दोग्योपनिषदलिंगकीर्तनम् ...	३४१
(६) पट्ठाध्यायलिंगकीर्तनम् ...	३४१
(७) सप्तमाध्यायलिंगकीर्तनम् ...	३४५
(८) अष्टमाध्यायलिंगकीर्तनम् ...	३४६

	पृष्ठांक.
११ बृहदारण्यकोपनिषद्लिङ्गकीर्तनम् ...	३५२
(१) प्रथमाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ...	३५२
(२) द्वितीयाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ...	३५५
(३) तृतीयाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ...	३६०
(४) चतुर्थाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ...	३६४



॥ श्रीविचारचन्द्रोदय ॥

वमआवृत्तिकी अकारादिअनुक्रमणिका ।

टि:—टिप्पणांकनकूं सूचन करैहै ॥

अन्य सर्व अंक पृष्ठांकनकूं सूचन करैहैं ॥

अ		पृष्ठांक-	अवयव	पृष्ठांक-
अंश			अक्ष, आत्मा	१८५
-कल्पित विशेष	१४०।		अखंडआत्मा	१७८
१४४			अख्यातिस्थिति	४०७
-तीन	६१ टि		अजन्माआत्मा	१८२
-विशेष	१३६।१४३		अजरअमर	१८२
-सामान्य	१३६।१४३		अजहत्तुलक्षण	२५४
अकर्म	३८६		—असंभव	२५७
अकृतोपासन	१६८ टि		अजिह्वत्व	४१६
			—आदि	४१६

पृष्ठांक-

पृष्ठांक-

अज्ञान १७४२११२७ टि	अध्ययसंग्रहसंग्रहज्ञान ७	११
२३ टि	—का फल	८
—का अज्ञान २८ टि	—का स्वस्व	९
—का अज्ञान ४०४	—का हेतु	१०
—का शक्ति २०९	—को अवधि	११
—क भेद ४०३	—अज्ञानसाक्षात्कार १८०	
—ज्ञानविशेषात्मिकरूप ४०३	—अधिकारी २२२	
—मूल २०६	—दो अनुसंधानमिका रूप	
—मायाअतिशय ४०३	ज्ञानके १६८ टि	
—मूल २०६	—विचारका १६	
—विशेष साधारणरूप ४०३	अधिदैव २२८०९ टि	
—व्यष्टि ४०६	—साध २८३	
—समष्टि २०६	अधिभूत २२८०७ टि	
—समष्टिव्यष्टिरूप ४०४	—साध ३८६	
अतिशयानिजसुखदोष २२२	—अधिष्ठान १४०१४३	
अव्यक्तनिवृत्ति २३ टि	१९८ टि । १२० टि	
अव्यक्ताभाव ४०३।२९ टि	—रूपविशेष १२४ टि	
अध्यायवेष्टिका	अव्यक्तरूप विशेष १२४ टि	
महानात्र १२६ टि		

चंद्रोदय] ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ ६१

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक-
अध्यात्म	११६।७५	अनिर्वचनीयख्याति	४०८
--ताप	३७३।३८६	अनुपलब्धिप्रमाण	४२०
अध्यारोप	३५ टि	अनुबंध	३६५
अध्यास	१५८।३७३	अनुमान प्रमाण	४१६
--की निवृत्ति	२६२।२६४	अनुवाद	३८१
—कूटस्थ औ जीवका		अंडज	३६६
परस्पर	२६४	अन्तःकरण	३८१
—दो	१५६	—की कृपा	२२ टि
—ब्रह्मईश्वरका परस्पर	२६१	—की त्रिपुटी	१२१
—पट्	१५६	—के देवता	११८
अनंत	२२१	—के विषय	११६
—आत्मा	१७७	—रुयारि	११७
अनसूया	४३६	अन्धत्व	४१६
अनात्माके धर्म	१३० टि	अन्धपना इन्द्रियका	६५
अनादिपदार्थ	४१६	अन्धमन्दपटुपना	६५
—पट्त्वस्तु	३६ टि	अक्षमयकोश	१०१
—स्वरूपमें	३६ टि	अन्यथाख्याति	४०७
अनावृत	४३५	अन्यतराध्यास	१२५ टि
अनित्य	१७१		

पृष्ठां:-

पृष्ठां:-

अभ्यो. पाश्चात्त- १६३।	अपूर्वता ३०५।४२१
१२४ टि	अपूर्वविधित्वात् १२७
अभ्यो. पाश्चात्त ३०२।५१ टि।	अभावादात्क आवात् २० टि
अन्वय ६७ टि। १०६ टि	अभावे ४०५।४२६
अभ्यय स्थितिरेक	—अभ्यासिप्रकारका २१ टि
—आत ३ र्था हु तर्जि २०८	अभिनिवेश ४०६
—चित्ततर्जि २०२	अभिमानो ईश्वरपदैके २२६
—रूप बुक्ति १६३	अभ्यास ३०२।४२१
अन् अभ्यासे १३४	अमुकपग्रहकार ३७२
अपधीकृत पंचमहाभूत ७६	अमृत १८२।
अपधाकृत पंचमहा-	अमृत ८६ टि
भूतलक मतल तन्व ७६	अस्तिग ४१७
अवरजानि ३७७	अर्थत ४१८
अपरिग्रह ४१३	अर्थ ३६८
अपराजयज्ञान ६	—महावाक्य तीतको
—अदृष्ट ७	१२३ टि
—दृष्ट ८	—आत् ३००।३८१।४२१
अपवाद ४२ टि	अर्थाभ्यास ३७३
अवानव यु १०३	—दी १२३

चंद्रोदय] ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ ६३

पृष्ठांक-	पृष्ठांक-
अर्थापत्तिप्रमाण ४२०	अवाच्यसिद्धांत-
अर्थार्थी ३६६	वर्णन २१३
अल्पज्ञजीव २२	आवक्रय ४३५
अवधि ३८२	अविद्यक १५८ टि
—अदृढअपरोक्ष-	अविद्या २२।४०६
ब्रह्मज्ञानकी ६	—तूला ११४ टि
—उपरामकी ३८२	—मूला ११५ टि
—दृढअपरोक्षब्रह्म-	अविनाशी १८५
ज्ञानकी ११	अव्यक्तआत्मा १८४
—परोक्षब्रह्मज्ञानकी ६	अव्यय ४३४
—विचारकी १२	—आत्मा १८५
अवस्था ३८२।४१७	अवशान्तिलक्षणदोष ३६१
—चिदाभासकी ४२३	अशुद्धअहंकार ३७४
—जाग्रत् ११६।१२३।	अष्टमकला १८८
७२ टि	असत् १६४
—तीन ११४	—ख्यात ४०७
—सुषुप्ति १२७।६६ टि	अमत्वापादक आवरण १४८
७४ टि	
—स्वप्न १२५।७३ टि	

पृष्ठांश-		पृष्ठांक	
		आ	
असंगशरमा	१८०	आकारव्यति	१८४
असंगी	४३६	आकाशके पञ्चतन्त्र	३०३६
असम्भवं-ज्ञानदोष	३६२		४०४६ हि
असम्भवंना	३०४/१६ टि	आकाशमद्	४३०
—प्रमाद्यगत	३०४	आमति	४१८
—प्रमेयगत	३०४	आनामी कर्म	३८६
असमर्पित	२८१	आतिष्ठ	४१६
अविद्	४१४	आत्मव्यति	४०१
अमित	२३२ २३३	आत्ममद्	४३०
अमितता	४२६	आत्मा	११२/१०६
अन्तय	४६३	—अक्षर	१८६
अदिमता	४०६	—अक्षर	१०८
अहकार	४६३/४२६	—अमर्मा	१८२
—अमुक्त	३०६	—अद्वैत	१८०
—अशुद्ध	३०४	—अनत	१०६
—मुख्य	३०६	—अनात्मा को परस्पर	
—विशेष	३०४	सम्भाव	१६६
—शुद्ध	३०४		
—सामान्य	३०४		

पृष्ठांक.	पृष्ठांक.
प्रात्मा-अव्यक्त १८४	आत्मा-निर्विकार १८३
—अवग्रह १८५	—पदका लक्ष्य १४६ टि
—असंग १८०	—पदका वाच्य १४६ टि
—आनंद १७०	—ब्रह्मरूप १७०
—आनेरूप १४३ टि	—सत् १६६
—उपद्रष्टा १७६	—साक्षी १७४
—एक १७६	—स्वयंप्रकाश १७२
—का स्वरूप २६५	—आत्यंतिकप्रलय ४१२
—कूटस्थ १७३	आधार १३६।१४२
—के धर्म १३० टि	आधिताप ३७३
के निषेधविशेषण १८५	आनंद १७०।१८६।१८०।
—के विधेयविशेषण १८६	२१६
—के विशेषण २६६।	—आत्मा १७०
१६८	—श्री दुःखका निर्णय २०८
—कैसा है ? ११३	—श्री दुःखमें अन्वय-
—कौन है ? ११२	व्यतिरेक २०८
—चित् १६६	—पदका लक्ष्य १४६ टि
—द्रष्टा १७५	—पदका वाच्य १४६ टि
—निराकार १८५	—पृच्छ १६६ टि

पृष्ठांक-

आनंदरूप आत्मा १४३ टि

आनंदमयकोश ११०

आभ्य ३४४

आपेक्षिकस्थापक ४१ टि

आरभवाद् ३८६

आरोप ३६ टि

—शुद्धप्रकाशविषे

प्रपञ्चका २६

आर्त ३३६

आवरण ४२३

—अभावापादक ९० टि

—अवस्थापादक १४ टि

—दाय ३८१

—राहित ३७६

आश्रय ४३६

॥

दृष्टा ४३२

इन्द्रिय—का मंथपना ६६

—का पटपना ६६

पृष्ठांक

इन्द्रिय—का मंथपना ३११

—चोदा ११७

इंशपनके अभिमानो २६३

इंशावास्वीपतिपद्

के लिंग ३१०

ईश्वर २६०/२८ टि

—का कार्य २६०

—का देश २६८

—का उपाधि २२

—क काल २६८

—के धर्म २६०

—के वस्तु २६६

—के शरीर २६६

—कृपा २२ टि

—सेवन ४२४

—प्रणिधान ४१०

मयज्ञ २२

उ

सप्तमविज्ञासु ३० टि

उत्पत्ति ३६७

पृष्ठांक.	पृष्ठांक.
भूमिका	भ्रमजकी निवृत्ति ३६०
चतुर्थ २८०	भ्रांति १४०।१४४।१५८
तीसरी २८०	—कृताभोक्तापनेकी १०६ टि
दूसरी २७६	—च्यारि ६४ टि
पांचमी २८१	—रूप संसार पंच १४६
प्रथम २७६	—विकारकी १११ टि
षष्ठ २८१	—संगकी ११० टि
सप्तम २८२	म
सात २७८	मज्जा ४३१
वेद	मत्सर ४१७
अज्ञानके ४०३	मद ४१७
नाश औ चाधका १७२ टि	मन ७५।३६६।४२८
पांच १७८	मनन
भ्रांतिकी निवृत्ति १५०	मनोनाश ४३३
भ्रांतिपंच १०८ टि	मनोमयकोश १०६
सर्वज्ञानीनकी स्थितिका २७८	मंदपना इंद्रियका ६५
भेदका स्थान १०१	मरीचिकाविषै जल ४१०
भौतिक २६ टि	मलदोष १८१।४१०

पृष्ठांक.			पृष्ठांक.
मलिनसर्वगुण	३६ टि	मुदिता	३६६
महानात्मा	३८२	मुंडकोपनिषद्के लिंग	३२५
महाप्रलय	४४१	मूढ	४११
महावाक्य	१६ टि	मूल	१०३ टि
-अथर्ववेदका	१५६ टि	—अज्ञान	२७६
-गीतका अर्थ	१५६ टि	—अविद्या	११५ टि
-यजुर्वेदका	१७६ टि	मेद	४२१
-सुग्वेदका	१५६ टि	मेरा स्वभाव	१२३
माहूकपोपनिषद्के		मैत्री	३६६
लिंग	३३०	में पंचकोशातीत हैं	६६
मांथ	३८४	मोह	४१७।४४ टि
माया	२२	मोक्ष	३६८।१० टि
-अविद्यारूप अज्ञान	३३०	-का मात्मान्माधन	२६५
मायिक	१५७ टि	-का स्वरूप	२।२६४
मिथ्यात्मा	३८३	-का हेतु	१२ टि
मुखम		-क अर्थांतरमाधन	२६५
--अर्थ	२५३	य	
—अहंकार	न ७५		
—पुरुषार्थ	५ टि		
मुख्यात्मा	३८३	यजुर्वेदका महावाक्य	१५६
मुग्धत्व	४१६	यौवन	४१७

चंद्रोदय] ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ ११५

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक-
र		-अर्थ	२५३
न	४२६	-अर्थ 'नत्' पदका	२६३
राग	४०६	-अर्थ 'त्वं' पदका	२६३
ऋग्वेदका महावाक्य		-आनंदपदका	१४६ टि
	१५६ टि	-उपद्रष्टापदका	१४६ टि
रूप	२३३	-एकपदका	१४६ टि
रोम	४६ टि	-कूटस्थपदका	१४६ टि
ल		-चिन्पदका	१४६ टि
लक्षणा	३८४	-द्रष्टापदका	१४६ टि
-तटस्थ	३८०	-ब्रह्मपदका	१४६ टि
-स्वरूप	३८०	-सत्पदका	१४६ टि
लक्षणा		-मात्तीपदका	१४६ टि
-अजहत्	२५४	-स्वयंप्रकाशपदका	१४६ टि
-जहत्	२५३	लघुवेदांतकोश	३७१
-भागत्याग	२५५	लिंग	४२१
-वृत्ति	२५२	-देह	६२ टि
-वृत्ति तीन	२५३	लोकैषणा	६८५
दय		लोभ	४१७

११६ ॥ अकारादि अनुक्रमणिका ॥ [विचार-
पृष्ठांक-
पृष्ठांक-]

य	वायुके पञ्चितत्त्व ३१।७०
वस्तु	२५६
— ईश्वरके	२६३
— जीवके	२५६ टि
वाक्य	२६३
— अर्थ	२६०
— अर्थ 'तत्' पदका	२६३
— अर्थ 'त्व' पदका	२६३
— आनन्दपदका	१४६ टि
— उपद्रष्टापदका	१४६ टि
— गुरुपदका	१४६ टि
— कूटस्थपदका	१४६ टि
— चित्तपदका	१४६ टि
— द्रष्टापदका	१४६ टि
— अक्षपदका	१४६ टि
— मनुष्यपदका	१४६ टि
मालापदका	१४६ टि
मयप्रकाशपदका	१४६ टि
वादि	३६४
वामनानन्द	३८३
विकर्म	३८६
विकार	३६७।११७ टि
— भ्रान्ति	१११ टि
— भ्रान्तिकी निवृत्ति	१४४
— पद	७१।१८०
विशेष	४१३।४२३।२१ टि
— आवरणरूपअज्ञान	३३०
— शेष	३८१
— शक्ति	३७६
विचार	११
— का अधिपति	१६
— का उपयोग	१४
— का फल	१२
— का विषय	१२
— का मयत्व	११
— का हेतु	१९
— की अवधि	१२

गन्द्रोदय] अकारादिअनुक्रमणिका ॥ ११७

पृष्ठांक-

पृष्ठांक.

रजातीयसंबन्ध	१७६	—अहंकार	३७४
रज्ञानमय कोश	१०७	—चैतन्य	२:५।१५३ टि
रतंडावाद	३६२	—दो	१५४
रदेहमुक्ति	२८६	—वर्णन सत्चित्	
रद्वत्संन्यास	३७६	आनन्दका	१८८
रधि-पूर्वक शरण	५२टि	विशेषण	
-ब्रह्मविद्याग्रहणका	५२टि	—आत्माके	१६६
रधेय	१३८टि	आत्माके दो	१६८
-विशेषण आत्माके		विश्व	१२४।३८८
	१६६।१४७ टि	विषय	८० टि
रपरोतभावना	१६टि१८टि	—अतःकरणके	११६
रवर्त	११६ टि	—अनुबंध	३६५
—उपादान	११८ टि	—कर्मइन्द्रियके	११६
—वाद	३८७	—चौदा	११६
रिविदिषासंन्यास	३७६	—ज्ञानइन्द्रियके	११६
रिशेष	२२६।४२६	—ज्ञानका	२६५
—अंश	१३६।१४३	—त्रिचारका	१३
—अधिष्ठानरूप	१५४टि	विषयानन्द	३८३
—अध्यस्तरूप	१५४टि	रिसंवादभाव	४०६

पृष्ठांक ।

पृष्ठांक-

य

सायुक पाचतत्त्वं २१५०।

वस्तु

५.

— ईश्वरक

२४६

वामनानन्द

२८३

— नीलक

२६३

विकर्म

३८६

शान्त्य

२४६ टि

विकार

३६७।११७टि

— अर्थ

२६३

— भ्रान्ति

१११ टि

— अर्थ 'तत्' पदका २६०

— भ्रान्तिकी निवृत्ति १४५

— अर्थ 'त्व' पदका २६३।

— पद

७१।१८०

— आनन्दपदका १४६ टि

विज्ञेय ४१३।४२३।७१टि

— उपद्रष्टापदका १४६ टि

— आवरणरूपभ्रान्तान् ३३०

— अरूपपदका १४६ टि

— दोष

३८१ ।

— कूटस्थपदका १४६ टि

— शक्ति

३७६

— चिन्मपदका १४६ टि

विचार

११

— द्रष्टापदका १४६ टि

— का अधिगते

१६

— ज्ञापदका १४६ टि

— का उपयोग

१५

— सन्पदका १४६ टि

— का फल

१०

— नास्त्यपदका १४६ टि

— का विषय

१०

— अययकारापदका १४६ टि

— का स्वरूप

११

— अद

३६२

— का हेतु

११

— अद

३६२

— की अवधि

१२

चन्द्रोदय] अकारादिअनुक्रमणिका ॥ ११७

पृष्ठांक-

पृष्ठांक.

जातीयसंबन्ध	१७६	—अहंकार	३७४
विज्ञानमय कोश	१०७	—चैतन्य	२:५।१५३ टि
वितंडावाद	३६२	—दो	१५४
विदेहमुक्ति	२८६	—वर्णन सत्चित्	
विद्वत्संन्यास	३७६	आनन्दका	१८८
विधि-पूर्वक शरण	५२टि	विशेषण	
—ब्रह्मविद्याग्रहणार्का	५२टि	—आत्माके	१६६
विधेय	१३८टि	आत्माके दो	१६८
—विशेषण आत्माके		विश्व	१२४।३८८
१६६।१४७ टि		विषय	८० टि
विपरोतभावना	१६टि१८टि	—अतःकरणके	११६
विवर्त	११६ टि	—अनुबन्ध	३६५
—उपादान	११८ टि	—कर्मइन्द्रियके	११६
—वाद	३८७	—चौदा	११६
विविदिपासंन्यास	३७६	—ज्ञानइन्द्रियके	११६
विशेष	२२६।४२६	—ज्ञानका	२६५
—अंश	१३६।१४३	—विचारका	१३
—अधिष्ठानरूप	१५४टि	विषयानन्द	३८३
—अध्यस्तरूप	१५४टि	विसंवादाभाव	४०६

११८ ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ [विचार-

पृष्ठांक-

पृष्ठांक.

वृत्ति शब्दको

२५२

व्यावहारिकजीव

३८८

वेदकृपा

२२ टि

व्यावृत्ति

८८ टि

वेदात

श

—पदार्थसंज्ञाधर्मान

शक्ति

१८० टि

—प्रमेय [पदार्थ] ३७१

—अज्ञानकी

३७६

—आवरण

३७६

धर्मान

२६०

—विशेष

३५०

वैश्वरेय

४१६

—वृत्ति

७५०

व्यतिरक ६८ टि १०५ टि

शक्यमर्थ

२५३

—अन्य

१४२

शब्द

व्यभिचागी

१५६ टि

—की वृत्ति

२५२

व्यष्टिअज्ञान

३७६

—प्रमाण

४२०

व्याधिनाव

३७३

शमादि

४००

व्यानरायु

१०४

शरीर

व्यापक १७०।४५।४१टि

—इन्द्रियके

४१६

—आवेसिक

४१ टि

—जीवके

७६०

—जाति

३७८

शांतात्मा

३८२

व्याप्य

४३४

शिशु

४१७

—नाभि

२३५

तन्त्रोदय] ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ १०६

पृष्ठाङ्क.

इ	४३५
—अहंकार	३७४
—चेतन	४२४
ब्रह्मविषै प्रपञ्चआरोप	२६
—सत्तगुण	३८ टि
गुमेच्छा	२७६
गोकनाश	४२३
गवण	४००
श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह	
—	२६६
प्रुत	४३६

प

प	
—अध्यास	१६६
—विकार	७१।१८२
पष्ट	
—कला	१३३
—भूमिका	२८१
पेण्डशकला	२६६
पेण्डशकला द्वितीय	
विभाग	३७१

पृष्ठाङ्क.

स	
संशय	१७ टि
—प्रमाणगत	१५ टि
प्रमेयगत	१५ टि
संमर्गाध्यास	१२७ टि
संसार भ्रांतिरूपपाँच	१४६
संस्कार	३६७
सगुणउपासना	३७७
संकल्प	४२६
संग	१७८
—भ्रांति	११० टि
भ्रांतिकी निवृत्ति	१५४
मजातीय	१७८
मंचित्कम	२७४।३८६
मत्	१६६।१८६।१८६।
	१६४।२१६
—असत्का निर्याय	१६३
—असत्मे अत्र	
व्यतिरेक	१६४

	पृष्ठांक		पृष्ठांक
मत्—का मा	१६६	सप्तम—कला	१६६
—चित्स्थानन्दका		—भूमिका	२८२
विशेषचर्चन	१८८	समवायमन्त्र	४२६
—पक्षका वार्य	१५६ टि	समष्टि	
—पक्षका लक्ष्य	१७६ टि	—अज्ञान	३७६
—प्रतिपक्ष	७१४	व्यष्टिरूप अज्ञान	४०४
मतरा लक्ष्य		समानवायु	१०३
—अपचीकृतपक्षमहा		सर्वथ	
भूतमके	७६	—अनुबध	३४५
—समभक्तैका फल	७१	—विजातीय	१७६
सूक्ष्मवदके	७४	—सजातीय	१७८
मत्ता	४२५	—समवाय	४७६
सर्वगुण		—सहित सङ्गधीका	
—सञ्चिन्त	३६ टि	अप्याय	१२१ टि
—सुद्ध	३८ टि	—इशान	१७६
सच पति	२८०	समुवाच्याम	७६
सग्याम—विद्वत्	३७६	रुच	
—विभिदिषा	३७६	—सामोपकी निवृत्ति	२८
समज्ञानभूमिका		ज्ञानीही स्थितिका	
चर्चन	२७७	भेद	२७८

चन्द्रोदय] ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ १२१

पृष्ठांक	पृष्ठाङ्क.
सर्वज्ञईश्वर २२	साधन
मव्यभिचार ४१४	—मोक्षका साक्षान् २६५
महजकी निवृत्ति ३६०	साक्षान् अंतरंग—
साक्षी १७४।२२०	ज्ञानका २६६
—आत्मा १७४	सामयिकाभाव ४१२
—पदका लक्ष्य १४६ टि	सामान्य २३०
—पदका वाच्य १४६	—अंश १३६।१४३
मात ज्ञानभूमिका २७८	—अहंकार ३७४
साधन-अन्तरङ्ग ज्ञानके परं-	चैतन्य २३०।१५५
परासै २६७	चैतन्यकी प्रकाशता
—एकादश ज्ञानके २६७	१५५ टि
—जीवन्मुक्तिविदेह-	—विशेषचैतन्य-
मुक्तिका २८२	वर्णन २२३
—जीवन्मुक्तिके	सुखप्राप्ति ४०६
—विलक्षणआनन्दके २८२	सुविचारणा २७ टि
—तत्त्वज्ञानके २८२	सुपुण्या ४३६
—बहिरंगज्ञानके २६७	सुपुप्ति
—मोक्षका अवान्तर २६५	—अवस्था १२७।६६ टि
	७४ टि

१०० ॥ अकारादिअनुष्टुभणिका ॥ [विचार

प्रष्टाङ्क		प्रष्टाङ्क	
सुपुलि		स्थूलरेह	२०
--अवस्थाका में		—का में द्रष्टा हैं	३०
मासी ह	१२७	—के गौणधर्म	४४
--जाग्रत	३२४	—के धर्म	६४
में ज्ञान	२८ टि	—विषै दक्षीयतम	४६
--सुपुलि	३२४	इवगतमवकथ्य	१७३
--स्वप्न	म २४	वपन	
सूचन		—अवस्था १०२।१३ टि	
--रेह	७४	—अवस्थाका में	
रेहका में द्रष्टा ह ७४		मासी हैं	१२४
रेहके मतका तत्व	७४	—जाग्रत	३२४
--भूत	७६	—सुपुलि	३६४
--सूत्रवत्	८६ टि	—स्वप्न	३६४
सूत्रवत्	४३०	स्वप्नकाश	४३४
स्थान		स्वप्नाव त्रिपुटीवका	१००
--मादि जीवके	१०३।	स्वप्नप्रकाश	१००।०१३
	१२२।१२७	—आत्मा	१७०
—भी विद्या पौर्वपायक		--पदका अदव	१७६ टि
	१०४	पदका वाच्य	१४३ १
--भोगका	१-१		

पृष्ठांक-	पृष्ठांक-
रूप	हेतु ४३५
दृढअपरोक्षब्रह्म-	—अदृढअपरोक्षब्रह्म-
ज्ञानका ६	ज्ञानका ७
-आत्माका २६५	—दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका १०
-ज्ञानका २६६	—परोक्षब्रह्मज्ञानका ५
-दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका ६	विद्याका ११
-परोक्षब्रह्मज्ञानका ४	हेत्वाभास ४१४
-ब्रह्मका २६६	क्षेत्रत्व ३४०
-मोक्षका २।२६४	क्षेप ३४०
-लक्षण ३८०	क्षोभ ११६ टि
-विचारका ११	क्षेत्र ३
-सै' अनादि ३६ टि	ज्ञातव्य ३८५
रूपाध्यास १२६ टि	ज्ञान ५८ टि
वाध्याय ४१०	—का विषय २६५
वेदज ३६६	—का साक्षात् अंतरंग साधन २६
वेदज्ञ ३७८	

१२४ ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ [विचार-

पृष्ठांक-	पृष्ठांक
ज्ञान का स्वरूप २६६	ज्ञानइन्द्रियगत
—के एकादश साधन २६७	—की त्रिपुटी १२०
—क परपरार्थ अन्तरम-	—के देवता ११७
साधन २६७	—क विषय ११६
—क बहिरंग साधन २६७	ज्ञानाग्ना २८२
क्रियाशक्तिरूप	ज्ञानाध्यास ६१३
अज्ञान ४०३	ज्ञाना ३६६
—भूमिका सात २७८	—क कमकी निवृत्ति २७६
—रक्षा ४०६	ज्ञानीद
संपुष्टिमें ६८ टि	—की स्थितिका भेद २७८
ज्ञानइन्द्रिय ६४ टि	के कर्मनिवृत्तिका
—बोव ७४। ७६। ८४। ११७	प्रकारधर्मेन २७३

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

॥ अथ प्रथमकलाप्रारम्भः ॥ १ ॥

॥ उपोद्घातवर्णन ॥

॥ २ मनहर छन्द ॥

गुरुषु इच्छाविषय पुरुषार्थ जोई सोई ।

दुःखनाश सुखप्राप्तिरूप मोक्ष मानहु ॥

हेतु ताको ब्रह्मज्ञान सो परोक्ष अपरोक्ष ।

तामैं अपरोक्ष दृढ अदृढ दो गानहु ॥

मोक्षको साक्षात् हेतु दृढ अपरोक्षज्ञान ।

हेतु ता विचार जीवब्रह्मजग जानहु ॥

निवस्तुरूप जड चेतन दो जड मिथ्या-

माया ब्रह्मचित् 'सो मैं' पीतांबर स्थानहु ॥

• १ प्रश्न:-पुरुषार्थ सो क्या है ?

उत्तर:-सर्वपुरुषार्थकी इच्छाका जो विषय।
सो पुरुषार्थ है ॥

• २ प्रश्न -सर्वपुरुषार्थ कित्नाकी इच्छा होयै ?

उत्तर.-सर्वपुरुषार्थका सर्वदुःखनकी निवृत्ति
श्री परमानन्दकी प्राप्तिकी इच्छा होयै ॥

• ३ प्रश्न -सर्वदुःखनकी निवृत्ति श्री परमानन्दकी
प्राप्ति सो क्या है ?

उत्तर —सर्वदुःखनकी निवृत्ति श्री परमा-
नन्दकी प्राप्ति । यह मोक्षका स्वरूप है ॥

॥ १ ॥ प्रतिपादन करनेवाला अर्थको मनमें रखिके
तिसके अर्थ अन्वयका प्रतिपादन उपोद्घात है ।
जैसे किन्नाको दूसरेके गृहमें खोज करनेकी होयै । तब
वह बात मनमें रखिके तिसके अर्थ “ तुम्हारी ही
दुग्ध बर्ताई या नहीं ? ” इत्यादिरूप अन्वयवार्ताका
कथन उपोद्घात है ॥ नैमै हर्ष प्रतिपादन करनेयोग्य

जो विचार । ताकूँ मनमें राखिके तिसके आरंभार्थ अन्य
मोक्षआदिकपदार्थनका कथन उपोद्घात है ॥

॥ २ ॥ कोईवी रागके ध्रुवपदमें गाया जावे है ।

॥ ३ ॥ अन्वयः-ता (दृढअपरोक्षज्ञानका) हेतु
विचार है ।

॥ ४ ॥ ऐसै निश्चय करो ॥

॥ ५ ॥ धर्म अर्थ काम मोक्ष । इन च्यारीका नाम
पुरुषार्थ है ॥ तिनमें प्रथमके तीन गौण हैं । तिनकूँ
छोड़िके इहाँ अंतके मुख्य पुरुषार्थका ग्रहण है ।

॥ ६ ॥ अज्ञानसहित जन्ममरणादिक दुःख कहियेहै ।

॥ ७ ॥ मिथ्यापनैका निश्चयरूप बाध निवृत्ति है ।

॥ ८ ॥ परमप्रेमका विषय परमानंद है ।

॥ ९ ॥ इहाँ कंठभूषणकी न्यांई नित्यप्राप्तकी प्राप्ति
मानी है ॥

॥ १० ॥ कर्त्ताभोक्तापनैआदिकअन्यथाभावक
स्वरूपसै स्थितिहीं मोक्ष है ॥ कितनैक लोक हैं
वैकुण्ठ गोलोक ब्रह्मलोक आदिककी प्राप्ति

• ४ प्रश्न मोक्ष किमर्थें होवैहै ?

उत्तरः—मोक्ष ११ब्रह्मज्ञानसँ होवैहै ।

• ५ प्रश्न - १२ब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तर—ब्रह्मज्ञान । सो ब्रह्मस्वरूपकूँ यथार्थ जानना ।

• ६ प्रश्न:-ब्रह्मज्ञान कितनै प्रकारका है ?

उत्तरः—ब्रह्मज्ञान । परोक्ष औ अपरोक्ष भेदतँ दोप्रकारका है ।

• ७ प्रश्न.—परोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ।

उत्तरः—(१ परोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

जानतहै । सो वेदतँ निरुद्ध है ॥ ऊपर कहा मोक्षका स्वरूप वेदमनुमारी है ॥

॥ ११ ॥ कर्म औ उपासनासँ चित्तकी रुद्धि औ एकाग्रतारूप ज्ञानके साधन हवैहै । मोक्ष नहीं ॥

॥ १२ ॥ ब्रह्मसँ अभिन्न आत्माका ज्ञान । मोक्ष का हेतु ई ॥

“सच्चिदानन्दरूप ब्रह्म है ” ऐसा जो जानना ।

सो १३ परोक्षब्रह्मज्ञान है

* ८ प्रश्न :- परोक्षब्रह्मज्ञान किससे होवै है ?

उत्तर:- (२ परोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

सद्गुरु औ सत्शास्त्रके वचनमें विश्वासके रखनसे परोक्षब्रह्मज्ञान होवै है ॥

* ९ प्रश्न :- परोक्षब्रह्मज्ञानसे क्या होवै है ?

उत्तर:- (३ परोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

१४ असत्त्वापादक आवरणकी निवृत्ति होवै है ॥

* १० प्रश्न :- परोक्षब्रह्मज्ञान कब पूर्ण होवै है ?

॥ १३ ॥ परोक्षज्ञान । “ तत्त्वमसि ” महावाक्यगत “ तत् ” पदके अर्थकू जनावत है । यात्तें सो अपरोक्ष-अद्वैतज्ञानविषे उपयोगो है ॥

॥ १४ ॥ “ ब्रह्म नहीं है ” इसरीतिसे ब्रह्मके असद्भाव की आपादक कहिये संपादक आवरण ।

पादक आवरण है ॥

उत्तर:- (४ परोक्षब्रह्मज्ञानकी अधधि)

परोक्षब्रह्मज्ञान । ब्रह्मनिष्ठगुरु श्री वेदांत शास्त्रके अनुसार ब्रह्मस्वरूपके निर्धार किये पूर्ण होवेंगे ॥

* ११ प्रश्न - अपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तर:- "सच्चिदानंदरूप ब्रह्म मैं हूँ" ऐसा जो जानता । सो अपरोक्षब्रह्मज्ञान है ॥

* १२ प्रश्न - अपरोक्षब्रह्मज्ञान किससे होवेंगे ?

उत्तर:- गुरुके मुँहसे " तत्त्वमसि " आदिकमहावाक्यके श्रवणसे अपरोक्षब्रह्मज्ञान होवेंगे ॥

* १३ प्रश्न - अपरोक्षब्रह्मज्ञान कितने प्रकारका है ?

उत्तर:- अपरोक्षब्रह्मज्ञान अदृढ़ और दृढ़ इसभेदसे दो प्रकारका है ॥

* १४ प्रश्न - अदृढ़अपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तर:-

(१ अदृढ़अपरोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

१५ असंभावना औ १६ विपरीतभावना सहित
 १ ब्रह्मआत्माकी एकताका निश्चय होवै । सो
 १ अदृढ अपरोक्षब्रह्मज्ञान है ।

१५ प्रश्न:-अदृढ अपरोक्षब्रह्मज्ञान किससँ होवै
 है ?

उत्तर:-

(२ अदृढ अपरोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

१ १५ ॥

१ “ वेदांतविषै जीवब्रह्मका भेद प्रतिपादन किया है
 किंवा अभेद ? ” यह प्रमाणगतसंशय है ॥ औ
 २ “ जीवब्रह्मका भेद सत्य है वा अभेद सत्य है ? ”
 यह प्रमेयगतसंशय है ।

यह दोनूँ प्रकारका संशय असंभावना कहिये है ।

॥ १६ ॥ “ जीवब्रह्मका भेद सत्य है औ देहादि-
 प्रपंच सत्य है ” ऐसा जो विपरीतनिश्चय । सो
 विपरीतभावना है ।

१ फलुक मलविशेषदोषके होते श्रुतिनानात्वका
ज्ञान । औ

२ ब्रह्मकी अद्वैतताके असम्बन्धका ज्ञान औ

३ भेदयादी अरु पाप्मरपुण्यनके सङ्गके सङ्कार ।
इनकरि सहित पुरपट्ट गुरुमुखद्वारा महावाक्य
के अंगणसँ अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञान होईहै ॥

● १६ प्रश्न - अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञान सँ क्या होईहै ?

उत्तर —

(३ अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञानसँ

१ उन्नमलाकली प्राप्ति होईहै औ

२ पवित्रधीमान्पुलविषै जन्म होईहै । अथवा
निष्कामताके हुये खानीपुण्यके पुलविषै जन्म
होईहै ॥

● १७ प्रश्न - अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञान कय पूर्ण होईहै ?

उत्तर:—

(४ अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानकी अवधि) ✓

सत्-चित्-आनन्द आदिक ब्रह्मके विशेषण-
के अपरोक्षमान हुये वी १७संशय औ १८विपरीत
भावनाका सद्भाव होवै । तब अदृढअपरोक्ष
ब्रह्मज्ञान पूर्ण होवैहै ॥

* १८ प्रश्न:-दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तर:-

(१ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

असंभावना औ विपरीतभावनासँ रहित जो
ब्रह्मआत्माकी एकताका निश्चय होवै । सो
दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान है ॥

* १९ प्रश्न:-दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान किससँ होवैहै ?

॥ १७ ॥ दोकोटिवाला ज्ञान संशय कहिये है ?

॥ १८ ॥ विपरीतनिश्चयक विपरीतभावना कहै ॥

उत्तर:—

(२ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

गुरुमुखसँ १६महावाक्यके अर्थके श्रवण
मनन औ निदिध्यासनरूप विचारके क्रियेसँ दृढ-
अपरोक्षब्रह्मज्ञान होवैहै ।

* २० प्रश्न:—दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानसे क्या होयै है ?

उत्तर:—

(३ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

२०अमानापादकआवरण औ २१विशेषरूप

॥ १६ ॥ जीवब्रह्मकी एकताके बोधक वाक्य । महा-
वाक्य कहिये है ।

॥ २० ॥ " ब्रह्म भामता नहीं " इत्येतिसे अभाव
जो ब्रह्मकी अप्रतीति । ताका आपादक कहिये भंदादन
करनैवाला आवरण । अमानापादकआवरण है । ५/

॥ २१ ॥ स्थूलसूक्ष्मशरीरसहित चिदाभास औ ताके
धर्म कर्त्तापना भोक्तापना जन्ममरणआदिकर विशेष है ।

कला] ॥ उपोद्घातवर्णन ॥ १ ॥ ११

कार्य सहित अविद्याकी कहिये अब्रानकी निवृत्ति होयके ब्रह्मकी प्राप्तिरूप मोक्ष होवै है ।

* २१ प्रश्न:-इदं अपरोक्षब्रह्मज्ञान कथं पूर्ण होवे है ?

उत्तर:—

(४ इदं अपरोक्षब्रह्मज्ञानकी अवधि)

देहविषे अहंपनैके ज्ञानकी न्याई । इस ज्ञान की बाधकरिफे ब्रह्मसँ अभिन्न आत्माविषै जब ज्ञान होवै । तब इदं अपरोक्षब्रह्मज्ञान पूर्ण होवै है ।

* २२ प्रश्न:-विचार सो क्या है ?

उत्तर:—(१ विचारका स्वरूप)

आत्मा औ अनात्माकूं भिन्नकरिके जानना । सो विचार है ।

* २३ प्रश्न:-यह विचार किससँ होवै है ?

उत्तर:—(२ विचारका हेतु)

यह विचार। ईश्वर । वेद । गुरु श्री श्यामा
प्रन्तकरण । इन २२व्यासीकी कृपासे होयेंगे ॥

* २४ प्रश्न - इस विचारसे क्या होयेंगे ?

उत्तर:—(विचारका फल)

इस विचारसे दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान होयेंगे ॥

* २५ प्रश्न.—यह विचार कब पूर्ण होयेंगे ?

उत्तर:—(४ विचारकी अवधि)

॥ २२ ॥

१ सद्गुरुआदिकज्ञानसामग्रीकी प्राप्ति ईश्वरकृपा है ॥

२ शास्त्रधर्मके धारणकी शक्ति वेदकृपा है ।

३ शास्त्र श्री स्वप्ननुभवके अनुधार वचार्थ उपदेशका
करमा गुरुकृपा है ॥ श्री

४ शास्त्रगुरुके वचनअनुसार साधनोंका सपादम करना
अपने अन्तःकरणकी कृपा है ।

यह विचार दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानके भये पूर्ण होवैहै ॥

* २६ प्रश्न:—विचार किसका करना ?

उत्तर:—(५ विचारका विषय)

१ मैं कौन हूँ ? २ ब्रह्म कौन है ? औ
३ प्रपंच क्या है ? इन तीनवस्तुनका विचार
करना ॥

* २७ प्रश्न:—इन तीनवस्तुनका साधारणरूप क्या ?

उत्तर:—

१—२ “ मैं औ ब्रह्म ” सो चैतन्य है । अरु

३ २३प्रपंच सो जड है ॥

* २८ प्रश्न:—चैतन्य सो क्या है ?

उत्तर:—

(१) जो ज्ञानरूप है । औ

॥ २३ ॥ समष्टिव्यष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणदेह औ ि

अवस्था अरु धर्म । प्रपंच कहिये है ॥

(०) सर्वघटादिकप्रपञ्चकुं जानताहैं । श्री

(३) जिसकु अन्य मनइन्द्रियआदिक
कोहैं जानि सकने नदीं ।

मो पैमन्य है ।

७ - ६ प्रश्न - जइ मा क्या है ?

उत्तर:-

(१) जो आपहु न जानै । श्री

(०) हमरेहु चीन जानै

७

पनै जा १४ अग्रान श्री निनके कार्य ११ भूत
११ भानिकपदार्थ । मो जइ है ।

॥ १४ ॥ ' मही जानताहूँ ' ऐसी ११११११ है
आवाजविचंगरागिनिवाद्या अनादिमवहृत् अज्ञान
पदार्थ है

॥ १२ ॥ अ वागादिइरंभम् ॥

४

॥ १६ ॥ मूलमह कार्य विद्यमहोशदिह वा
मो उक्त है ।

* ३० प्रश्न:-ऊपर कहे तीनवस्तुके विचारका किसरीतिसँ उपयोग है ?

उत्तर:- (६ विचारका उपयोग)

१ " तत्त्वमसि " महावाक्यमें स्थित " त्वं " पद
औ " तत् " पदका वाच्यार्थ जो २७ जीव
औ २८ ईश्वर । तिनकी उपाधिरूप जो
२९ प्रपंच । तिसकूँ जेवरीनँ सर्पकी न्याई
औ ठाँठमें पुरुषकी न्याई औ मरुभूमिमें
मृगजलकी न्याई । विचारकरि मिथ्या जानि
के त्याग करना । यह प्रपंचके विचार
का उपयोग है ।

॥ २७ ॥ चिदाभासयुक्त अंतःकरणसहित कूटस्थ-
चैतन्य । सो जीव है ।

॥ २८ ॥ चिदाभासयुक्त मायासहित ब्रह्मवैतन्य ।
सो ईश्वर है ।

॥ २९ ॥ समष्टि औ अष्टिरूप तीनशरीर । पंचकोश
तीन अवस्थायादिकनामरूप । प्रपंच कहिये हैं ।

(१०) सामान्यचैतन्य औ विशेषचैतन्य ।

(११) “ त्व ” पद औ “ तन् ” पदका
वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थ अरु दोनूँके
लक्ष्यअर्थकी एकता ।

(१२) हानीके कर्म की निवृत्ति ।

(१३) सत्तजानभूमिका ।

(१४) जीवन्मुक्ति औ विदेहमुक्ति ।

(१५) धोधुतिपदलिङ्गसंग्रहः ।

(१६) वेदांतप्रमेय ।

ये तिन १९प्रक्रियाके नाम हैं ।

इति श्रीविचारचन्द्रोदये उपोद्धातवर्णन-
नामिका प्रथमकला समाप्ता ॥ १ ॥

■ ३२ ■

१ प्रपञ्चका विचार प्रथम द्वितीय पष्ठ द्वादश औ
त्रयोदशकी प्रक्रियाविधैं किये हैं । औ

“प्रपंचसहित मैं कौन हूं” याका विचार
तृतीय चतुर्थ औ पंचम प्रक्रियाविपै किया
है । औ

शरमात्मा कौन है ? याका विचार दशम
प्रक्रियाविपै किया है । औ

ब्रह्म-आत्मा दोनोंके स्वरूपका विचार
सप्तम अष्टम नवम एकादश औ चतुर्दशवीं
प्रक्रियाविपै किया है । औ

प्रपंच औ ब्रह्मआत्माके स्वरूपका विचार
पंचदशवीं प्रक्रियाविपै किया है ।

सर्वप्रक्रियाका “तत्” “त्वं” पदार्थका शोधन
औ तिनकी एकताका निश्चय प्रयोजन है ।

॥ अथ द्वितीयकलाप्रारम्भः ॥ २ ॥

॥ प्रपंचारोपापवाद ॥

॥ मनहर छन्द ॥

प्रपंचारोपापवाद करि निष्पन्न वस्तु
ब्रह्मजानिके अवस्तु-मायादिक भानिये ॥
यस्य माया सम्बन्ध न जीवईशभेद निना
पट् ने अनादि तामे ब्रह्मानंत भानिये ॥
वस्तुमैं अवस्तु कर कथन आरोप ॥
अवस्तु वस्तुकथन अपवाद भानिये ॥
गुरुके प्रवाद यह युक्ति जानि पीतांबर ।
॥ न त नमका रज आरज निज जानिये ॥२॥

॥ ३३ ॥ अर्थ — वस्तु बाधि वस्तुव्यय अपवाद
निवृत्ति ॥

॥ ३४ ॥ अर्थ — हे अरज कटिरे विवर्ती
॥ ३५ ॥ अर्थ — हे अरज कटिरे विवर्ती

द्वितीयकला] ॥ प्रपंचारोपापवाद ॥ २ ॥ २१

* ३३ प्रश्नः—शुद्धब्रह्मविषै प्रपंचका ^{३५}आरोप कैसे हुवा है ?

उत्तरः—अनादिशुद्धब्रह्मकेविषै ^{३६}अनादि-
^{३७}कल्पितप्रकृतिहै । तिस प्रकृतिका ब्रह्मके साथि
अनादिकल्पिततादात्म्यसंबंध है कहिये कल्पित-
भेदसहित वास्तवअभेदरूप संबध है ॥

सो प्रकृति १ माया औ २ अविद्या औ ३ तमः-

॥ ३५ ॥ ब्रह्मरूप वस्तुविषै अज्ञानतत्कार्यरूप
अवस्तुका कथन आरोप है । याहीकूँ अध्यारोपवी
कहैं हैं ॥

॥ ३६ ॥ उत्पत्तिरहित वस्तु । स्वरूपसँ, अनादि
है ॥ ऐसी शुद्धब्रह्म । प्रकृति । तिनका संबंध । ईश्वर ।
शिव औ तिनका भेद । ये पद हैं । अरु प्रवाहरूपसँ
पंच बी अनादि है ॥

॥ ३७ ॥ जो होवै, नहीं औ स्वप्नपदार्थ की न्यांई
रांतिसें भासे सो कल्पित है ।

प्रधानप्रकृतिरूपकरि विभागकू पावती है । तिनमें

१ जो * शुद्धसत्त्वगुणयुक्त । सो माया है । औ

२ जो * मलिनसत्त्वगुणयुक्त सो अविद्या है । औ

३ जो तमोगुणकी मुख्यताकरि युक्त है । सो तम प्रधानप्रकृति है ।

१ मायाविद्यै जो ब्रह्मका प्रतिबिम्ब है । सो अधिष्ठान(ब्रह्म)औ * मायासहित जगत्कर्त्ता सर्वज्ञईश्वर कहिये है ॥ औ

२ अविद्याविद्यै जो ब्रह्मका प्रतिबिम्ब है । सो अधिष्ठान (कूटस्थ)औ अविद्यासहित भोक्ता अक्षयज्ञजीव कहिये है ॥

१ सो ईश्वर औ जीव बी अनादिकल्पित है ॥

तिनमें ईश्वरकी उपाधि माया एक है औ

* आपत्तिकव्यापक है । तिसर्तें ईश्वर बी एक है औ व्यापक है ॥ औ

॥३८॥क्षत्रिय औ शुद्धरूप मंत्रीनसँ ब्राह्मण राजाकी न्यांई जो रजतमसँ दवै नहीं । किन्तु रजतमकूँ आप दवावै । ऐसा सत्त्वगुण । शुद्धसत्त्वगुण है ॥

॥ ३९ ॥ जो रजतमकूँ दवावै नहीं । किंतु शुद्धरूप दोनूँ राजकुमारनसँ ब्राह्मणरूप एकमंत्री की न्यांई, रजतमसँ आप दवै । ऐसा सत्त्वगुण । मलिनसत्त्वगुण है ॥

॥ ४० ॥ इहां मायाशब्दकरि माया औ तमःप्रधान प्रकृति । इन दोनूँ ईश्वर की उपाधिनका ग्रहणहै तिनमें १ मायाउपाधिकूँ लेके ईश्वर । कुलात्त की न्यांई

जगत्का निमित्तकारण है । औ

२ तमःप्रधानप्रकृतिकूँ लेके ईश्वर । सृष्टिकाकी न्यांई जगत्का उपादानकारण है ॥

॥४१॥ जो किसीकी अपेक्षासँ व्यापक होवे औ किसीकी अपेक्षासँ परिच्छिन्न होवै । सो आपेक्षिक-व्यापक कहियेहै ॥ जैसें गृह जो है । सो घटादिककी अपेक्षासँ व्यापक है औ आसकी अपेक्षासँ

२ जायकी उपाधि अविद्या नाना है श्री
परिच्छिन्न हैं । तिसमें जीव भी नाना है श्री
परिच्छिन्न है ॥

तिन जीवईश्वरका अनादिकल्पितभेद है ॥

१ सृष्टिसे पूर्व सो जीवनकी उपाधि अविद्या ।
जीवनके कर्मसहितहीं मायाविषै लीन होयके
रहताहै । सो माया सुषुप्तिविष अविद्याकी
न्य ६ व्रणमें भिन्न प्रतात नाम सिद्ध होवे
नहीं । याने सृष्टि न पहिले सजातीय विजानीय
स्वगतभेदरहित एकहीं अदिनाय स्वविदानन्द
रूप ब्रह्म था ॥

परिच्छिन्न है । यान अविच्छिन्न्यापक है ॥ तैसं माया
सो गुण आद्यादिककी अपवाधे व्यापक कहिय अधिकार
बना है या ब्रह्मका अवेश में परिच्छिन्न है । याने
अविच्छिन्न्यापक है ॥

- २ तिस ब्रह्मकूँ सृष्टिके आरंभविषै जीवनके परिपक्व भये कर्मरूप निमित्तसँ “मैं एकहूँ सो बहुरूप होऊँ” ऐसी इच्छा भयी ॥
- ३ तिस इच्छासँ ब्रह्मकी उपाधि मायाविषै लोभ होयके क्रमतँ आकाश वायु तेज जल औ पृथ्वी । ये पंचमहाभूत उत्पन्न भये ॥
- ४ तिनका पंचीकरण नहीं भयाथा । तब अपंचीकृत थे । तिनतँ समष्टिव्यष्टिरूप सूक्ष्मसृष्टि होयके । पीछे ईश्वरकी इच्छासँ जब तिनका पंचीकरण भया । तब सो भूत पंचीकृत भये । तिनतँ समष्टिव्यष्टिरूप स्थूलसृष्टि भयी ॥
- तिनमें समष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणप्रपंचका अभिमानी जीवकी दृष्टिसँ ईश्वर है औ व्यष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणप्रपंचका अभिमानी जीव है ।

तिनमें ईश्वर सर्वज्ञ होनैतें नित्यमुक्त है श्री
जीय अल्पज्ञ होनैतें बद्ध है ॥

इसरीतिसैं शुद्धयूष्यविषै प्रपंचका आरोप
हुयाहै ॥

* ३४ प्रश्न—यह आरोप सत्य है वा मिथ्या है ?

उत्तर:—यह आरोप जेयरीविषै स्वर्णकीन्याई
औ मात्सीविषै स्वप्नकी न्याई औ दर्पणविषै
नगरके प्रतिबिम्बकी न्याई मिथ्या है ।

* ३५ प्रश्न:—यह आरोप किससैं होयै ?

उत्तर:—यह आरोप अज्ञानसैं होयै ॥

* ३६ प्रश्न:—यह आरोप कयका श्री फादेकू'
हुया होयैगा । यह विचार कैसैं होयै ?

उत्तर:—जैसे कोई पुरुषके घख ऊपर नैलका
दाग लग्याहोयै । तिसकू' जानिके ताकू' मिटावनै
का उपाय कियाचादिये श्री " यह दाग कयका

काहेकूँ लग्याहोवैगा?" इस विचारका कछु प्रयोजन नहीं है ॥ तैसँ "यह प्रपंचका आरोप कबका औ काहेकूँ हुवा होवैगा?" इस विचारका बी कछु प्रयोजन नहीं है । परंतु इसकी निवृत्तिका उपाय करना योग्य है ॥

* ३७ प्रश्न:—इस सर्वआरोपकी निवृत्ति किस रीतिसँ होवैहै ?

उत्तर:—

- १ ब्रह्मज्ञानसँ माया औ अविद्या की निवृत्ति होवैहै ।
- २ तिसतँ कार्यसहित प्रकृतिकी निवृत्ति होवै है ।
- ३ तिसतँ प्रकृति औ ब्रह्मके संबंधकी निवृत्ति होवैहै ।
- ४ तिसतँ जीवभाव औ ईश्वरभावकी निवृत्ति होवैहै ।

५ तिसरें जीवईश्वरके भेदकी निवृत्ति होयै ?

६ तिसरें यधकी निवृत्ति होयके मोक्ष निवृत्ति होयै ? ॥

हमरीतिस एककालविपद्ही सर्व आरोपकी निवृत्तिरूप ४२ अपवाद होयै ?

● ३८ प्रश्न — यह ब्रह्मज्ञान किससँ होयै ?

उत्तर — यह ब्रह्मज्ञान आगे कहियेगा जो विचार । तिससँ होयै ॥

इति आधिचारचन्द्रोदये प्रपञ्चारोपापवाद वर्णननामिका द्वितीयकला समाप्ता ॥ २ ॥

॥४२॥ यधका श्री साके ज्ञानका बाधकरिके भुज्ज रूप अधिष्ठानक अवशेषकी न्याई । प्रपञ्च श्री त के ज्ञानका बाधकरिके अधिष्ठानरूप शुद्धब्रह्मका जो अवशेष । सो अपवाद है ॥

॥ अथ तृतीयकलाप्रारंभः ॥ ३ ॥

॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥

॥ मनहर छन्द ॥

द्रष्टा तीनदेहको मैं स्थूल सूक्ष्म कारण ये
तीनदेह दृश्य अरु अनात्मा मानियो ॥

पंचाकृतपंचभूतके पंचासतत्त्वको
स्थूलदेह एह भोगआयतन मानियो ॥

अपंचाकृतभूतके सप्तदशतत्त्वको
सूक्ष्मदेह होइ भोगसाधन प्रमानियो ॥

अज्ञान कारणदेह घटवत दृश्य एह ।

पातांबर द्रष्टा आप जानि दृश्य मानियो

* ३६ प्रश्न:-पहिली प्रक्रिया । “ देह तीनका मैं
द्रष्टा हूं ” ॥ सो देह तीन कौनसे हैं ?

उत्तर:—स्थूलदेह सूक्ष्मदेह और कारण-
देह । ये देह तीन हैं

॥ १ ॥ स्थूल देह का मैं द्रष्टा हूँ ॥

* ४० प्रश्न:—स्थूलदेह सो क्या है ?

उत्तर:—पञ्चीकृतपञ्चमहाभूतके पञ्चो-
त्पन्नका स्थूलदेह है ।

* ४१ प्रश्न:—पञ्चमहाभूत कौनसे हैं ?

उत्तर:—आकाश, वायु, तेज, जल और
पृथ्वी । ये पञ्चमहाभूत हैं ।

* ४२ प्रश्न—पञ्चमहाभूत के पञ्चीसतत्त्व नाम
पदार्थ कौनसे हैं ?

उत्तर:—

१-५ आकाश के पाँचतत्त्व:—काम^१, क्रोध
शोक, मोह^२ और मय ।

॥ ४३ ॥ कोई भी ओलकी दृष्टि । काम कहिये है ॥

॥ ४४ ॥ अहंताममत्तारूप बुद्धि । मो मोह है ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ३१

६-१० वायुके पांचतत्त्वः—चलन, वलन,
धावन, प्रसारण और आकुंचन ॥

११-१५ तेजके पांचतत्त्वः—जुधा, तृणा,
आलस्य, निद्रा, औ कांति ।

१६-२० जलके पांचतत्त्वः—शुक्र कहिये
वीर्य । शोणित नाम रुधिर । लाल ।
मूत्र औ स्वेद कहिये पसीना ।

२१-२५ पृथ्वीके पांचतत्त्वः—अस्थि नाम
हाड, मांस, नाडी, त्वचा औ रोम ।
ये पंचमहाभूतके पचीसतत्त्वनके नाम हैं ।

* ४३ प्रश्नः—पंचीकृतपंचमहाभूत कौनकं कहिये?

उत्तरः—जिन भूतनका पंचीकरण भया
है तिनभूतनकूं पंचीकृतपंचमहाभूतकहिये हैं ।

॥ ४५ ॥ प्रथम अपंचीकृतपञ्चमहाभूत थे । तिनका
ईश्वरकी इच्छासे स्थूलसृष्टिद्वारा जीवनके भोगार्थ
परस्परमिलापरूप पंचीकरण भया है ।

४४ प्रश्न - पचीकरण सो क्या है ?

उत्तर — पचभूतनमेंसे एकएक के दोदोभाग किये । सो भये दश ॥ तिनमेंसे पहिले पाचभाग रहनेदिये औ दूसरेपाचभागनमेंसे एकएकभागके च्यारीच्यारीभाग किय ॥ सो च्यारीच्यारी भाग । शाकाशादिकभूतनका आपआपका जो अर्धअर्धमुख्यभाग रहनदिया है । तिसविधै न मिलायके आपआपमें मिश्र च्यारीभूतनके अर्धअर्धभागनविधै मिले । सो पचीकरण कहियेहै ॥

४५ प्रश्न पाचभूतनका परस्परमिलाप किन रीतिले है ?

उत्तर — दृष्टान्तः—जैसे कोईक पाचमिश्र । आयमलाआदिक एकएक फलकु इकट्ठे खानैलागे तब सर्व आपआपके फलके दोदोभाग करीरे - अर्धअर्धभाग आपने वास्ने रखे औ अवशेष

कला] देह तीनका मैं दृष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ३३

अर्धअर्धभागमैंलें च्यारीच्यारीभाग करीके च्यारी-
मित्रनकूँ विभाग करोदेवैं । तब पाँचफलनका
परस्परमिलाप होवैहै । तैसैं

सिद्धान्तः—

१ आकाशके दोभाग किये । तिनमैंलें

(१) एकभाग रहनैदिया । औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।

तिनमैंलें आकाशविषै न मिले । औ

[१] एक वायुविषै मिले ।

[२] एक तेजविषै मिले ।

[३] एक जलविषै मिले । अरु

[४] एक पृथ्वीविषै मिले ॥

२ ऐसैहीं वायुके दोभाग किये । तिनमैंलें

१) एक भाग रहनैदिया । औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।

तिनमेंसँ वायुविपै न मिले । औ

[१] एक आकाशविपै मिले ।

[२] एक तेजविपै मिले ।

[३] एक जलविपै मिले । अरु

[४] एक पृथ्वीविपै मिले ।

३ ऐसैहोँ तेजके दोभाग किये : तिनमेंसँ

(१) एकभाग रहनैदिया । औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।

निर्गमसँ तेजविपै न मिले । औ

[१] एक आकाशविपै मिले ।

[२] एक वायुविपै मिले ।

[३] एक जलविपै मिले । अरु

[४] एक पृथ्वीविपै मिले ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥३॥ ३५

४ ऐसैहीं जलके दोभाग किये । तिनमेंसँ

(१) एकभाग रहनैदिया । औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।

तिनमेंसँ जलविषै न मिले । औ

[१] एक आकाशविषै मिले ।

[२] एक वायुविषै मिले ।

[३] एक तेजविषै मिले । अरु

[४] एक पृथ्वीविषै मिले ।

५ ऐसैहीं पृथ्वीके दो भाग किये । तिनमेंसँ

(१) एकभाग रहनैदिया । औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।

तिनमेंसँ पृथ्वीविषै न मिले । औ

[१] एक आकाशविषै मिले ।

[२] एक वायुविषै मिले ।

[३] एक तेजविषै मिले । अरु

[४] एक जलविषै मिले ।

इमतीतिसें पचीसतत्त्व होयके पञ्चमहाभूतन
का परम्परामिलाप हे ॥

* ४६ प्रश्न - पञ्चमहाभूतनके पचीसतत्त्व कैसें भये?

उत्तर:—सर्वभूतनका आपना एकएक मुख्य
भागहू आ अमुख्यव्यापीभाग अस्यभूतनके मिलेहू॥
तिसन एकएकभूतन पांचपांचतत्त्व भये । सो
सर्वमिलिक पचीसतत्त्व भये ॥

* ४७ प्रश्न स्थूलदेहविषये ये पचांचतत्त्व कैसें
रहतेह ?

उत्तर —

१-५ ४९ आकाशक पांचतत्त्व:- (१) शोक

(२) काम (३) माध (४) मोह आ
(५) भय । तिनमय

। ४९ । बाह्य आ विषय गिर कर हू य उदर कटिदश
न च काश य आकाशक पांचतत्त्व है । तिनमें

कला] ॥ देह तीन का मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ३७

१ शिरोदेशगतआकाश आकाशका मुख्यभाग है
अनाहतशब्दका आश्रय होनैतै ॥

२ कंठदेशगतआकाश वायुका भाग है । श्वासप्रश्वासका
आश्रय होनैतै ॥

३ हृदयदेशगतआकाश तेजका भाग है । पित्तका आश्रय
होनैतै ॥

४ उदरदेशगतआकाश जलका भाग है । पान किये
जलका आश्रय होनैतै ॥

५ कटिदेशगतआकाश पृथ्वीका भाग है । गन्धका
आश्रय होनैतै ॥

इसरीतिसे कामक्रोधादिक स्थूलदेहके तत्त्व नहीं । किन्तु
लिंगदेहके धर्म हैं श्री अन्यग्रन्थनकी रीतिसँ तो कामादिक
लिंगदेहके मुख्यधर्म हैं श्री स्थूलदेहविषे घटमें जलकी
सीतलताके आघेशकी न्यांई इनका आघेश होवैहै । यातै
स्थूलदेहके श्री गौणधर्म कहियेहैं ॥

इसरीतिसे पचीसतरय होयके पञ्चमहाभूतन
कापरम्परामिलाप है ॥

* ४६ प्रश्न - पञ्चमहाभूतनके पचीसतरय कैसे भये?

उत्तर:—सर्वभूतनका आपका एकएक मुख्य
भागहै और अमुख्यछारीभाग अन्यभूतनके मिलेहै ॥
तिसरें एकएकभूतके पाचपाचतरय भये । सो
सर्वमिलिके पचीसतरय भये ॥

* ४७ प्रश्न - स्थूलदेहविषय ये पचीसतरय कैसे
रहतेहैं ?

उत्तर.—

१-५ ४१ आकाशके पांचतरय:— (१) शोक

(२) काम (३) मोघ (४) मोह और
(५) भय । निनममै

॥ ४६ ॥ कोई प्रश्नविषय शिर कठ हृदय उदर कटिदेश-
गत आकाश । ये आकाशके पांचतरय हैं । निनमै

मिल्या है। काहेतैं कामनारूप वृत्ति चंचल है औ वायु बी चंचल है। यातैं यह वायुका भाग है।

(३) क्रोध:-आकाशविषै तेजका भाग मिल्या है। काहेतैं क्रोध आवता है तब शरीर तपायमान होता है औ तेज बी तपायमान है। यातैं यह तेजका भाग है ॥

(४) मोह:-आकाशविषै जलका भाग मिल्या है। काहेतैं मोह पुत्रादिकविषै प्रसरता है औ जलका बिंदु बी प्रसरता है। यातैं यह जलका भाग है।

(५) भय:-आकाशविषै पृथ्वीका भाग मिल्या है। काहेतैं भय होवै तब शरीर जड़ कहिये अक्रिय होयके रहता है औ पृथ्वी बी जड़तास्वभाववाली है। यातैं यह पृथ्वीका भाग है।

(१) ४३शोकः—आकाश का मुख्यभाग है।
 काहेतैं शोक उत्पन्न होवै तब शरीर शून्य
 जैसा होवैहे औ आकाश बी शून्य जैसा
 हे । यातैं यह आकाशका मुख्यभागहै ॥

(२) ४८कामः—आकाशविषे वायुका भाग

॥ ४७ ॥ यद्यपि वायुआदिकभूतनके भागनविषे बी
 आकाशके अन्वयवासीभागनमैवै एकएकभाग मिल्ल
 है । सो आकाशका मुख्यभाग नहीं कहियेहै । तथापि
 शोक बी आकाशकी अतिशयतुल्यता है । यातैं शोक
 आकाशका मुख्यभाग है ।

कद्विक लोग बी आकाशकी ग्यार्है पदार्थकी प्राप्ति
 करि अपूर्ण हानैतैं आकाशका मुख्यभाग कहाहै ॥

इस रीतिपैं अग्य भूतनविषे बी जानि सेना ।

॥ ४८ ॥ पिताके तुल्य पुत्रकी ग्यार्है । काम । वायुके
 तुल्य है । यातैं वायुका भाग है । ऐसैं अग्यतत्त्वनविषे
 बी जानि सेना ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ४१

(६) चलनः-वायुविषै जलका भाग मिला है । काहेतें चलन नाम चलनैका है औ जल वी चलता है । यातें यह जलका भाग है ।

(१०) आकुंचनः-वायुविषै पृथ्वीका भाग मिला है । काहेतें आकुंचन नाम संकोच करनेका है औ पृथ्वी वी संकोचकृं पायी हुयी है । यातें यह पृथ्वीका भाग है ।

११-१५ तेजके पांचतत्त्वः-[११] निद्रा [१२] तृषा [१३] जुधा [१४] कांति और [१५] आलस्य । तिनमेंसैं

(११) निद्राः-तेजविषै आकाशका भाग मिला है । काहेतें निद्रा आवे तत्र शरीर शून्य होवै है औ आकाश वी शून्यतावाला है । यातें यह आकाशका भाग है ।

६-१० वायुके पांचतत्त्वः-[६] प्रसारण
 [७] धावन [८] घलन [९] चलन श्री
 [१०] आकुंचन । निरर्थक

(६) प्रसारणः-वायुविशै आकाशका भाग
 मिला है । काहेतै प्रसारण नाम प्रसरनैका
 है श्री आकाश की प्रसरणा हुआ है । यातै
 यह आकाशका भाग है ॥

(७) धावनः-वायुका मुख्यभाग है ।
 काहेतै धावन नाम दौड़नैका श्री वायु
 की दौड़ता है । यातै यह वायुका मुख्य-
 भाग है ।

(८) घलनः-वायुविशै तेजका भाग मिला
 है । काहेतै घलन नाम अन्नके पालनैका
 है । श्री तेजका प्रकाश की घलता है ।
 यातै यह तेजका भाग है ॥

१६-२० जलके पांचतत्त्व:- [१६]

ल [१७] स्वेद [१८] मूत्र [१९]

॥ औ (२०) शोणित । तिनमेंसें

(१६) लाल:-जलविषै आकाशका भाग
मिल्याहै । काहेतैं लाल ऊंचा नीचा होवै
है आकाश वी ऊंचा नीचा है । यातैं
यह आकाशका भाग है ।

(१७) स्वेद:-जलविषै वायुका भाग मिल्या-
है । काहेतैं पसीना श्रम करनेसैं होवैहै
औ वायु वी पंखाआदिकसैं श्रम करनेसैं
होवैहै । यातैं यह वायु का भाग है ।

(१८) मूत्र:-जलविषै तेजका भाग मिल्याहै ।
काहेतैं घर्म है औ तेज वी घर्म है ।
यातैं यह तेजका भाग है ।

(१) शुक्र:-जलका मुख्यभाग है ! काहेतैं

- (१२) तृपाः तेजविषै वायुका भाग मिल्या-
 है । काटेतैं तृपा कंठकूं शोषण करैहै औ
 वायु की गीलेवखादिककूं सुकायैहै ।
 यातैं यह वायुका भाग है ।
- (१३) क्षुधाः—तेजका मुख्य भाग है । काटे
 तैं क्षुधा लगे तब जो ग्राही सो मरम होयैहै
 औ अग्निविषै की जो डारै सो मरम
 होयैहै । यातैं यह तेजका मुख्यभाग है ।
- (१४) कानिः—तेजविषै जलका भाग मिल्या-
 है । काटेतैं कानि धूपसैं घटैहै औ जल की
 धूपसैं घटैहै । यातैं यह जलका भाग है ।
- (१५) आलस्यः—तेजविषै पृथ्वीका भाग
 मिल्याहै । काटेतैं आलस्य आधे तब शरीर
 जइ होय जायैहै और पृथ्वी की जइस्यमा-
 णाली है । यातैं यह पृथ्वीका भाग है ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ४५

(२२) त्वचाः—पृथ्वीविषै वायुका भाग मिला है । काहेतै त्वचासँ शीत उष्ण कठिन कोमल स्पर्शकी मालुम होवै है औ वायु वी स्पर्शगुणवाला है । यातँ यह वायुका भाग है ।

(२३) नाडीः—पृथ्वीविषै तेजका भाग मिला है काहेतै नाडीसँ तापकी परीक्षा होवै है । औ तेज वी तापरूप है । यातँ यह तेजका भाग है ॥

(२४) मांसः—पृथ्वीविषै जलका भाग मिला है । काहेतै मांस गीला है औ जल वी गीला है । यातँ यह जलका भाग है ।

(२५) अस्थिः—पृथ्वीका मुख्य भाग है ।

॥ ५० ॥ नख औ दंतनका हड्डीमें अन्तर्भाव है ॥

शुक्ल श्वेतवर्ण है औ गर्भका हेतु है औ
जल भी श्वेतवर्ण है औ वृत्तका हेतु है।
याने यह जलका मुख्य भाग है।

(२) शोणिनः जलधिवै पृथ्वीका भाग
मिल्याहै। काहेतैं शोणित रक्तवर्ण है औ
पृथ्वी भी कटिक रक्त है। याने यह
पृथ्वीका भाग है।

२१-२५ पृथ्वीके पांचमत्यः-[२१]

रोम [२२] त्वचा [२३] नाडी [२४]
मांस। और [२५] अस्थि। तिनमर्त

(२२) रोमः-पृथ्वीवै आकाशका भाग
मिल्याहै। काहेतैं रोम शून्य है। काट-
नैसँ पोड़ा होयै नहीं औ आकाश भी
शून्य है। याने यह आकाशका भाग है।

॥४६॥ कण औ मस्तकके बाह्य। ताका रोम नाम
शरीरके बाह्यवै अन्तर्भाव है।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ४५

(२२) त्वचाः—पृथ्वीविषै वायुका भाग मिला है । काहेतैं त्वचासँ शीत उष्ण कठिन कोमल स्पर्शकी मालुम होवै है औ वायु वी स्पर्शगुणवाला है । यातैं यह वायुका भाग है ।

(२३) नाडीः—पृथ्वीविषै तेजका भाग मिला है काहेतैं नाडीसँ तापकी परीक्षा होवै है । औ तेज वी तापरूप है । यातैं यह तेजका भाग है ॥

(२४) मांसः—पृथ्वीविषै जलका भाग मिला है । काहेतैं मांस गीला है औ जल वी गीला है । यातैं यह जलका भाग है ।

(२५) अस्थिः—पृथ्वीका मुख्य भाग है ।

॥ ५० ॥ नख औ दंतनका हड्डीमें अंतर्भाव है ॥

काहेनै कठिनहै औ पीतवर्ण है औ पृथ्वी
 भी कठिन है अरु कर्हाक पीतरगवाल
 है । यानै यह पृथ्वी का मुख्यभाग है

इसरीनिसँ स्थूलदेहविषै पचीस तत्त्व रहते

* ४७ प्रश्न - पचीसतत्त्व जाननैका क्या प्रयोजन है
 उद्धार :-

१ पचीसतत्त्व मैं नहीं । औ

२ ये पचीसतत्त्व मेरे नहीं ।

३ ये पचीसतत्त्व पचीसतत्त्वमहाभूतके हैं ॥

४ इन पचीसतत्त्वनका जाननैद्वारा मैं इस
 घटद्रष्टाकी न्याई इनते न्यारा हूँ ।

एसा निश्चय करना । यह पचीसतत्त्व जाननै
 का प्रयोजन है ॥

* ४८ प्रश्न - पचीसतत्त्व मैं नहीं औ ये मेरे नहीं
 सो किसरीतिसँ जानना ?

उत्तर: —

१-५ आकाशके पांचतत्त्वविषै:—

- १ [१] शोक होवै तब बी मैं जानताहूँ । औ
[२] शोक न होवै तब तिसके अभावकूँ
बी मैं जानताहूँ ।

यातैं

- [१] यह शोक मैं नहीं । औ
[२] यह शोक मेरा नहीं ।
[३] यह शोक आकाशका है ।
[४] मैं इस शोकका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूँ ॥

ऐसैं शोक मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ।

- २ [१] काम होवै तब बी मैं जानताहूँ । औ
[२] काम न होवै तब तिसके ५१अभावकूँ
बी मैं जानताहूँ

॥ ५१ ॥

१ कार्यकी उत्पत्तिसैं पूर्व जो अभाव । सो प्रागभाव है

पानै

[१] यह काम मैं नहीं । औ

[२] यह काम मेरा नहीं ।

[३] यह काम आकाशका है ।

[४] मैं इस कामका जाननेद्वारा प्रष्टा घट-
द्रष्टा की म्याई इसने न्यारा ह ॥

ऐसे काम मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ।

३[१] अध होयै नय वी मैं जानताहँ । औ

[२] अध न होयै तब निसके अभावकूँ वो
मैं जानता हँ ।

पानै

१ नाशके अनन्तर जो अभाव सो प्रध्व साभाव है ॥

२ न नशाने ओ अभाव सो अत्यन्ताभाव है ॥

४ अन्यवस्तुमें जो अन्यवस्तुका भेद । सो अन्यो-
न्याभाव है ॥

हमरीतिमें अभाव प्यारीप्रकारका है ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ४६

[१] यह क्रोध मैं नहीं । औ

[२] यह क्रोध मेरा नहीं ।

[३] यह क्रोध आकाशका है ।

[४] मैं इस क्रोधका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं क्रोध मैं नहीं औ मेरा नहीं यह जानना ॥

४ [१] मोह होवै तव वी मैं जानताहूं । औ

[२] मोह न होवै तव तिसके अभावकुं वी
मैं जानता हूं ।

यातैं

[१] यह मोह मैं नहीं । औ

[२] यह मोह मेरा नहीं ।

[३] यह मोह आकाशका है ।

[४] मैं इस मोहका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं मोह मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

- ५ [१] भय होवे तब भी मैं जानता हूँ । औ
 [२] भय न होवे तब तिसके अभावकू भी
 मैं जानता हूँ ।

यातें

- [१] यह भय मैं नहीं । औ
 [२] यह भय मेरा नहीं ।
 [३] यह भय आकाशका है ।
 [४] मैं उस भयका जाननेद्वारा द्रष्टा घट
 द्रष्टाकी न्यार हसतें न्यारा हूँ ॥
 ऐसे भय मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

६-१० वायुके पावतस्वविषे -

- ६ [१] प्रसारण -शरीर प्रसरै तब भी मैं
 जानता हूँ । औ
 [२] शरीर न प्रसरै तब तिस प्रसरणेके
 अभावकू भी मैं जानता हूँ ।

यातें

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ५१

[१] यह प्रसारण मैं नहीं । औ

[२] यह प्रसारण मेरा नहीं ।

[३] यह प्रसारण वायुका है ।

[४] मैं इस प्रसारणका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याईं इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं प्रसारण मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

७ [१] धावनः—शरीर दौडै तव वी मैं
जानताहूं । औ

[२] शरीर न दौडै तव तिस दौडनैके
अभावकूं वी मैं जानताहूं । यातैं

[१] यह धावन मैं नहीं । औ

[२] यह धावन मेरा नहीं ।

[३] यह धावन वायुका है ।

[४] मैं इस धावनका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याईं इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं धावन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

८ [१] चलनः—शरीर-चलै तव धी में
जानताह । श्री

[२] शरीर न चलै तव तिस चलनैके अभा
वकू धी में जानताह ।

यातै

[१] यह चलन मैं नहीं । श्री

[२] यह चलन मेरा नहीं ।

[३] यह चलन पायुका है ।

[४] मैं इस चलनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
दणकी न्याई इमनै न्यारा ह ॥

तेसै चलन मे नहीं श्री मेरा नहीं । यह जानना ॥

९ [१] चलन —शरीर चलै तव धी में
जानताह । श्री

[२] शरीर न चलै तव तिस चलनैके
अभावकू धी में जानताह ।

यानै

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ५३

[१] यह चलन मैं नहीं । औ

[२] यह चलन मेरा नहीं ।

[३] यह चलन वायुका है ।

[४] मैं इस चलन का जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं चलन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

१० [१] आकुंचनः — शरीर संकोचकूं पावै
तव बी मैं जानताहूं । औ

[२] शरीर संकोचकूं न पावै तव तिसके
अभावकूं बी मैं जानताहूं । यातैं

[१] यह आकुंचन मैं नहीं । औ

[२] यह आकुंचन मेरा नहीं ।

[३] यह आकुंचन वायुका है ।

[४] मैं इस आकुंचनका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

सैं आकुंचन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

११-१५ तेजके पांचतन्वविषेः—

- ११ [१] निद्रा होवै तिसकुं धी में जानताहू । औ
 [२] निद्रा न होवै तब तिसके अभावकुं
 धी में जानताहू ।

धार्ति

- [१] यह निद्रा म नहीं । औ
 [२] यह निद्रा मेरी नहीं ।
 [३] यह निद्रा तेजकी है ।
 [४] मैं इस निद्राका जाननैद्वारा द्रष्टा
 घटद्रष्टाकी न्यारे इसनै न्यारा हूँ ॥

ऐसं निद्रा में नहीं औ मरी नहीं । यह जानता ॥

- १२ [१] तृषा लगी तिसकुं धी में जानताहू । औ
 [२] तृषा न होवै तब तिसके अभावकुं
 धी में जानताहू ।

धार्ति

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ५५

[१] यह तृषा मैं नहीं । औ

[२] यह तृषा मेरी नहीं ।

[३] यह तृषा तेजकी है ।

[४] मैं इस तृषा का जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं तृषा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

१३ [१] जुधा लगै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

[२] जुधा न होवै तव तिसके अभावकूं
वी मैं जानताहूं ।

यातैं

[१] यह जुधा मैं नहीं । औ

[२] यह जुधा मेरी नहीं ।

[३] यह जुधा तेजकी है ।

[४] मैं इस जुधा का जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं जुधा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

१४ [१] कांति होवे तिसक् यी में जानता
ह । औ

[२] काति न होवै तय तिसके अभावक् यी
में जानताह ।

याति

[१] यह काति मं नहीं । औ

[२] यह काति मेरी महा ।

[३] यह कानि तेजकी है ।

[४] म इस कानिका जाननैहारा द्रष्टा घट
द्रष्टाकी न्याई इसत न्यारा ॥

ऐभ काति म नहा औ मेरी नहीं । यह जानता ॥

१५ [१] आलस्य होवै तिसक् यी में
जानताह । औ

[-] आलस्य न होवै तय तिसके अभावक्
यी में जानताह ।

यान

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ५७

[१] यह आलस्य मैं नहीं । औ

[२] यह आलस्य मेरा नहीं ।

[३] यह आलस्य तेजका है ।

[४] मैं इस आलस्यका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यांई इसतै' न्यारा हूँ ॥

ऐसैं आलस्य मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

१६-२० जलके पांचतत्त्वविषै:-

१६ [२] लाल गिरे तिसकू' वी मैं जानताहूँ । औ

[२] लाल न गिरे तव तिसके अभावकू'
वो मैं जानताहूँ । यातै

[१] यह लाल मैं नहीं । औ

[२] यह लाल मेरा नहीं ।

[३] यह लाल जलका है ।

[४] मैं इस लालका जाननैहारा द्रष्टा घट
द्रष्टाकी न्यांई इसतै' न्यारा हूँ ॥

ऐसैं लाल मैं नहीं औ मेरा नहीं ! यह जानना ॥

१७ [१] स्वेद नाम प्रसीमा होवै तिसकुं वो
म जानताहूँ । औ

[२] प्रसीमा न होवै तय तिसके अमाध-
कुं वो में जानताहूँ ।

याते

[१] यह प्रसीमा में नहीं । औ

[२] यह प्रसीमा मेरा नहीं ।

[३] यह प्रसीमा जलका है ।

[४] मैं इस प्रसीमेका जाननेद्वारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूँ ।

एतैं स्वेद में नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ।

१८ [१] मूत्र आवै तिसकुं म जानताहूँ । औ

[२] मूत्र न आवै तय तिसके अमाध
कुं वो में जानताहूँ ।

याते

[१] यह मूत्र मैं नहीं । औ

[२] यह मूत्र मेरा नहीं ।

[३] यह मूत्र जलका है ।

[४] मैं इस मूत्रका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूँ ।

ऐसैं मूत्र मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ।

१६ [१] शुक्र कहिये वीर्य शरीरविषै बढै
तिसकूं वी मैं जानताहूँ । औ

[२] वीर्य घटै तब तिसके अभावकूं वी
मैं जानताहूँ । यातैं

[१] यह वीर्य मैं नहीं । औ

[२] यह वीर्य मेरा नहीं ।

[३] यह वीर्य जलका है ।

[४] मैं इस वीर्यका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूँ ।

ऐसैं शुक्र मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

- १० [१] शोणित नाम रुधिर शरीरविषै घटै ।
 तिसकू की मैं जानताहूँ । औ
 [२] रुधिर घटै तब तिसके अभावकूँ की
 मैं जानताहूँ ।

याते

- [१] यह रुधिर मैं नहीं । औ
 [२] यह रुधिर मेरा नहीं ।
 [३] यह रुधिर जलका है ।
 [४] मैं इस रुधिरका जाननैद्वारा द्रष्टा
 घटद्रष्टाकी स्थाई इतने न्यासाहूँ ।

ऐसे शोणित मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानता ।

२१-२५ पृथ्वीके वायुतत्त्वविषयः—

- २१ [१] राम बहुत होवै तिनकूँ की मैं
 जानताहूँ । औ
 [२] रोम कमती होवै तब तिनके कमती
 पनैकूँ की मैं जानताहूँ । याते

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ६१

[१] ये रोम मैं नहीं । औ

[२] ये रोम मेरे नहीं ।

[३] ये रोम पृथिवीके हैं ।

[४] मैं इन रोमनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याईं इनतैं न्यारा हूँ ।

ऐसैं रोम मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

२२ [१] त्वचा स्पर्शकृं ग्रहण करै तिसकृं वी
मैं जानताहूँ । औ

[२] स्पर्शकृं ग्रहण न करै तब तिसके
अभावकृं वी मैं जानताहूँ । यातैं

[१] यह त्वचा मैं नहीं । औ

[२] यह त्वचा मेरी नहीं ।

[३] यह त्वचा पृथिवीकी है ।

[४] मैं इस त्वचाका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याईं इसतैं न्यारा हूँ ।

ऐसैं त्वचा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ।

२३ [१] नाड़ी गले तिनक की मैं जानताहूँ

[२] नाड़ी न चले नय तिनके अभा
की मैं जानताहूँ । यों

[१] ये नाड़ी मैं नहीं । थी

[२] ये नाड़ी मेरी नहीं ।

[३] ये नाड़ी पृथ्वीकी है ।

[४] मैं इन नाडीनका जाननेद्वारा हूँ ।
प्रकाशकी न्याय इनने न्याय ।

येस नाड़ी मैं नहीं थी मेरी नहीं । यह जान

२४ [१] मांस बड़े तिमर की मैं जानताहूँ

[२] मांस बड़े नय तिमरके अभा
की मैं जानताहूँ ।

यों

[१] यह मांस मैं नहीं । थी

[२] यह मांस मेरा नहीं ।

[३] यह मांस पृथ्वीका है ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥३॥ ६३

[४] मैं इस मांसका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं मांस मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ।

२५ [१] अस्थि नाम हाड सूधे होवैं तिसकू'
वी मैं जानताहूं । औ

[२] हाड सूधे न होवैं तब तिनके अभाव-
कू' वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) ये हाड मैं नहीं । औ

(२) ये हाड मेरे नहीं ।

(३) ये हाड पृथ्वीके हैं ।

(४) मैं इन हाडनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाको न्याई इनतैं न्याराहूं ।

ऐसैं हाड मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ।

इसरीतिसैं पचीसतत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह
जानना ।

* ४६ प्रश्न - "पचीसतरव में नहीं औ मेरे नहीं"

इस जाननेमें क्या निश्चय भया ?

उत्तर - स्फुल्लदेह औ निसरे धर्म १ नाम ।

२ जाति । ३ आश्रम । ४ वर्ण । ५ सग्रह ।
६ परिमाण । ७ जन्ममरण । इत्यादिक बी में
नहीं औ मेरे नहीं । यह निश्चय भया ।

* ४७ प्रश्न - १ नाम में नहीं औ मेरा नहीं । यह
कैसे जानना ?

उत्तर -

- १ जन्मके प्रथम नाम नहीं था । औ
- २ जन्मके अगतर नाम कल्पित है । औ
- ३ शरीरके भिन्नभिन्न अगनधिये पिछाट किये
नाम मिलता नहीं

गामि

- १ यह नाम में नहीं । औ
- २ यह नाम मरा नहीं ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ६५

३ यह नाम स्थूलदेहविषै कल्पित है ।

४ मैं इस नामका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाको
न्याई इसतै न्यारा हूं ॥

एसैं नाम मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

* ५१ प्रश्नः—२ जाति जो वर्ण सो मैं नहीं औ
मेरी नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तरः—

१ ब्राह्मणादिकजाति स्थूलदेहका धर्म है । सूक्ष्म-
देह औ आत्माका धर्म नहीं । काहेतै लिङ्गदेहऔ
आत्मा तौ जो पूर्वदेहविषै होवै सोई इस वर्त्त-
मानदेहविषै औ भावीदेहविषै रहताहै औ जाति
तौ जो पूर्वदेहविषै थी सो इस देहविषै नहीं है
औ जो इस देहविषै है सो आगिलेदेहविषै रहेगी
नहीं । यानै जातिस्थूलदेहकाही धर्म है ।
लिङ्गदेहका औ आत्माका धर्म नहीं है औ

२ शरीरके अद्भुतविषयै चित्कारिके देखिये तो स्थूल
देहविषयै जाति मिलै नही ।

मानै

१ यह जानि में नहीं । औ

२ यह जाति मेरी नहीं ।

३ यह जाति स्थूलदेहविषयै आरोपित है ।

४ में इस जातिका जाननैद्वारा ब्रह्म घटब्रह्मकी
न्याईं इसनै न्याय है ॥

ऐसे जानि मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥*

१ ५० प्रश्न - ३ आश्रम मैं नहीं औ मेरा नहीं ।
यह कैसा जानना ?

उत्तर —

१ ब्रह्मचारी गृहस्थ धानप्रस्थ औ सन्यासी । ये
चवारीआश्रम भिन्नभिन्नकर्म करानैके लिये
आराग्यगिके स्थूलदेहविषयै मानै ॥

२ सो ही मनुष्यमात्रविषयै सम्भवतै नहीं । यानै

१ ये आश्रम मैं नहीं । औ

२ ये आश्रम मेरे नहीं ।

३ ये आश्रम स्थूलदेहविषै आरोपित हैं ।

४ मैं इन आश्रमनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूँ ॥

ऐसैं आश्रम मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

* ५३ प्रश्न:—४ वर्ण नाम रंग मैं नहीं औ मेरे
नहीं । यह कैसैं जानना ?

उत्तर:—

१ गौर श्याम रक्त पीत इत्यादि जो रङ्ग हैं ।

सो स्थूलदेहविषै प्रत्यक्ष देखियेहैं । औ

२ सो स्थूलदेह मैं नहीं । यातैं

१ ये रङ्ग मैं नहीं । औ

२ ये रङ्ग मेरे नहीं ।

३ ये रङ्ग स्थूलदेहके हैं ।

* ४ मैं इन रङ्गोंका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी
न्यांई इनतैं न्यारा हूँ ॥

ऐसें वर्ण में नहीं श्री मेरे नहीं । यह जानना ।
 ५ ५४ प्रश्न - ५ सम्बन्ध में नहीं श्री मेरे नहीं ।
 यह कैसे जानना ?

उत्तर:—

- १ पितापुत्र गुरुशिष्य स्त्रीपुरुष स्वामित्वेषक ।
 इत्यादिसम्बन्ध स्थूलदेहके परस्पर प्रसिद्ध
 मिथ्या मानेहैं ।
- २ प्रियार क्रियेस मिलने नहीं । श्री
- ३ स स्थूलदेहसे न्याय असङ्ग है ।

माने

- १ स सम्बन्ध में नहीं । श्री
- २ स सम्बन्ध में नहीं ।
- ३ ये सम्बन्ध स्थूलदेहविषे आरोपित हैं ।
- ४ स इन सम्बन्धोंका जाननेद्वारा द्रष्टा घटद्रष्टा
 की न्याय इनके न्याय है ॥
- एवं सम्बन्ध में नहीं श्री मेरे नहीं । यह जानना ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥३॥ ६६

* ५५ प्रश्न:-६ परिणाम जो आकार सो मैं नहीं
औ मेरे नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तर:—

- १ लंबाटूँका जाड़ापतला टेढासूधा । इत्यादि-
आकार वी प्रसिद्ध स्थूलदेहविषै देखियेहैं । औ
- २ मैं स्थूलदेहतै न्यारा निराकार हूँ ।

यातै

- १ ये आकार मैं नहीं । औ
- २ ये आकार मेरे नहीं ।
- ३ ये आकार स्थूलदेहके हैं ।
- ४ मैं इन आकारोंका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टा
की न्याई इनतै न्यारा हूँ ॥

ऐसैं परिणाम मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

* ५६ प्रश्न:-७ मैं जन्ममरणवान नहीं औ मेरे
कूँ जन्ममरण होवै नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तर —

१) आत्माका जन्म मानिये तो आत्मा अनित्य होवेगा । मो धार्ता मोमांसकस आदिलेके परलोकयादी जे आस्तिक हैं । तिनक' हए नहीं । काहेन जो आत्मा उत्पत्तियान् होवै तो नाशयान् वी होवेगा । ताँ

१) पूर्वजन्मविषे नहीं किं कर्मसँ सुख-
दुःखका भोग । औ

२) इसजन्मविषे हिये कर्मका भोगसँ १
बिना नाश ।

ये दोदूषण होवेगे । याँ कर्मयादीके मतसँ आत्माक जे कर्ताभोक्ता मानिये । ती वी जन्ममरणरहितहीं मानना होवेगा । औ

२) आत्माके जन्मका कोई कारण वी सम्भव नहीं । काहेन आत्माका जो कारण होवै सो आत्माने भिन्नहीं चाहिये औ

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥३॥ ७१

(१) आत्मानै' भिन्न तौ अनात्मा नामरूप हैं । सो तौ आत्माविषै रज्जुसर्पकी न्याई कल्पित हैं । यातैं कारण बनै नहीं । औ

(२) ब्रह्म तौ घटाकाशके स्वरूप महाकाश-
को न्याई आत्माका स्वरूपही है ।
तिसतैं भिन्न नहीं । यातैं सो कारण
बनै नहीं ।

तातैं आत्माका जन्म नहीं ॥ औ
३ जातैं जन्म नहीं तातैं आत्माका मरण बी
नहीं । औ

४ जातैं आत्माविषै जन्ममरणका अभाव है ।
तातैं जायतैं [जन्म] । अस्ति (प्रगटता)
वर्धते (वृद्धि) । विपरिणमते (विपरिणाम)
अपक्षीयते (अपक्षय) । नश्यति (मरण) ।
इन षट्‌विकारनतैं बी आत्मा रहित है ॥

यामें

- १ म जन्ममरणवान् नहीं । श्री
- २ मेरेक जन्ममरण होयै नहीं ।
- ३ य जन्ममरण स्थूलदेहक कर्मस होयै ।
- ४ म इन जन्ममरणोंका जाननैद्वारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इनतै न्यारा ह ॥
- पस म जन्ममरणवान् नहीं श्री मेरेक जन्म-
मरण होयै नहीं । यह जानना ॥
- * ५७ प्रश्न - पंचमहाभूतनकी निवृत्तिविषै दृष्टात

क्या है ?

उत्तर:—दृष्टात:—जैसें कोरेक भूत
लग्याहोय । सो धान रुकूँनाम पारधीक बुलायके।
हुमरू वजायके। लवणादि पाच वस्तु मिलायके।
तिसका बलिदान देव । भूतकी निवृत्ति करैहै ।
सिद्धान्त —तैसें आकाशादिक पंचमहाभूत-
शरीररूप होयके जीवक लगैह । तिसकी निवृत्ति

कला] ॥ देह तीन का मैं द्रष्टा हूँ ॥३॥ ७३

स्ते ब्रह्मनिष्ठगुरुरूप ध्याननके १२विधिपूर्वक
रण जायके । वेदशास्त्ररूप डमरू कहिये डाक
जायके ऊपर कहे जो पचीसतत्त्व तिनमें सैं पांच-
गंचतत्त्वरूप बलिदान एकएकभूतकूं आप-
आपका भाग अर्पण करिके । मैं इन पचीसतत्त्वनका

॥ २२ ॥ विवेकादिशुभगुणसहित मोक्षकी इच्छा-
वाला अधिकारी

१ हाथमें भेटा लेके गुरुके शरण होयके ।

२ साष्टांग नमस्कार करीके ।

३ “ हे भगवन् ! मेरेकूं ब्रह्मविद्याका उपदेश करो ,”
ऐसैं कहिके “ बंध किसकूं कहिये ? मोक्ष किसकूं
कहिये ? अविद्या किसकूं कहिये ? औ विद्या
किसकूं कहिये ? इत्यादिप्रश्न करे । औ

४ गुरुकी प्रसन्नता वास्ते तन मन धन वाणी अर्पण-
वरिके सेवा करै ।

यह ब्रह्मविद्याके प्रहरणका विधि है ।

द्रष्टा ह । इसरीतिसँ निश्चय करनेतँ स
 पञ्चमहाभूतनकी २२ अत्यन्तनिवृत्ति होतै।
 इसरीतिसँ स्थूलदेहका मैं द्रष्टा ह ।

॥ २ ॥ सूक्ष्मदेहका मैं द्रष्टा ह ।

● ५० प्रश्न—सूक्ष्मदेह सो क्या है ?

उत्तर—अपघीयतपञ्चमहाभूतके सतरातस्य
 गण सूक्ष्मदेह है ।

● ५१ प्रश्न—सूक्ष्मदेहके सतरातस्य कौनसे हैं ?

उत्तर:—१-५ पाचज्ञानइन्द्रिय । ६-१०

पाचकर्मइन्द्रिय । ११-१५ पाचप्राण । १६ मर
 भी १७ बुद्धि । ये सतरातस्य हैं ।

● ५२ प्रश्न—२४ पाचज्ञानइन्द्रिय कौनसे हैं ?

उत्तर—१-५ आश्र त्वचा श्रुति जिह्वा
 ओ घ्राण । ये पाचज्ञानइन्द्रिय हैं ।

॥ २३ ॥ पाछे जगै नहीं । यह अत्यन्तनिवृत्ति है ।

॥ २४ ॥ इनके साधन इन्द्रिय ज्ञानइन्द्रिय है ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३॥ ७५

* ६१ प्रश्न:-१५ पांच कर्म इन्द्रिय कौनसे हैं ?

उत्तर:-६-१० वाक् पाणि पाद उपस्थ
ओ गुद । ये पंच कर्म इन्द्रिय हैं ।

* ६२ प्रश्न:-पांच प्राण कौनसे हैं ॥

उत्तर:-११-१५ प्राण अपान समान
उदान ओ व्यान । ये पांच प्राण हैं ॥

* ६३ प्रश्न-मन कौनकूँ कहिये ?

उत्तर:-१६ संकल्प विकल्प रूप जो वृत्ति ।
ताकूँ मन कहिये ॥

* ६४ प्रश्न:-बुद्धि किसकूँ कहिये ?

उत्तर:-१७ निश्चयरूप जो वृत्ति । ताकूँ
बुद्धि कहिये ॥

* ६५ प्रश्न:-अपंचीकृत पंच महाभूत कौनकूँ कहिये ?

॥ २५ ॥ कर्मके साधन इन्द्रिय कर्म इन्द्रिय हैं ।

उत्तर — जिन भूतनका पूर्व कही रीतिमें परीक्षण न गया होवे ।

१ तिन भूतनक अपचीकृतपचमहाभूत कहैं

२ तिनहोक् सूक्ष्मभूत कहैं । औ

३ तिनहोक् तन्मात्रा की कहैं ॥

* ६६ प्रश्न — अपचीकृतपचमहाभूतनके सतर तथ्य कैसे जानने ?

उत्तर:—

पांचजानइन्द्रिय औ पांचकर्मइन्द्रियावधैः;

१ आकाशके २२ सत्त्वगुणका भाग ओघ है

२ आकाशके २ जोगुण का भाग चारू है ॥

[१] धात्रइन्द्रिय शब्दक सुनना है । औ

[२] वाक्इन्द्रिय शब्दक बोलना है ॥

[३] श्रोत्रज्ञानइन्द्रिय है । औ

॥ २६ ॥ सप्तपञ्चनमें सत्त्व रज तम । य तीन

गुण भरत हैं ॥

कला] ॥ देह तीनको मैं दृष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ७७

[२] वाक् कर्मइन्द्रिय है ।

इन दोनों की मित्रता है ॥

३ वायुके सत्वगुणका भाग त्वचा है । औ

४ वायुके रजोगुणका भाग पाणि है ।

[१] त्वचाइन्द्रिय स्पर्शकं ग्रहण करैहै । औ

[२] हस्तइन्द्रिय तिसका निर्वाह करैहै ॥

[१] त्वचा ज्ञानेन्द्रिय है । औ

[२] हस्त कर्मेन्द्रिय है ॥

इन दोनों की मित्रता है ।

५ तेजके सत्वगुणका भाग चक्षु है ॥

६ तेजके रजोगुणका भाग पाद है ॥

[१] चक्षुइन्द्रिय रूपका ग्रहण करैहै । औ

[२] पादइन्द्रिय तहां गमन करैहै ॥

[१] चक्षु ज्ञानेन्द्रिय है । औ

[२] पाद कर्मेन्द्रिय है ॥

इन दोनों की मित्रता है ॥

७ जलके सत्वगुणका भाग जिह्वा है ।

८ जलके रजोगुणका भाग उपस्थ है ॥

[१] जिह्वाइन्द्रिय रसका ग्रहण करेहै । श्री

[२] उपस्थइन्द्रिय रसका त्याग करेहै ॥

[१] जिह्वा [रसना] ज्ञानेन्द्रिय है । श्री

[२] उपस्थ कर्मेन्द्रिय है ॥

इन दोनू की मिश्रता है ॥

९ पृथिवीके सत्वगुणका भाग घ्राण है ।

१० पृथिवीके रजोगुणका भाग गुद है ॥

[१] घ्राणइन्द्रिय गंधका ग्रहण करेहै । श्री

[२] गुदइन्द्रिय गंधका त्याग करेहै ॥

[१] घ्राण ज्ञानेन्द्रिय है । श्री

[२] गुद [पायु] कर्मेन्द्रिय है ॥

इन दोनू की मिश्रता है ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ७६

पांचप्राण औ मनबुद्धिविषै:-

११-१५ इन पांचभूतनके रजोगुणके भाग
मिलिके पांचप्राण भयेहैं । औ

१६-१७ इन पांचभूतनके सत्त्वगुणके भाग
मिलिके अंतःकरण भयाहै ॥ यहहीं अंतःकरण
मन औ बुद्धिरूप है ॥ इहां चित्त औ अहं-
कारका मन औ बुद्धिविषै अंतर्भाव है ।

ऐसैं अपंचीकृतपंचमहाभूतनके कार्य । सतरा-
तत्त्व जानै ॥

* ६७ प्रश्न:-सतरातत्त्वके समजनैका क्या
फल है ?

उत्तर:-सतरातत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं ।
ये अपंचीकृतपंचमहाभूतनके हैं । यह सतरा-
तत्त्वनके समजनैका फल है ।

* ६८ प्रश्नः—ये सतरातस्य मैं नहीं औ मेरे नहीं ।

यह किस कारणसे जानना ?

उत्तरः—इन सतरातस्यनका मैं जाननेद्वारा
हूँ ॥ जो जिसकुं जानै सो तिसते न्यारा होये-
दे । यह नियम है ॥ इस कारणसे ये सतरातस्य
मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

* ६९ प्रश्नः—इयविषे दृष्टांत क्या समझना ?

उत्तरः—

दृष्टान्तः—जैसे [१] नृप्यशालाविषे स्थित
[२] दीपक । [३] राजा । [४] प्रधान ।
[५] अनुचर [६] नायिका [७] धाजंघ्री
औ [८] अन्य सभाके लोक [९] ये दंढेदोष
तब भी प्रकाशित औ [१०] तब उठि जाये तब
शन्यगृहकुं भी प्रकाशित ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ =१

सिद्धान्तः—तैत्तिरीय [१] स्थूलदेहरूप नृत्य-
शालाविषै [२] सान्नीरूप जो मैं दीपकहूँ ।
[३] सो चिदाभासरूप राजा औ [४] मनरूप
प्रधान औ [५] पांचप्राणरूप अनुचर औ [६] -
बुद्धिरूप नायिका औ [७] दशइन्द्रियरूप
वाजंत्री औ [८] शब्दादिपंचविषयरूप सभाके
लोक [९] ये जाग्रत्स्वप्नसमयविषै होवैं तब
इनकं प्रकाशताहूँ औ [१०] सुषुप्तिसमयविषै ये
नहोवैं तब तिनके अभावकुं वा मैं प्रकाशताहूँ ।

इसविषै यह उक्त दृष्टांत समजना ॥

* ७० प्रश्नः—सौ कैसैं समजना ?

उत्तरः—

१ जाग्रत्स्वप्नस्थितिषै इन्द्रिय-औ अंतःकरण
दोनोंकी सहायतासैं मैं प्रकाशताहूँ कहिये

२ स्वप्न अवस्थाविषे इन्द्रियनसैं विना केवल
अंत करणकी सहायतासैं में प्रकाशनाहैं । औ

३ सुषुप्ति अवस्थाविषे इन्द्रिय और अंत.करण
दोनों की सहायता विना केवल मेंही प्रकाशना
ह । ऐसैं समजना ॥

* ७१ प्रश्न — इसविषे और दृष्टांत क्या है ?

उत्तर :- दृष्टान्त :- जैसे [१] पांचछिद्र
वाले घटके भीतर पात्र तैल औ घर्तिसहित
दीपक जलता है । [२] सो दीपक । पात्र तैल
घसी घटके भीतरके अवयव औ घटके छिद्रनकं
प्रकाशताहुआ घटके बाहिर छिद्रनके सम्मुख मत्तमें
धरे जो घीणा । पुष्पनका शुद्ध । मणि । रस
पात्र औ । अक्षरकी सीसी । तिन सर्वक् छिद्र-
द्वारा प्रकाशतीहै औ [३] सूर्यरूपसे सारे
ब्रह्माण्डक् प्रकाशता है औ [४] महातेजमय
सामान्यरूपमें सर्वव्यापी है ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ८३

सिद्धांतः— तैसैं [१] पांचज्ञानेंद्रियरूप छिद्रवाले स्थूलदेहरूप घटके भीतर हृदयकमल-रूप पात्र है । तामें मनरूप तेल है औ बुद्धिरूप वत्ती है । तापर आरूढ़ आत्मारूप दीपक है ॥ [२] सो हृदयरूप पात्रकूं औ मनरूप तैलकूं औ बुद्धिरूप वत्तीकूं औ देहके भीतरके अवयव-वनकूं औ इंद्रियरूप छिद्रनकूं प्रकाशता (जानता) हुआ । इंद्रियनसैं संबंधवाले शब्दादिकविषयन-कूं वी इंद्रियद्वारा प्रकाशताहै औ [३] ईश्वर-रूपसैं ब्रह्मांडादिसर्वबाह्यप्रपंचकूं प्रकाशताहै औ [४] सामान्यचैतन्य ब्रह्मरूपसैं सर्वव्यापी है ॥ यह इसविषै और १७ दृष्टांत है ॥

॥ १७ ॥ इहां और यज्ञशालाका दृष्टान्त है । सो आगे ७ वी कलाविषै उपद्रष्टारूप आत्माके विशेषणके प्रसंगमें कहियेगा ॥

* ७० प्रश्न — येसैं कहनैसैं क्या निर्णय भया ?

उत्तर — ये कहे जे सतरातरय ये मैं नहों
औ ये मेरे नहों । ये पयमहाभूतनके हैं ॥ मैं
इसका जाननैदारा इष्टा घटदृष्टाकी म्याई इसैं
म्यारा हू । यह निर्णय भया ।

* ७१ — सतरातरय मैं नहों औ मेरे नहों । तो
किसरीतिसैं समझना ?

उत्तर —

॥ १-५ ॥ पाँचज्ञानइद्रियविधिः—

१ श्रेष्ठ —

[१] शब्दक् सुनै नितक् बी मैं जानताहू ।

[२] न सुनै तय नित सुननैके अभाषक्
बी मैं जानताहू ।

यानै यह श्रोत्र मैं नहों औ मेरा नहों । यह
आराधका है । मैं इसका जाननैदारा इष्टा
घटदृष्टाकी म्याई इसैं न्याग हू ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ८५

२ त्वचा:—

[१] स्पर्शकूं ग्रहण करै तिसकूं वी मैं
जानताहूं । औ

[२] ग्रहण न करै तव तिस ग्रहण करनेके
अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं यह त्वचा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह
वायुकी है । मैं इसका जाननेहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ।

३ चक्षु:—

[१] रूपकूं देखै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

[२] न देखै तव तिस देखनेके अभावकूं
वी मैं जानताहूं ।

यातैं यह चक्षु मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह
तेजका है । मैं इसका जाननेहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ।

४ जिह्वा:—

[१] रसका स्वाद लेवै तिसकूँ यी मैं
जानताहूँ । औ

[२] स्वाद न लेवै तब तिस स्वाद लेनेके
अभावकूँ यी मैं जानताहूँ ।

यातें यह जिह्वा में नह्यौ मेरी नह्यौ ।
यह जलकी है । मैं इसका जाननैद्वारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यारै इसत न्यारा हूँ ।

५ घ्राण:—

[१] गंधका ग्रहण करै तिसकूँ यी मैं
जानताहूँ । औ

[२] न ग्रहण करै तब निम्न ग्रहण करनेके
अभावकूँ यी मैं जानताहूँ ।

यान यह घ्राण में नह्यौ मेरा नह्यौ । यह
पृथ्वीका है । मैं इसका जाननैद्वारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यारै इसत न्यारा हूँ ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ८७

॥ ६-१० ॥ पांचकर्महंद्रियविषैः—

६ वाक्ः—(वाचा)

[१] बोलै तिसकुं वी मैं जानताहूँ । औ

[२] न बोलै तब तिसके अभावकुं वी मैं
जानताहूँ ।

यातैं यह वाक् मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह
आकाशकी है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूँ ।

६ पाणिः—(हस्त)

[१] लेना देना करैं तिसकुं वी मैं जानता-
हूँ । औ

[२] न करैं तब तिसके अभावकुं वी मैं
जानताहूँ ।

यातैं ये हस्त मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये वायुके
हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई
इनतैं न्यारा हूँ ।

॥ पादः—

[१] चलें तिसकू थी मैं जानताहू । औ

[२] न चलैं तब तिसके अमायकू' थी मैं
जानताहू ।

यातें ये पाद मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये लेजके
हैं । मैं इनका जाननैद्वारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई
इतर्त न्यारा ह ।

६ उपस्थः—

[१] रस (मूत्र और वीर्य) का त्याग
करै तिसकू थी मैं जानताहू । औ

[२] त्याग न करै तब तिसके अमायकू
थो मैं जानताहू ।

यातें यह उपस्थ मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह
जलका है । मैं इसका जाननैद्वारा द्रष्टा घट
द्रष्टाकी न्याई इसनै न्यारा ह ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ८६

१० गुदः—

[१] मलका त्याग करै तब तिसकूँ वी मैं जानताहूँ । औ

[२] त्याग न करै तब तिसके अभावकूँ वी मैं जानताहूँ ।

यातैं यह गुद मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह पृथ्वीका है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूँ ।

॥११-१७॥ प्राण औ अन्नःकरणविषै

११-१५ पाँचप्राणः—

[१] क्रिया करै तिसकूँ वी मैं जानताहूँ । औ

[२] क्रिया न करै तब क्रियाके अभावकूँ वी मैं जानताहूँ ।

यातैं ये प्राण मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये मिले-हुये पंचमहाभूतनके हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इनतैं न्यारा हूँ ।

१६ मनः—

[१] सकल्पविकल्प करै तिसक् मैं जानताहूँ

[२] रुकल्पविकल्प न करै तब तिसके
अभावकूँ यी मैं जानताहूँ ।

यातैं यह मन मैं नहीं श्री मेरा नहीं । यह मिले
हुये पञ्चमहाभूतनका है । मैं इसका जाननैद्वारा
द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याईं इसतैं न्यारा हूँ ।

१७ बुद्धि.—

[१] निश्चय करै तिसक् यी मैं जानताहूँ श्री

[२] निश्चय न करै तब तिसके अभावकूँ
यी मैं जानताहूँ ।

यातैं यह बुद्धि मैं नहीं श्री मेरी नहीं । यह मिले
हुये पञ्चमहाभूतनकी है । मैं इसका जाननैद्वारा
द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याईं इसतैं न्यारा हूँ ॥

इस सीनिसैं ये सतरानत्य मैं नहीं श्री मेरे
नहीं । यह समजना ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥३॥ ६१

* ७४ प्रश्न:-ऐसे कह नैसैं क्या भया ?

उत्तर:-

- १ लिंगदेह औ तिसके धर्म पुण्यपापका कर्त्ता-
पना । तिनके फलसुखदुःखका भोक्तापना । औ
- २ इसलोक परलोकविषै गमनआगमन । औ
- ३ वैराग्यशमदमादिसात्विकीवृत्तियां औ राग-
द्वेषहर्षादिराजसीवृत्तियां । औ निद्राआलस्य-
प्रमादादितामसीवृत्तियां ।
- ४ तैसैं जुधातृषा अंधपनाआदि अरु मंदपना
औ पटुपना

इत्यादिक मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह निश्चय
भया ॥

* ७५ प्रश्न:-पुण्यपापका कर्त्ता औ तिनके फल-
सुखदुःखका भोक्ता मैं कैसे नहीं औ कर्त्ता-
पना भोक्तापना मेरा धर्म नहीं । यह कैसे
जानना ?

उत्तर:—१ जो वस्तु विकारी होवे सो जियावान् होनैतैं कर्त्ता कहिये है ॥ मैं निर्विकार दृढस्थ होनैतैं जियाका आश्रय नहीं । यानैं पुण्यपापरूप जियाका मैं कर्त्ता नहीं । औ जो कर्त्ता नहीं सो भोक्ता बी होवे नहीं । यानैं ये अतःकरणके धर्म ह । मेरे नहीं । मैं इनका जाननैद्वारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याईं इनतैं न्यारा ह । ऐसैं जानना ॥

॥ ७६ प्रश्न —इसलोक परलोकजिपै गमनआगमन मेरे धर्म नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तर —२ अतःकरण (लिंगदेह) परिच्छिन्न है । तिसका प्रारब्धकर्मके चलसैं गमन-आगमन सभवे है औ मैं आकाशकी न्याईं व्यापक ह । यानैं मेरे धर्म गमनआगमन नहीं । ऐसैं जानना ॥

बला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥३॥ ६३

* ७७ प्रश्नः—सात्विकी राजसी औ तामसी
वृत्तियां मैं नहीं औ मेरा धर्म नहीं । यह
कैसे जानना ?

उत्तरः—३ दृष्टांत जैस [१] किसी
महलमें बैठे [२] राजाके विनोदग्रर्थ [३]
कोई कारीगर [४] कारंजा बनावैहै । [५]
तिस कारंजेकी कलके खोलनैसैं जलकी तीन-
धारा निकसतीयां हैं । [६] तिन तीनधाराके
भीतर प्रवाहरूपसैं अनंतधारा निकसतीयां
हैं । [७] जब सो कल बंध करिये तब तीन-
धारा बंध होयके अकेला राजाहीं बाकी रहता
है ।

सिद्धांतः—तैसैं [१] स्थूलशरीररूप
महलमें [२] अधिष्ठान कूटस्थरूपकरि स्थित
परमात्मारूप राजा है । तिसके विनोदग्रर्थ

[३] माया [अज्ञान] रूप कारागरनै [४]
 अंतःकरणरूप कारंजा किया है । [५] जाग्रत
 स्वप्नविषै तिसकी प्रारब्धरूप कलके खोलनैसँ
 तीनगुणके प्रयाहरूप तीनधारा निकसतीयां हैं ।
 [६] तिन तीनधाराके भीतरसँ अभाणित-
 वृत्तियां उठतीयां हैं । [७] औ सुषुप्तिविषै
 प्रारब्धकर्मरूप कलके बंध हुयेतँ तिन वृत्तियांके
 भावअभावका प्रकाशक आनंदस्वरूप केवलपर-
 माल्मारूप राजा याकी रहताह ॥ सोई मैं
 हूँ । यार्त ये सात्विकी राजसी तामसी वृत्तियां
 मैं नहों औ मेरी नहों । ये अंतःकरणकी हैं ।
 मैं इनका जाननैद्वारा द्रष्टा घट्टद्रष्टाकी न्याई
 इनतँ न्यारा हूँ । ऐसैं जानना ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ६५

* ७८ प्रश्न:-अन्धपनाआदि श्रु मन्दपना औ पटु-
पना मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तर:—४

(१) नेत्रादिकइंद्रिय आपआपके विषयकूं
कछू बी ग्रहण न करै सो तिनका
अन्धपनाआदि है । तिसकूं बी मैं
जानता हूं । औ

(२) विषयकूं स्वल्प ग्रहण करै सो तिनका
मन्दपना है । तिसकूं बी मैं जानता
हूं । औ

(३) विषयकूं स्पष्ट ग्रहण करै सो तिनका
पटुपना है । तिसकूं बी मैं जानता हूँ ।

यातैं ये मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये इंद्रियनके
धर्म हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी
न्याई इतैं न्यारा हूं ॥

इसरीतिसैं सूक्ष्मदेहका मैं द्रष्टा हूं ॥ २ ॥

॥ ३ ॥ कारणशरीरका मैं द्रष्टा हूँ ॥

७६ प्रश्न:-कारणदेह सो क्या है ?

उत्तर:-

१ पुरुष जब सुपुत्तितैं ऊठे तब कहताहै कि
"आज मैं कहूँ बी न जानताभया" २८इसतैं ।
सुपुत्तिविषै अज्ञान है । येना सिद्ध होवे-
हैं । श्री

२ जाग्रत्विषै बी " मैं प्रत्यक्ष जानता नहीं " ^२
श्री 'मेरी मुजक' खबर नहींहै । ' मैं यह नदी
जानताहूँ । ' ' मैं यह नदी जानताहूँ ' इस
अनुभवका विषय अज्ञान है । श्री

॥ २८ ॥ सुपुत्तिहैं उठ्या जो पुरुष । तिसकूँ " मैं
कहूँ बी न जानताभया " येना ज्ञान होवेहै । सो ज्ञान
अनुभवरूप नहीं है । किंतु सुपुत्तिकाकारिण अनुभव
किये अज्ञानको स्मृति है । तिस स्मृतिका विषय
सुपुत्तिकाकारिण अज्ञान है ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥३॥ ६७

३ स्वप्नका कारण वी निद्रारूप अज्ञान है ।

ऐसा जो अज्ञान २६ कारणदेह है ।

* ८७ प्रश्न:-कारणदेह मैं नहीं औ मेरा नहीं ।

यह कैसे जानना ?

उत्तर:-“मैं जानताहूं” औ “ मैं न जानताहूं”
ऐसी जे अंतःकरणकी वृत्तियां हैं । तिनकूं

॥ २६ ॥

१ अज्ञान । स्थूलसूक्ष्मदेहका हेतु है । यातैं इसकूं
कारण कहतैहैं ॥

२ तत्त्वज्ञानसैं इस अज्ञानका दाह होवैहै । यातैं इसकूं
देह कहतैहैं ॥

यह अज्ञान गर्भमंदिरके अन्धकारकी न्यांई ब्रह्मके
आश्रित होयके ब्रह्मकूंही आवरण करताहै ॥

जातअज्ञातवस्तुरूप विषयसहित में जानताहूँ ।
 यानि यह कारणदेह मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह
 १० अज्ञानका है । मैं इसका जाननैद्वारा द्रष्टा घट-
 द्रष्टाकी न्यादे इसतैं न्यारा ॥ । यह देमें
 जानना ॥

इसरीतिसैं कारणदेहका मैं द्रष्टा हू ॥ ३ ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये देहत्रयद्रष्टृ-
 घर्णननामिका तृतीयकला समाप्ता ॥३॥

॥ १० ॥ कारणदेह आप अज्ञान है । तिसकुं
 " अज्ञानका है " मेरी जो कथा । सो जितैं राहुकुंही
 राहुका मस्तक कहतई । तैरे ॥

॥ अथ चतुर्थकलाप्रारंभः ॥ ४ ॥



॥ मैं पंचकोशातीत हूं ॥

॥ मनहर छन्द ॥

पंचकोशातीत मैं हूं अन्न प्राण मनोमय
विज्ञान आनंदमय पंचकोश ६१ नातमा ॥
स्थूलदेह अन्नमय-कोश ६२ लिंगदेह प्राण-
मन रु विज्ञान तीनकोश कहें सातमा ॥
कारण आनंदमय-कोश ये ६३ कारज जड ।
विकारी विनाशी व्यभिचारीहीं अनातमा
अज चित अविकारी नित्य व्यभिचारहीन
पीतांबर अनुभव करता मैं आतमा ॥४॥

* ८१ प्रश्न — पञ्चकोशातीत कहिये क्या ?

उत्तर — पञ्चकोशातीत कहिये पञ्च
कोशान्तर्ग में अतीत नाम स्यारत ह ॥

* ८२ प्रश्न — कोश कहिये क्या है ?

उत्तर:—

१ कोश नाम तलवारके म्यानका । औ

२ धनके भंडारका । औ

३ कोशकार नामक कीड़ेके सुहका है ॥

निनकी स्याई पञ्चकोश आमाऊं आवैंहैं । यान
अनमयादिक वी काश कहायैहैं ॥

* ८३ प्रश्न — पञ्चकोशके नाम क्या हैं ?

॥ ६१ ॥ आत्मा नहीं । अथ यह जा अनारमा है ॥

॥ ६२ ॥ महारमा तिमदेहक प्राण मन अद्विज्ञान
तीनकाशरूप कहैंहैं ॥

॥ ६३ ॥ पञ्चकोश ॥

ला] ॥ मैं पञ्चकोशातीन हूँ ॥ ४ ॥ १०१

उत्तर:—१ अन्नमयकोश । २ प्राणमयकोश ।
३ मनोमयकोश । ४ विज्ञानमयकोश । औ
५ आनन्दमयकोश । ये पांचकोशके नाम हैं ।

* ८४ प्रश्न:—१ अन्नमयकोश सो क्या है ?

उत्तर:—

- १ मातापितानै खाया जो अन्न । तिसतैं भया
जो रजवीर्य । तिसकरि जो माताके उदरविपै
उत्पन्न होताहै ।
 - २ फेर जन्मके अनंतर क्षीरादिकअन्नकरिके जो
वृद्धेकूं पावनाहै ।
 - ३ फेर मरणके अनंतर अन्नमयपृथिवीविपै
लीन होताहै ।
- ऐसा जो स्थूलदेह । सो अन्नमयकोश है ॥
- * ८५ प्रश्न:—अन्नमयकोश कैसा है ?
- उत्तर:—सुखदुःखके अनुभवरूप भोगका
स्थान है ॥

* ८६ प्रश्न—अन्नमयकोशमें मैं न्यारा हूँ। यह कैसे जानना ?

उत्तर:—

१ जन्ममें प्रथम औ मरणमें पीछे अन्नमयकोश (स्थूलशरीर) का अभाव है। यार्तें यह उत्पत्तिनाशवान् होनेमें घटकी न्पाई कार्य है। औ २ में सदा भायरूप हू। तार्तें उत्पत्तिनाशरहित होनेमें इसमें विलक्षण हू।

यार्तें यह अन्नमयकोश में नहीं औ मेरा नहीं। यह स्थूलवेदरूप है। में इसका जाननेद्वारा आत्मा इसमें न्यारा हू ॥ इस रीतिसे अन्नमयकोशमें मैं न्यारा हू। यह जानना ॥

* ८७ प्रश्न—२ प्राणमयकोश सो क्या है ॥

उत्तर.—पाचकर्मइन्द्रियसहित पाच प्राण। सो प्राणमयकोश है ॥

कला] ॥ मैं पञ्चकोशातीत हूँ ॥४॥ १०३

* ८८ प्रश्न:-पांचकर्मइंद्रिय औ पांचप्राण कौनसेहैं?

उत्तर:-पांचकर्मइंद्रिय औ पांचप्राण पूर्व सूक्ष्मदेहकी प्रक्रियाविषे कहेहैं ॥

* ८९ प्रश्न:-पांचप्राणके स्थान औ क्रिया कौनहैं ?

उत्तर:-

१ प्राणवायु:-

[१] हृदयस्थानविषे रहताहै । औ

[२] प्रत्येकदिनरात्रिविषे २१६०० श्वास-
उच्छ्वास लेनैरूपक्रियाकूं करताहै॥

२ अपानवायु:-

[१] गुदस्थानविषे रहता है । औ

[२] मलमूत्रके उत्सर्ग (त्याग) रूप
क्रियाकूं करताहै ॥

३ समानवायु:-

[१] नाभिस्थानविषे रहताहै । औ

- [२] कृपजलकूं रगीचेविषै मालीकी न्याईं
भोजन क्रिये अन्नके रसकूं निहासिके
नाडीद्वारा सर्वशरीरविषै पडुचावनैरूप
क्रियाकू करताहै ॥

४ उदानवायुः—

- [१] कंठस्थानविषै रहताहै श्री
[२] खाएपिए अन्नजलके विभागकूं करता-
है । तथा स्वप्न होचकी आदिकके
विजावनैरूप क्रियाकू करताहै ।

५ अपानवायुः—

- [१] सर्वाङ्गस्थानविषै रहताहै । श्री
[२] सर्वश्रमनकी संधिनके फेरनैरूप
क्रियाकू करताहै ॥

इसरीति १४ पांचप्रमाणके मुख्यस्थान श्री ,
क्रिया है ॥

कला] ॥ मैं पञ्चकोशातीत हूं ॥ ४ ॥ १०५

* ६० प्रश्नः—प्राणादिवायु शरीरविषै क्या करतेहैं?

उत्तरः—प्राणादिवायु

१ सारेशरीरविषै पूर्ण होयके शरीरकूं बल देतेहैं । औ

२ इन्द्रियनकूं आपआपके कार्यविषै प्रवृत्तिरूप क्रियाके साधन होतेहैं ॥

* ६१ प्रश्नः—प्राणमयकोशतैं मैं न्यारा हूं । यह कैसे जानना ?

उत्तरः—

१ निद्राविषै पुरुष सोयाहोवै । तब प्राण जागता-
है । तौ वी कोई स्नेही आवै तिसका सन्मान करता नहीं । औ

२ चोर भूषण लेजावै तिसकूं निषेध करता नहीं ।

जैसे मर मरगमना मरती न्याई जड है । औ

॥ चैतन्यरूप इसमें विलक्षण है । यहाँ यह प्राणमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह स्रग्म्यरूप है ॥ मैं इसका जाननेद्वारा आत्मा नहीं हूँ । इसरीतिमें प्राणमयकोशने मैं न्याता है । यह जानना ॥

* ६२ प्रश्न — मनोमयकोश तो क्या है ?

उत्तर — पाचज्ञानइन्द्रियसहित मन । तो मनोमयकोश है ।

* ६३ प्रश्न — पाचज्ञानइन्द्रिय औ मन कौन है ?

उत्तर — ये पूर्व सूक्ष्मदेहकी प्रक्रियाविधि कहै हैं ॥

* ६४ प्रश्न — मन कैसा है ?

उत्तर — देहविषै अद्विता औ गृहादिकर्मि ममत्तारूप अभिमानरू करताहुया इन्द्रियद्वारा बाहीर गमन करताहुया कारणरूप है ॥

कला] ॥ मैं पञ्चकोशातीत हूँ ॥ ४ ॥ १०७

* ६५ प्रश्नः—मनोमयकोशतैं मैं न्यारा हूँ । यह किसरीतिसैं जानना ?

उत्तरः—

१ कामक्रोधादिवृत्तियुक्त होनैतैं मन नियमरहित-
स्वभाववाला है तातैं विकारी है । औ
मैं सर्ववृत्तिनका साक्षी निर्विकार हूँ ।
तैं यह मनोमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं
हूँ सूक्ष्मदेहरूप है । मैं इसका जाननैहारा
आत्मा इसतैं न्यारा हूँ ॥ इसरीतिसैं मनोमय-
कोशतैं मैं न्यारा हूँ । यह जानना ॥

* ६६ प्रश्नः—४ विज्ञानमयकोश सो क्या है ?

उत्तरः—पांचज्ञानइंद्रियसहित बुद्धि । सो
विज्ञानमयकोश है ॥

* ६७ प्रश्नः—ज्ञानइंद्रिय औ बुद्धि कौन है ?

उत्तरः—ये पूर्व लिगदेइकी प्रक्रियाविषै
कहेहैं ॥

* ६८ प्रश्न — बुद्धि कैसी है ?

उत्तर:—

१ स्रष्टृत्वविषयै चिदाभासयुक्त बुद्धि विलीन होयै है । औ

२ ज्ञाप्यत्वविषयै नष्टके अभ्रभागसैं लेके शिष्या पर्यंत शरीरविषयै व्यापिके यत्नतीहुयी कर्ता रूप है ॥

* ६९ प्रश्न:—विज्ञानमयकोशर्तें में न्यारा हू । यह कैसे जानना ?

उत्तर —

१ बुद्धि । घटादिककी न्याई विलयआदिअवस्था-वाली होनेतैं विनाशी है । औ

२ में विलयआदिअवस्थारहित होनेत इमर्तें विलक्षण अविनाशी हैं ।

याने यह विज्ञानमयकोश में नहीं औ मेरा नहीं । यह सूक्ष्मदेहरूप है । में इसका जाननैहारा

कला] ॥ मैं पंचकोशातीत हूँ ॥ ४ ॥ १०६

आत्मा इसतैं न्यारा हूं ॥ इसरीतिसैं ६४विज्ञान-
मयकोशतैं मैं न्यारा हूं । यह जानना ॥

* १०० प्रश्नः—५. आनंदमयकोश सो क्या है ?

उत्तरः—

१ पुण्यकर्मफलके अनुभवकालविषै कदाचिन्
बुद्धिकी वृत्ति अंतर्मुख हुयी आत्मस्वरूपभूत
आनंदके प्रतिबिंबकूं भजतीहै । औ

॥ ६४ ॥

१ जैसे दीपकका प्रकाश औ आकाश अभिन्न प्रतीत
होवैहैं । तौ बी भिन्न है । औ

२ जैसे तप्तलोहविषै अग्नि औ लोह अभिन्न प्रतीत
होवैहैं । तौ बी भिन्न हैं ।

तैसें अन्तःकरण औ आत्मा अभिन्न प्रतीत होवैहैं तौ
बी भिन्न हैं । काहेतैं सुषुप्तिविषै अन्तःकरणके लग्य हुवे
आत्माकूं अज्ञानका साक्षी होनैकरि प्रतीयमान होनैतैं ।

२ ओ प्रिय मोद प्रमोदरूप कहियेहै ।

३ सोई वृत्ति पुण्यकर्मफलके भोगकी निवृत्तिके
हुये निद्रारूपसँ धिलीन होयेहै ।

सो वृत्ति आनन्दमयकोश है ॥

॥ १०१ प्रश्न — आनन्दमयकोश कैसा है ?

उत्तर —

१ इष्टवस्तुके दर्शनसँ उत्पन्न प्रियवृत्ति जिसका
शिर है । ओ

२ इष्टवस्तुके लाभसँ उत्पन्न मोदवृत्ति जिसका
एक (दक्षिण) पक्ष है । ओ

३ इष्टवस्तुके भोगसँ उत्पन्न प्रमोदवृत्ति जिसका
द्वितीय (वाम) पक्ष है । ओ

४ बुद्धि या अज्ञानकी वृत्तिविये आत्मस्वरूपभूत
आनन्दका प्रतिबिम्ब जिसका स्वरूप है । ओ

५. विवरूप आत्माका स्वरूपभूत आनंद जिसका
६२ पुच्छ (आधार) है ।

ऐसा पक्षीरूप भोक्ता ६६ आनंदमयकोश है ॥

* १०२ प्रश्नः—आनंदमयकोशतैं मैं न्यारा हूं ।
यह किसीरीतिसैं जानना ?

उत्तरः—

१ आनंदमयकोश वादलआदिकपदार्थनकी न्यांई
कदाचित् होनैवाला है । यातैं क्षणिक है । औ

२ मैं सर्वदा स्थित होनैतैं नित्य हूं ।

॥ ६२ ॥ ब्रह्मरूप आनंद आधार होनैतैं तैत्तिरीय-
श्रुतिविषै पुच्छशब्दकरि कहाहै ॥

॥ ६६ ॥ ऐसैं अन्यच्यारीकोशनको पक्षीरूपता
अस्मत्कृत तैत्तिरीयउपनिषद्की भाषाटीकाविषै सविस्तर
लिखीहै । जाकूं इच्छा होवै सो तहाँ देखलेवै ।

यार्तें यह आनन्दमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं ।
 यह कारणदेहरूप है । मैं इसका जाननेद्वारा
 आत्मा इसतैं न्यारा ॥ ॥ इसरीतिसैं आनन्दमय
 कोशतैं मैं न्यारा हू । यह जामना ॥

* १०३ प्रश्न — विद्यमानअन्नमयाविकोश जब
 आत्मा नहीं। तब कौन आत्माहै?

उत्तर —

१ बुद्धिआदिविषयै प्रतिबिम्बरूपरि स्थित । औ

२ प्रियआदिकशब्दसैं कहियेहै ।

वेसा जो आनन्दमयकोश है । तिसरा विरूप
 कारण जो आनन्द है । सो निय होनेतैं आत्माहै।

* १ ४ प्रश्न — पाचकोश जे हैं वेहीं अनुभवविषे
 आवतेहैं । तिनतैं न्यारा कोई
 आत्मा अनुभवविषे आवता नहीं।
 यार्तें पाचकोशतैं न्यारा आत्माहै ।
 यह निश्चय कैमें दावै ?

कला] ॥ मै पंचकोशातीत हूँ ॥ ४ ॥ ११३

उत्तर:—यद्यपि पांचकोशहीं अनुभवविषे आवते हैं। इनतें न्यारा कोई आत्मा अनुभवविषे आवता नहीं। यह वार्त्ता सत्य है। तथापि जिस अनुभवतें ये पांचकोश जानियेहैं। तिस अनुभव-
कूं कौन निवारण करैगा? कोई बी निवारणकरि-
शके नहीं। यातें पांचकोशनका अनुभवरूप जो चैतन्य है। सो पांचकोशनतें न्यारा आत्मा है ॥

* १०५ प्रश्न:—आत्मा कैसा है?

उत्तर:—सत् चित् आनंद आदि स्वरूप है ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये पंचकोशातीत-
वर्णननामिका चतुर्थकला समाप्ता ॥४॥



॥ अथ पंचमकला प्रारम्भः ॥ ५ ॥

॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

॥ मनहर छन्द ॥

अवस्था तीनको साक्षी आत्मा

६०अन्वय गाकी ।

अभिचारीअवस्थाको १८अतिरेक पाईयो

त्रिपुटी चतुरदश करि अवधार जहाँ ।

स्पष्ट सो जाग्रत् जूठ नाक हरप ध्याईयो ॥

देखे सुने वस्तुनके संस्कारसँ सृष्टि जहाँ

अस्पष्टप्रतीति स्वप्न मृदा लोक गाईयो ॥

सकलकरण लय हांग ॥ जहाँ स्रुति सो ।

पीतांबर तुरीयही ०० प्रत्यक्ष ०१ प्रत्याईयो ५

* १०६ प्रश्न — तीन अवस्था कौनसी हैं ?

उत्तर — १ ०० जाग्रत् । ० ०१ स्वप्न । श्री .

२ ०० मुमुक्षु ये तीन अवस्था हैं ॥

पंचम कला] ॥तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥५॥ ११५

॥ ६७ ॥ या (आत्मा) को अन्वय कहिये पुष्प-
मालामैं मूत्रकी न्यांई तीनअवस्थामैं अनुस्यूतपना है ।
यह अर्थ है ॥

॥६८॥ पुष्पनकी न्यांई तीनअवस्थाका परस्पर औ
अधिष्ठानतैं भेद ॥

॥६९॥ पदयोजनाः—जहां सकलकरण लय होय ।
सो सुपुति है ॥

॥ ७० ॥ अन्तरात्मा ॥ ७१ ॥ निश्चय कीयो ॥

॥ ७२ ॥ स्वप्न औ सुपुतितैं भिन्न इंद्रियजन्य
ज्ञानका औ इंद्रियजन्यज्ञानके संस्कारका आभारकाल ।
सो जाग्रत्अवस्था कहियेहै ॥

॥ ७३ ॥ इंद्रियसैं अजन्य । विषयगोचर अन्तः-
करणकी अपरोक्षवृत्तिका काल । स्वप्नअवस्था
कहियेहै ॥

॥ ७४ ॥ सुषुप्तगोचर औ अविद्यागोचर अविद्याकी
वृत्तिका काल । सुपुति अवस्था कहियेहै ॥

॥ १ ॥ जाम्रतअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥

* १०७ प्रश्न—जाम्रतअवस्था सो क्या है ?

उत्तर —

१ बीदाइन्द्रिय ०२ अध्यात्म है ॥

२ तिनके बीदादेयता ०३ अधिदेय हैं ॥

३ तिनके बीदाविषय ०० अधिभूत हैं ॥

इन बीवालीसतत्त्वनहीं जितरिपै व्यवहार होवै ।

सो ०८ जाम्रतअवस्था है ॥

॥ ७६ ॥ आत्माके आध्वरुतिके वर्तमान जे इन्द्रियारिक । वे अध्यात्म कहिये हैं ॥

॥ ७६ ॥ स्वयं घातमें भिन्न होवै श्री चण्ड, इन्द्रियका अधिषय होवै । सो अधिदेय कहिये हैं ॥

॥ ७७ ॥ स्वयं घातमें भिन्न होवै श्री चण्ड, आदि-इन्द्रियका विषय होवै । सो अधिभूत कहिये हैं ॥

॥ ७८ ॥ यह एष्वरदृष्टिवाले पुरुषनकूँ जाननैयोग्य जाम्रतका कथण है । तैमें हो समप्रपञ्चिविपै श्री जानना ॥

कला] ॥ तीन अवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥ ५ ॥ ११७

* १०८ प्रश्नः—चौदाइन्द्रिय कौनसी हैं ?

उत्तरः—

१-५- ज्ञानइन्द्रिय पांचः—१ श्रोत्र । त्वचा ।
३ चक्षु । ४ जिह्वा । औ ५ घ्राण ॥

६-१० कर्मइन्द्रिय पांचः—६ वाक् ।
७ पाणि । ८ पाद । ९ उपस्थ । औ १० गुद ॥

११-१४ अंतःकरण च्यारीः—११ मन ।
१२ बुद्धि । १३ चित्त । औ १४ अहंकार ॥

ये चौदाइन्द्रिय अध्यात्म हैं ॥

* १०९ प्रश्नः—चौदाइन्द्रियनके चौदादेवता कौनसे हैं ?

उत्तरः—

१-५ ज्ञानइन्द्रिय पांचके देवताः—

[१] श्रोत्रइन्द्रियका देवता । दिशा * ॥

[२] त्वचाइन्द्रियका देवता । वायु ॥

[३] चक्षुइन्द्रियका देवता । सूर्य ॥

* दिक्पाल :।

(४) जिह्वाइन्द्रियका देवता वरुण ॥

(५) घ्राणइन्द्रियका देवता । अश्विनीकुमार

६-१० कर्मइन्द्रिय पाँचके देवताः—

(६) वाक्इन्द्रियका देवता । अग्नि ॥

(७) हस्ताइन्द्रियका देवता । इन्द्र ॥

(८) पादइन्द्रियका देवता । वामनजी ॥

(९) उपस्थाइन्द्रियका देवता । प्रजापति ॥

(१०) शुक्रइन्द्रियका देवता । यम ॥

११-१४ अन्त करण रुपारी के देवताः—

(११) मनइन्द्रियका देवता । चन्द्रमा ॥

(१२) बुद्धिइन्द्रियका देवता । ब्रह्मा ॥

(१३) चित्तइन्द्रियका देवता । वायुदेव ॥

(१४) अहकारइन्द्रियका देवता रुद्र ॥

ए चौदहदेवता अधिदेव ॥

कला] ॥ तीन अवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥ ५॥ ११६

॥ ११० प्रश्न:—चौदाइन्द्रियनके चौदाविषय कौनसँ हैं?

उत्तर:—

१-५ ज्ञानइन्द्रिय पांचके विषय:—

१ शब्द । २ स्पर्श । ३ रूप । ४ रस ।

५ गंध ॥

६-१० कर्मइन्द्रिय पांचके विषय:—

६ वचन । ७ आदान । ८ गमन । ९ रति-

भोग । १० मलत्याग ।

११-१४ अंतःकरण चारोंके विषय:—

११ संकल्पविकल्प । १२ निश्चय ।

१३ चिंतन । १४ अहंकार ॥

ये चौदाविषय अधिभूत हैं ॥

॥ ८० ॥ मनका संकल्पविकल्प विषय नहीं । किंतु

जिस वस्तुका संकल्प होवै । सो वस्तु विषय है ।

। सँहीं बुद्धि चित्त अहंकार औ कर्मइन्द्रियनविषै बी

जानना ॥

* १११ प्रश्न—अध्यात्म अधिदैव अधिभूत । ये
तीनतीन मिलिके क्या कहिये हैं ।

उत्तर.—अध्यात्मादितीन-पुट [आकार]
मिलिके त्रिपुटी कहिये हैं ॥

* ११२ प्रश्न—चोदात्रिपुटी किसरीतिसे जाननी ?

उत्तर: -

१-५ ज्ञानइन्द्रिय की त्रिपुटी ॥

इन्द्रिय — देवता — विषय—

अध्यात्म ॥ अधिदैव ॥ अधिभूत ॥

[१] श्रोत्र । दिशा । शब्द ।

[२] त्वचा । वायु । स्पर्श ।

[३] चक्षु । सूर्य । रूप ।

[४] जिह्वा । वस्त्र । रस ।

[५] घ्राण । अश्विनीकुमार । गंध ।

कला] ॥ तीन अवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥५॥ १२१

६-१० ॥ कर्मइन्द्रियनकी त्रिपुटी ॥

इन्द्रिय — देवता — विषय—

अध्यात्म ॥ अधिदैव ॥ अधिभूत ॥

[६] वाक् । अग्नि । वचन (क्रिया) ॥

[७] हस्त । इन्द्र । लेना देना ॥

[८] पाद । वामनजी । गमन ॥

[९] उपस्थ । प्रजापति । रतिभोग ॥

[१०] गुद । यम । मलत्याग ॥

११-१४ ॥ अंतःकरण ४ की त्रिपुटी ॥

[११] मन । चन्द्रमा । संकल्पविकल्प ॥

[१२] बुद्धि । ब्रह्मा । निश्चय ॥

[१३] चित्त । वासुदेव । चिंतन ॥

[१४] अहंकार । रुद्र । अहंपना ॥

इसरीति सैं चौदा त्रिपुटी जाननी ॥

● १११ प्रश्नः—अध्यात्म अधिदैव अधिभूत ।
तीनतीन मिलिके क्या कहिये हैं ।

उत्तर,—अध्यात्मादितीन-पुट [आकार
मिलिके त्रिपुटी कहिये हैं ॥

● ११२ प्रश्न —चौदात्रिपुटी किसरीतिसें जाननी
उत्तरः -

१-५ ज्ञानइन्द्रिय की त्रिपुटी ॥

इन्द्रिय — वस्तुता — विषय—

अध्यात्म ॥ अधिदैव ॥ अधिभूत ॥

[१] धोत्र । दिशा । शब्द ॥

[२] त्वचा । वायु । स्पर्श ॥

[३] चक्षु । सूर्य । रूप ॥

[४] चिन्ता । घण्टा । रस ॥

[५] प्रण । अश्वनीकुमार । गंध ॥

कला] ॥ तीन अवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥५॥ १२३

४ व्यवहार न चलै तिसकूं वी मैं जानताहूं ।

ऐसा मेरा स्वभाव है । यह जानना ॥

* ११५ प्रश्न:- इस कथनसे क्या सिद्ध भया ?

उत्तर:- त्रिपुटीसे जिसविषै व्यवहार चलता है ऐसी जाग्रत अवस्था है । यह सिद्ध भया ॥

* ११६ प्रश्न:- जाग्रत अवस्थाविषै जीवका स्थान वाचा भोग शक्ति गुण औ जाग्रत के अभिमानसे तिस [जीव] का नाम क्या है ?

उत्तर:- जाग्रत अवस्थाविषै जीवका

१ नेत्र ८१ स्थान है ।

२ वैखरी वाचा है ।

॥ ८१ ॥ यद्यपि जाग्रत विषै इस चिदाभासरूप जीवकी नखसे लेके शिखापर्यंत सारे देह विषै व्याप्ति है । तथापि मुख्यता करिके सो नेत्र विषै रहताहै । यातें ताका नेत्र स्थान कहियं है ॥

३ स्थूल भोग है ।

४ क्रिया शक्ति है ।

५ रजो गुण है । औ

६ जाग्रतके अभिमानसे विरव माम है ॥

● ११७ प्रश्न.—जाग्रतस्थवस्थाके कहनैसे क्या सिद्ध भया ?

उत्तर:—

१ यह जाग्रतस्थवस्था होवे तिसकुं ,यी मैं जानताहू । औ

२ स्वप्नसुषुप्तिविरं न होवे तब तिसके अभावकुं
यी मैं जानता हू ।

यानै जाग्रतस्थवस्था में नहीं औ मेरी नहीं ।
यह स्थूलदेह की है । में इसका जाननैद्वारा साक्षी
घटसाक्षीकी न्याई इसनै न्यारा हू ।

इसर् ति नै जाग्रतस्थवस्थाका मैं सीखी हू ॥

कला] ॥ तीन अवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥५॥ १२५

॥ २ ॥ स्वप्न अवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥

* ११८ प्रश्न:—स्वप्न अवस्था सो क्या है ?

उत्तर:—जाग्रत् अवस्था विषय जो पदार्थ देखे-
होवें । सुने होवें । भोगे होवें । तिनका संस्कार
बालके हजारवें भाग जैसी बारीक हितनामक
नाडी जो कंठ विषय है तिस विषय रहता है । तिससँ
निद्रा कालमें पांच विषय आदिक पदार्थ औ तिनका
ज्ञान उपजता है । तिनसँ जिस विषय व्यवहार
होवै । सो स्वप्न अवस्था है ॥

* ११९ प्रश्न:—स्वप्न अवस्था विषय जीवका स्थान
वाचा भोग शक्ति गुण औ स्वप्नके अभि-
मान सँ तिस [जीव] का नाम क्या है ?

उत्तर:—स्वप्न अवस्था विषय जीवका

१ कंठ स्थान है ।

२ मध्यमा वाचा है ।

३ सूक्ष्म [वासनामय] भोग है ।

४ ज्ञान शक्ति है ।

५ अक्षय्य गुण है । औ

६ स्वप्नके अभिमानसें तैजस नाम है ॥

● १२० प्रश्न — स्वप्नअवस्थाके कहनेसें क्या सिद्ध
मया ?

उत्तर:—

१ स्वप्नअवस्था होये तिसकूँ की मैं जानताहूँ औ

२ जाग्रत्सुषुप्तिविये न होयै तब तिसके अभावकूँ
की मैं जानताहूँ ।

याने' यह स्वप्नअवस्था मैं नहीं औ मेरी नहीं ।

यह सूक्ष्मदेहकी है । मैं इसका जाननेद्वारा

साक्षी घटमात्मीकी न्याये समझे' न्याया ॥ । यह

स्वप्नके कहनेमें सिद्ध मया ॥

इसरीनिर्मै स्वप्नअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ।

॥ ८२ ॥ कितनक ३जोगुण की कहतेहैं ॥

कला] ॥ तीन अवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥५॥ १२७

॥ ३ ॥ सुषुप्तिअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥

* १२१ प्रश्न:-सुषुप्तिअवस्था सो क्या है ?

उत्तर:-पुरुष जब निद्रासँ जागिके उठे तब सुषुप्तिविषै अनुभव किये सुख औ अज्ञानका स्मरणकरिके कहताहै । जो " आज मैं सुखमें सोयाथा औ कछु बी न जानताभया " यह सुख औ अज्ञान का प्रकाश साक्षीचेतनरूप अनुभवसँ जिसविषै होवैहै । ऐसी जो बुद्धिकी विलयअवस्था

सो सुषुप्तिअवस्था है ॥

* १२२ प्रश्न:-सुषुप्तिअवस्थाविषै जीवका स्थान वाचा भोग शक्ति गुण औ सुषुप्तिके अभिमानसँ तिस [जीव] का नाम क्या है ?

उत्तर:-सुषुप्तिअवस्थाविषै जीवका

१ हृदय स्थान है ।

- २ पश्यंती वाचा है ।

३ आनंद भोग है ।

४ द्रव्य शक्ति है ।

५ तमो गुण है । श्री

६ सुपुंसिके अभिमानसँ प्राज्ञ नाम है ॥

● १२३ प्रश्न-सुपुंसिअवस्थाविषै दृष्टांत क्या है ?

उत्तरः—प्रथमदृष्टांत-[१] जैसे कोईका भूषण कूपविषै गिन्याहोवै तिसके निकासनैकूँ कोई तारुपुरुष कूपविषै गिरे । सो पुरुष भूषण मिले तिसकूँ भी जानताहै श्री भूषण न मिले तिसकूँ भी जानताहै । [२] परन्तु कहनैका साधन जो वाक्इन्द्रिय है तिसके देखता अमिका जलके साधि विरोध होनैतैँ तिरोधान होधिहै । यातैँ कहता नहीं । श्री [३] जब पुरुष जलसँ याहीर निकसै तब कहनैका साधन देवनासदित वाक्इन्द्रिय है । यातैँ भूषण मिल्या अथवा न मिल्या सो कहताहै ॥

कला] ॥ तीन अवस्था का मैं साक्षी हूँ । ५॥ १२६

सिद्धान्तः—तैसेँ [१] सुषुप्तिअवस्थाविषै सुख औ अज्ञानका साक्षीचेतनरूप सामान्यज्ञान है । [२] परन्तु विशेषज्ञानके साधन जे इन्द्रिय औ अन्तःकरण तिनका तब अभाव है । यातैँ सुख औ अज्ञानका विशेषज्ञान होता नहीं । [३] जब पुरुष जागताहै तब विशेषज्ञानके साधन इन्द्रिय औ अन्तःकरण होवैहैं । यातैँ सुषुप्तिविषै अनुभवकिये सुख औ अज्ञानका स्मृतिरूप विशेषज्ञान होवैहै ॥

द्वितीयदृष्टान्तः—जैसेँ [१] आतपविषै पिगल्या घृत होवै । [२] सो छायाविषै स्थित होवै तौ गठारूप होवैहै । [३] फेर आतप-विषै स्थित होवै तौ पिगलताहै ॥

सिद्धान्तः—तैसेँ (१) सुषुप्तिविषै कारणशरीर रूप अज्ञान है । [२] सो जाग्रतस्वप्नविषै बुद्धिरूप होवैहै । [३] फेर सुषुप्तिविषै अज्ञानरूप होवैहै ॥

तृतीयदृष्टान्तः—जैसे [१] कोई बालक लडकनके साथ खेल करनेकू जावे । [२] सो जर धमकू पावे तब माताके गोदमें सोयके गृहके सुपका अनुभव करताहै । [३] केर जब लडके बुलावे तब पाहीर जायके खेलकू करताहै ।

सिद्धान्तः—जैसे [१] कारणशरीरजो अज्ञान तिरूप माता है । तिसका बुद्धिरूप बालक कर्म-रूप लडकनके साथ जाग्रत्स्वरूप बहिर्भूमि विषे व्यवहाररूप खेलकू करताहै । [२]' जब विशेषरूप धमकू पावे । सुषुप्तिअवस्था रूप गृहविषे अज्ञानरूप मातामें लीन होयके प्रज्ञानरूप अनुभव करताहै । [३] केर जब कर्मरूप लडक बुलावे तब जाग्रत्स्वरूप बहि-भूमि विषे व्यवहाररूप खेलकू करताहै ॥

चतुर्थदृष्टान्तः—जैसे [१] समुद्रजलगरि पूर्ण घटकू [-] गलेमें गम्भी बाधिके समुद्रविषे

कलां] ॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥५॥ १३१

लीन करें (३) तब घटविषै स्थित जल समुद्रके जलसँ एकताकूं पावता है । (४) तौ बी घट-रूप उपाधिकरि भिन्नकी न्याई है (५) फेर जब रस्सीकूं खीचीयें तब भेदकूं पावता है । (६) परन्तु जलसहित घट औ समुद्रका आधार जो आकाश सो भिन्न होता नहीं । (७) किंतु तीनकालविषै एकरस है ॥

॥ सिद्धांतः—तैसेँ (१) अज्ञानरूप समुद्र-जलकरि पूर्ण जो लिंगदेहरूप घट है । (२) सो अदृष्टरूप रस्सीसँ बांध्याहुआ सुषुप्तिकालविषै औ तिसके अवांतरभेदरूप मरण मूर्च्छा अरु प्रलयकालविषै समष्टिअज्ञानरूप ईश्वरकी उपाधि मायाविषै लीन होवैहै । (३) तब सो व्यष्टि-अज्ञानरूप जीवकी उपाधि अविद्या । समष्टि-अज्ञानसँ एकताकूं पावैहै । (४) तौ बी लिंग-शरीरके संस्काररूप उपाधिकरि भिन्नकी न्याई है ।

(५) फेर जब अट्टरूप रस्सीकं अंतर्गामी प्रेरता-
है। तब भेदकं पावेहै। ६) परंतु व्यष्टिश्रमरूप
जलसहित लिगदेहरूप घट श्री समष्टिश्रमरूप
समुद्रका आधार जो बिदाकाश सो भिन्न होता
नहीं। (७) किंतु नीनकालधिपे एकरस ॥

● १२४ प्रश्नः—सुषुप्तिके कहमैसै क्या सिद्ध भया

उत्तरः—

१ सुषुप्तिश्रवस्था होवै तिसकं श्री मैं जानताहूं। श्री
२ जाग्रतस्वप्नधिपे यह न होवै तब तिसके
अभावकं श्री मैं जानताहूं।

पार्तै यह सुषुप्तिश्रवस्था मैं नहीं श्री मेरी नहीं।
यह कारणदेहकीहैं मैं इसका जाननैदारा साक्षी
घटसाक्षीकी व्याई इसतैं व्यारा हूं ॥

इसरीतिसँ सुषुप्तिश्रवस्थाका मैं साक्षी ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये अवस्थाश्रवसाक्षी
वर्णननामिका पंचमकला समाप्ता ॥ ५॥

॥ अथ षष्ठकलाप्रारंभः ॥ ६ ॥

॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णनं ॥

॥ ५३ललित छंदः ॥

सकलदृश्य सो-ऽध्यास छोड़ना ।

जगअधारमें चित्त जोड़ना ॥

५४त्रयदशाहि जो जाग्रदादि हैं ।

सबप्रपंच सो भिन्न नाहि हैं ॥३॥

रजन आदि हैं सीपिमैं यथा ।

५५त्रयदशा सु हैं ब्रह्ममें तथा ॥

रजनआदिवत् दृश्य ये मृषा ।

शुगतिकादिवत् ब्रह्म ५६अमृषा ॥ ७ ॥

व्यभिचरैः ५७मिथो ५८रजन आदि ज्यों ।

इनहिकी मिथो ५९व्यावृत्ती जु त्यों ॥

शुगति ६०सूत्रवत् अनुग एक जो ।

६०अनुवृत्तीयुतो ब्रह्म आप सो ॥८॥

- शुगतिकामहीं ११तीनअंश उर्यु ।
 अजडयत्नमें तीनअंश त्यु ॥
 १२उभयअंशकं सत्य जानिले ।
 १३अतिय त्यागदे मोक्ष ती मिले ॥६॥
 १४भेदभ्रमादि जो १५पंचधाभवे ।
 त्रिविधतापता तप्त सो १६दवं ॥
 १७परशु पंचधा-युक्तियों करी ।
 करि विचार तुं छेद ना करी ॥१०॥
 नहि ज जाहिमें तीनकालमें ।
 तहँहि भान रहे मध्यकालमें ॥
 शुगति रोग्यवत् व्यास सो भ्रमं ।
 १८अरथ ज्ञान दो-भांतिका क्रमं ॥११॥
 १९द्विविधवेम है ज्ञान अर्थको ।
 १००अरथभ्रांति वा पहिवधा धको ॥
 सकलध्यास जे जगनमें १०१दसे ।
 सयसु पाहिके बीचमें १०२घसे ॥१२॥

कला] ॥ प्रपञ्चमिथ्यात्ववर्णन ॥६॥ १३५

निजे चिदात्मकूं ब्रह्म जानिके ।

सकलवेमको १०३मूल भानिके ॥

१०४परममोदकूं आप बूजिले ।

इहहि मुक्ति पीतांबरों मिले ॥१३॥

॥ ८३ ॥ श्रीमद्भागवतके दशमस्कंधके एकतासर्वे
अध्यायगत गोपिकागीतकी न्याई यह छंद है ॥

॥ ८४ ॥ तीनअवस्था ॥

॥ ८५ ॥ सत्य ॥ ॥ ८६ ॥ परस्पर ॥

॥ ८७ ॥ इहां आदिशब्दकरि भोडल (अवतरण)
ग्री कागजका ग्रहण है ॥

॥ ८८ ॥ भेद कहिये अन्योन्याभाव ॥

॥ ८९ ॥ पुष्पमलामैं सूत्रकी न्याई ॥

॥ ९० ॥ अनुस्थूतताकरि युक्त ॥

॥ ९१ ॥ सामान्य । विशेष । कल्पितविशेष । ये
तीनअंश हैं ॥

॥ ९२ ॥ सामान्य श्री विशेष । इन दोअंशनकूं ॥

॥ ९३ ॥ तृतीय कल्पितअंशकूं ।

॥ १४ ॥ भेदधांसितै आदिप्रेके । इहां आदि-
शब्दकरि कर्ताभोक्तारनैकी आति । हांघांति ।
विकारआति । मझतै भिन्न जगन्मे सत्यताकी आति ।
इन च्यारोअ निनया प्रहय है ॥

॥ १५ ॥ पाँचमकारका संवार है ॥ १६ ॥ बन है ।

॥ १७ ॥ अन्वय,—पचधा कहिये पाँचमकारकी
सुबितयो कहिये हरटीतरूप पारशु कहिये कुमारकरी ॥

॥ १८ ॥ अन्वय,—सो भ्रम कहिये अभास ।
अरथ कहिये अर्थाभास श्री ज्ञान कहिये ज्ञानाभास ।
या क्रमसै दोभासका है ॥

॥ १९ ॥ अन्वय —ज्ञान कहिये ज्ञानाभास अं
अर्थ कहिये अर्थाभास । निनको वेम कहिये अभास ।
प्रत्यक कहिये एक एक द्विविध है ॥

॥ १०० ॥ वा अरथआति कहिये अर्थाभास ।
प द्वधा कहिये पद्वकारको । बको नाम कह्यो ॥

॥ १०१ ॥ दिग्भावे ॥

॥ १०२ ॥ प्रवेशकू पायेहैं ॥ ॥ १०३ ॥ अज्ञान ॥

॥ १०४ ॥ परमानंदरूप ब्रह्मकू आत्मा जानीले ॥

१२५ प्रश्नः—आत्माविषै तीनअवस्था किसकी
न्याई भासती हैं ?

उत्तरः—दृष्टान्तः—जैसेँ सीपीविषै रूपा अथवा
भोडल [अम्रक] अथवा कागज । ये तीन
सीपीके अज्ञानसेँ कल्पित भासतैहैं । तिन
तीनवस्तुनका

१ परस्पर वा सीपीके साथि व्यतिरेक है । औ

२ सीपीका तीनवस्तुनविषै अन्वय है ॥

जैसेँ किः—

१ [१] सीपीविषै जब रूपा भासै तब भोडल
औ कागज भासता नहीं । औ

[२] जब भोडल भासै तब रूपा औ कागज
भासता नहीं । औ

३] जय कागज भासै नव रूपा श्री भोडल
 भासता नहीं । यह तीनवस्तुनका
 परस्पर व्यतिरेक है ॥ सीपीचिरी
 आदिमध्यमंतमें इन तीनवस्तुनका
 व्यापहारिक औ पारमार्थिक अत्यंत-
 अभाव है । यह सीपीचिरी वो तिन
 तीनवस्तुनका व्यतिरेक है । औ

२ आंतिकालचिरी

[१] “ यह रूपा है ”

[२] “ यह भोडल है ”

[३] “ यह कागज है ”

इत्येतिर्लै सीरीका इदंअंश तिन तीनवस्तुनचिरी
 अनुसूत मानताहै । यह तिन तीनवस्तुनचिरी
 सीरीका अन्वय है ॥

इहां सीपीके तीनअंश हैं:-१ सामान्यअंश ।

२ विशेषअंश । ३ कल्पितविशेषअंश ॥

१ इदंपना सामान्यअंश है । काहेतैं जो अधिक-
कालविषै प्रतीत होवै सो सामान्यअंश
है ॥ इदंपना जातैं

(१) भ्रांतिकालविषै प्रतीत होवैहै । औ

(२) भ्रांतिके अभावकाल विषे वी “ यह
सीपी है ” ऐसैं प्रतीत होवैहै ।

यातैं यह इदंपना सामान्यअंश है औ
आधार वी कहियेहै ॥

२ नीलपृष्ठतीनकोणयुक्त सीपी विशेषअंश है ।
काहेतैं जो न्यूनकालविषै प्रतीत होवै सो
विशेषअंश है ॥

(१) अंतिकालवियै इन नीलपृष्ठआदिककी प्रतीति होयै नहीं ।

(२) किंतु इनकी प्रतीतिसें अंतिकी निवृत्ति होयै ।

यार्त यह विशेषअंश है । श्री अधिष्ठान की कहियेहै ॥

३ रूपाआदिक कल्पितविशेषअंश है । काहेतें जो अधिष्ठानके ज्ञानकालमें प्रतीति होयै नहीं । सो कल्पितविशेषअंश है ॥ जैसे

(१) रूपाआदिक । सीपीके अज्ञानकालवियै प्रतीति होयैहै । श्री

(२) सीपीके ज्ञानकालवियै इनकी प्रतीति नोहै नहीं ।

सिद्धांतः—तैसैं अधिष्ठानआत्माविपै जाग्रत्
अथवा स्वप्न अथवा सुषुप्ति । ये तीनभ्रांति आत्मा-
के अज्ञानसैं होवैहैं । तिनका
१ परस्पर औ अधिष्ठानआत्माके साथि
१०५व्यतिरेक है । औ

२ आत्माका तिनविपै १०६अन्वय है ॥
जैसैं किः—

१ (१) जाग्रत् भासैहै तब स्वप्न औ सुषुप्ति
भासैन्हों । औ

(२) स्वप्न भासैहै तब जाग्रत् औ सुषुप्ति
भासैन्हों । औ

(३) सुषुप्ति भासैहै तब जाग्रत् औ स्वप्न
भासैन्हों ।

यह तीनअवस्थाका परस्परव्यतिरेक है । औ

॥१०५॥ अभाव वा व्यावृत्ति । सो व्यतिरेक है ॥

॥१०६॥ भाव वा अनुवृत्ति । सो अन्वय है ॥

अधिष्ठानविधै इन तीनअवस्थाका पारमार्थिक
अत्यन्तअभाव (नित्यनिवृत्ति) है ॥ यह तीन-
अवस्थाका अधिष्ठानविधै उपातिरंक है । श्री

२ आत्मा इन तीनअवस्थाविधै अनुस्यूत होयके
प्रकाशताहै । यह आत्माका तीनअवस्थाविधै
अन्य है ।

इहा आत्माके अधिष्ठाउपाधिसँ आरोपित
तीनअंश हैं - १ सामान्यअंश । २ विशेषअंश ।
३ कटिपतविशेषअंश ॥

१ सत् ("है" पनै) रूप सामान्यअंश है । काहेतें

(१) " जाग्रत् है " " स्वप्न है " " सुषुप्ति
है " । इसरीतिसँ आत्माका सत्पना
आतिकालविधै बी प्रतीत होवैहै । श्री

(२ , भ्रांतिकी निवृत्तिकालविषै “ मैं सत्
हूँ । मैं चित् हूँ । मैं आनन्द हूँ । मैं
परिपूर्ण हूँ । मैं असंग हूँ । मैं नित्य-
मुक्त हूँ । मैं ब्रह्म हूँ ” । इसरीतिसँ

आत्माके सत्पनैकी प्रतीति होवैहै ।
यातँ यह सत्प रूप सामान्यश्च है औ
आधार वी कहियेहै ।

२ चेतन आनन्द असंग अद्वितीयपनैसँ आदिलेके
जे आत्माके विशेषण हैं । सो विशेषअंश
है । काहेतँ

(१) भ्रांतिकालविषै इनकी प्रतीति होवै
नहीं । किन्तु

(२) इनकी प्रतीतिसँ भ्रांतिकी निवृत्ति
होवैहै ।

यातँ यह विशेषअंश है औ अधिष्ठान वी
कहिये ॥

३ तीनश्रयस्धारूप प्रपञ्च कल्पितविशेषग्रन्थ है ।
काहेतैं

(१) ब्रह्मर्तु अमित्र आत्माके अज्ञानकाल-
विषै प्रतीत होवैहै । औ

(२) "मैं ब्रह्म हूँ" ऐसी आत्माके ज्ञानका-
लमें आत्मासँ मित्र सत् प्रतीत होवै
नहीं ।

पार्तैं यह तीनश्रयस्धारूप प्रपञ्च कल्पित
विशेषग्रन्थ है औ आंति वो कहियेहै ॥

इसरीतिसें ये तीनश्रयस्था आत्माविषै मिथ्या
प्रतीत होवैहैं ॥

• १२६ प्रश्न —आत्माविषै मिथ्याप्रपञ्चकी प्रतीति
में अन्यदृष्टांत कौनसे हैं ?

उत्तर —जैसे

१ स्याणुविषै पुष्प प्रतीत होवैहै । औ

कला] ॥ प्रपञ्चमिथ्यात्ववर्णन ॥ ६ ॥ १४५

- २ साक्षीविषै स्वप्न प्रतीत होवैहै । औ
- ३ मरुभूमिविषै जल प्रतीत होवैहै । औ
- ४ आकाशविषै नीलता प्रतीत होवैहै । औ
- ५ रज्जुविषै सर्प प्रतीत होवैहै । औ
- ६ जलविषै अधोमुखपुरुष वा वृक्ष प्रतीत होवैहै । औ
- ७ दर्पणविषै नगरी प्रतीत होवैहै ।
सो मिथ्या है ॥

५ तैसँ आत्माविषै अपने अज्ञानतँ प्रपञ्च प्रतीत होवैहै । सो मिथ्या है ॥

इस रीतिसँ प्रपञ्चके मिथ्यापनैका निश्चय करना । सोई प्रपञ्चका १०७वाध है ॥

॥१०७॥ मिथ्यापनैके निश्चयका नाम बाध है ।

सो शास्त्रीय यौक्तिक औ अपरोक्ष भेदतँ तीनभांति का है ॥

• १२७ प्रश्न:- स्र्मांतिरूप संसार कितने प्रकारका है ?

उत्तर:-

१ १०८ भेद स्र्मांति ।

२ १०१ कर्त्ता भोक्ता पतनैकी स्र्मांति ।

३ ११० सगकी स्र्मांति ।

४ १११ धिकारकी स्र्मांति ।

५ महामै भिन्न जगत्के सत्यताकी स्र्मांति ।

यह पाँच प्रकारका स्र्मांतिरूप संसार है ॥

• १२८ प्रश्न - पाच प्रकारके भ्रमकी निवृत्ति किन दणान्तर्मे होवै है ?

उत्तर:-

१ १११ विषय प्रतिबिम्बके दणान्तर्मे भेद भ्रमकी निवृत्ति होवै है ॥

॥ १०८ ॥ जीव ईश्वरका भेद । जीव नका परस्पर-
भेद । जग नका परस्पर भेद । जीव जग नका भेद । जीव
जग नका भेद । यह पाँच प्रकारकी भेद भ्र्मांति है ॥

॥ १०६ ॥ अंतःकरण के धर्म कर्त्तापनैभोक्तापनैको
आत्माविषै प्रतीति होवैहै । यह कर्त्ताभोक्तापनैकी
भ्रांति है ॥

॥ ११० ॥ आत्माको देहादिकविषै अहंत्तरूप औ
गृहादिकविषै ममत्तरूप सम्बन्ध है । वा सजातीय
विजातीय स्वगत वस्तुके साथि सम्बन्धकी प्रतीति । सो
संगभ्रांति है ।

॥ १११ ॥ दुग्धके विकार दधिकी न्यांई । ब्रह्मका
विकार जीव तथा जगत् है । ऐसी जो प्रतीति । सो
विकारभ्रांति है ॥

॥ ११२ ॥ सूत्रभाष्यके उपरि पंचपादिकानामक
टीका पद्मपादाचार्यनै करीहै । तिस पंचपादिकाका
ग्यायानरूप विवरणनामग्रन्थ है । तिसके कर्त्ता
श्रीप्रकाशास्मरणात्मनामशाचार्य है । तिसकी रीतिके
अनुसार यह उपरि लिख्या विवप्रतिविबका दृष्टांत है ॥

२ स्फाटिकविषै लालवस्त्रके लालरंगकी प्रतीति
के दृष्टांतसें कर्त्ता भोक्तापनैकी भ्रांतिकी
निवृत्ति होयै ॥

३ घटाकाशके दृष्टांतसें संगभ्रांतिकी निवृत्ति
होयै ॥

४ रज्जुविषै कल्पितस्वप्नके दृष्टांतसें विकार
भ्रांतिकी निवृत्ति होयै ॥

५ कनकविषै कुंडलकी प्रतीतिके दृष्टांतसें ब्रह्मरूप
भिन्न जगत्कं सत्यपनैकी भ्रांतिकी
निवृत्ति होयै ॥

* १६६ प्रश्नः—१ विषयप्रतिबिम्बके दृष्टांतसें भेदभ्रांति
की निवृत्ति किमतीतसें होयै ?

उत्तरः—जैसे (१) दर्पणविषै मुग्नका
प्रतिबिम्ब भासताहै सो प्रतिबिम्ब दर्पणविषै नहीं
है । किन्तु दर्पणकं देखनेवास्ने निकसी जो मेशकी

वृत्ति सो दर्पणकूं स्पर्शकरिके पीछे लौटिके मुखकूंहीं देखतीहै । यातैं विंव जो मुख तिसके साथि प्रतिविंव अभिन्न है । तातैं प्रतिविंव मिथ्या नहीं । किंतु सत्य है । औ (२) प्रतिविंव के धर्म जे विंवसैं भिन्नपणा औ दर्पणविषै स्थितपना औ विंवसैं उलटेपना । ये तीन औ तिनकी प्रतीतिरूप ज्ञान सो भ्रांति है ॥ (३) यातैं इन धर्मनको मिथ्यापनैका निश्चयरूप बाध करिके विंव औ प्रतिविंवका सदाअभेद निश्चय होवैहै ॥

सिद्धांत:-तैसैं [१] शुद्धब्रह्मरूप विंव है । तिसका अज्ञानरूप दर्पणविषै जीवरूप प्रतिविंव भासताहै । तिनमें स्वप्नकी न्याई एक-जीव मुख्य है औ दूसरे स्थावरजंगमरूप नाना-जीव भासतेहैं । हे जीवाभास हैं ॥ सो

जीवरूप प्रतिबिम्ब ईश्वररूप विषयके साथि सदा
अभिन्न हैं । परंतु [२] मायाके बलसें तिस
जीवके धर्म । विषय ईश्वरसें भेद । जीवपना ।
अल्पज्ञपना । अल्पशक्तिपना । परिच्छिन्नपना ।
नानापना इत्यादि औ तिनकी प्रतीतिरूप ज्ञान ।
सो भ्रांति है ॥ [३] यातैं तिनका मिथ्यापनका
निश्चयरूप बाधकरिके । जीवरूप प्रतिबिम्ब औ
ईश्वररूप विषयका सदा अभेद निश्चय होवैहै ॥

इसरीतिसें विषयप्रतिबिम्बके दृष्टांतसें १११ भेद-
भ्रांतिकी निवृत्ति होवैहै ॥

॥ ११३ ॥ मुख्य जीवईश्वरके भेदके निषेधस
तिसके मतमंत क्यारीभेदनका निषेध सदा सिद्ध होवैहै
सर्व भेद उपाधि के कियेहैं । उपाधि सब मिथ्या हैं ।
तात तिनके किये भेद भी सर्व मिथ्या हैं । यातैं
वास्तवयुक्तमकही अवलोक रहताहै ॥

हला] ॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥६॥ १५१

*१३० प्रश्न:-२ स्फाटिकविषै लालवस्त्रके लालरंग-
की प्रतीतिके दृष्टांतसें कर्त्ताभोक्तापनै
की भ्रांति किसरीतिसैं निवृत्त होवैहै ?

उत्तर:-जैसैं [१] लालवस्त्रके उपरि
धरे स्फाटिकमणिविषै वस्त्रका लालरंग संयोग-
सम्बन्धसैं भासताहै (२) परन्तु सो वस्त्रका धर्म
है । [३] वस्त्र औ स्फाटिकके वियोगके भये
स्फाटिकविषै भापता नहीं । [४] यातैं
स्फाटिकका धर्म नहीं है । [५] किंतु स्फाटिक-
विषै भ्रांतिसैं भासता है ॥

सिद्धान्त:-तैसैं [१] अंतःकरणका धर्म
जो कर्त्ताभोक्तापना सो आत्माविषै तादात्म्य-
सम्बन्धसैं भासताहै । [२] परंतु सो अंतःकरणका
धर्म है ॥ [३] सुषुप्तिविषै अन्तःकरण औ

आ-माके वियोगके भये आत्माविषै भासता न
 [४] यालै आ-माका धर्म नहों है ॥ [५]
 आत्माविषै सातिलै भासताहै ॥

तलै कृपाटिकविषै लालरगकी मलीनिं
 व सो भोक्तापनैकी आनि की निगुण
 ॥

१३१ प्रश्न — ३ घटाकाशके दृष्टातलै मगघ्राति
 की निवृत्ति किसरीनिलै होयै ?

उत्तर — कैयै [१] घटउपाधियाला आकाश
 कदियै । [२] सो आकाश घटके
 ॥ [३] तौ की घटक धर्म उत्पत्ति
 आगमनआदिक है । ये आकाश
 व कान नहों । [४] यालै आकाश अमल
 है । औ [५] आकाशका सम्बन्ध घटके साधि
 भागनाहै भा घुलन है ॥

अद्वान्तः-तैसैं [१] देहआदिकसंघात-
 उपाधिवाला आत्मा जीव कहियेहै । [२]
 आत्मा संघातके सङ्ग भासताहै । [३] तौ
 संघातके धर्म जन्ममरणादिक हैं । वे आत्मा-
 स्पर्श करते नहीं । काहेतै संघात दृश्य
 औ आत्मा द्रष्टा है । ४] तातैं आत्मा-
 घातसैं न्यारा असङ्ग है ॥ [५] जातैं आत्मा
 घातरूप नहीं । तातैं आत्माका संघातके
 साथि अहंत्तरूप सम्बन्ध वी नहीं औ जातैं
 आत्माका संघात नहीं । किंतु संघात पंच-
 महाभूतका है तातैं आत्माका संघातके साथि
 ममत्तरूप सम्बन्ध वी नहीं जातैं आत्मा संघातसैं
 न्यारा है । तातैं आत्माका संघातके सम्बन्धी
 स्त्रीपुत्रगृहादिकनके साथि वी ममत्तरूपसंबन्ध
 नहीं ॥ ऐसैं आत्मा असङ्गहै इसका संघातके साथि

अहताममत्तारूप सम्यन्ध आति है ।

इसीरीतिले घटाकाशके दृष्टातसें सा

०. १ निवृत्ति होय है ॥

*१३२ प्रश्न - ४ रज्जुविषये वह्निवत्सर्पके दृष्टातसें

विकारआतिली निवृत्ति किसरीतिले होयै

उत्तर — जैसै (१) मदअभकारविषये रज्जु

स्थित होयै । तिसके देखने वास्तव नभरूप ठारसं

अत करणकी धृति निरसै है । सो धृति अध

कारादि दोषसें रज्जुके आकारकू पावनी नही

यातै तिस धृतिसें रज्जुकु आवरणका भङ्ग होयै

नहीं । तब रज्जुउपाधिवाले चैतन्यके आश्रित

रही जो ११ भूलाश्रयिणी । सो शोभकू गायके

रूपरूप विकारकू धारतीहै ॥ (२) सो सर्प

कुधये परिणाम अधिकी न्याहै अविद्याक

परिणाम है ।

॥ ११४ ॥ यत्तिरूप अणुधिवाले चैतन्यकू अथ

अथ कानैशकू सो रज्जु । सो भूलाश्रयिणी है ।

कला] ॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥६॥ १५५

औ (१) रज्जुउपाधिवाले चैतन्यका विवर्त है ।
परिणाम (विकार) नहीं ।

सिद्धांतः-तैसैं (१) ब्रह्मचैतन्यके आश्रित
रही जो ११५मूलाश्रविद्या । सो प्रारब्धादिक-
निमित्तसैं ११६क्षोभकूँ पायके जड़ चैतन्य
(चिदाभास) प्रपंचरूप विकारकूँ धारतीहैं ॥
(२) सो प्रपंच अविद्याका ११७परिणाम है औ
(३) ११८ अग्निष्टानब्रह्मचैतन्यका ११६विवर्त
है । परिणाम नहीं ॥

इसरीतिसैं रज्जुविपै कल्पितसर्पके दृष्टांतसैं
विकारभ्रान्तिकी निवृत्ति होवैहै ॥

॥ ११५ ॥ शुद्धब्रह्म औ आत्माकूँ आवरण करने-
वाली जो अविद्या । सो मूलाश्रविद्या है ।

॥ ११६ ॥ कार्य करनेकै सन्मुख होनेकूँ क्षोभ
कहैंहैं ।

॥ ११७ ॥

१ पूर्वरूपकूँ त्यागिके अन्यरूपकी प्राप्ति परिणाम है ।

२ वा उपादानके समानसत्तावाला जो अन्तर्भाव
कहिये उपादानमें औरमकारका आकार से
परिणाम है ।

जैसे दुग्धका परिणाम दधि है । याहीके विकार
भी कहें ।

॥ ११८ ॥ जो अथ निर्विकाररूपमें स्थित होवे
और अविद्याकृत कल्पितकार्यका आश्रय होवे । सो
अधिष्ठान है ॥ जैसे कल्पितवर्षका अधिष्ठान रजु
है । याहीके परिणामी उपादानमें विस्फरण वृत्ता
विद्यते उपादान भी कहते हैं ।

॥ ११९ ॥ अधिष्ठानमें निवसमानवाला कहिये
अज्ञ अह मित्रसत्तावाला जो अधिष्ठानमें सम्पन्नरूप
नाम औरमकारका आकार से विद्यते है ॥ जैसे
रज्जुका विद्यते मय है । याहीके कल्पितकार्य और
कल्पितविशेष भी कहते हैं ।

कला] ॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥ ६ ॥ १५७

* १३३ प्रश्न:-५ कनकचिपै कुंडलकी प्रतीतिके
दृष्टान्तसैं भिन्न जगत्के सत्यताकी
भ्रान्तिकी निवृत्ति किसरीतिसैं
होवैहै ?

उत्तर:-जैसैं (१) कनक औ कुंडलका
कार्यकारणभावकरि भेद भासता है सो कल्पित है ।
औ (२) कनकसैं कुंडलका भिन्नस्वरूप
देखीता नहीं । (३) यातैं वास्तवभेद है ।
(४) तातैं कनकसैं भिन्न कुंडलकी सत्ता
नहीं है ॥

सिद्धांत:-तैसैं (१) ब्रह्म औ जगत्का
कार्यकारणभावकरि विशेषणकरि भेद भासता
है सो कल्पित है । औ (२) विचारिकरि देखिये
तौ अस्तिभातिप्रियसैं भिन्न नामरूपजगत् सत्य

सिद्ध होवे नहीं । किंतु मिथ्या सिद्ध होवेई और जो यस्तु जिनविषे कल्पित होवे सो यस्तु तिसरें भिन्न सिद्ध होवे नहीं । (३) यार्तें महामै' जगत् का वास्तव्यभेद है । (४) तार्तें प्रत्यसै' जगत् की भिन्नत्वसा नहीं है ॥

इसरीतिसै' कजकविषे कुंडलकी प्रतीतिके दृष्टान्तसै' ब्रह्मसै' भिन्न जगत् के सत्यता की भ्रांति निवृत्ति होवेई ॥

* १३१ प्रश्न—भ्रांति सो क्या है ?

उत्तर:—भ्रांतिसो अध्यास है ॥

* १३२ प्रश्न—अध्यास सो क्या है ?

उत्तर:—भ्रान्तिज्ञानका विषय जो मिथ्यायस्तु औ भ्रान्तिज्ञान । तिसका नाम अध्यास है ॥

कला] ॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥ ६ ॥ १५६

* १३६ प्रश्नः—यह अध्यास कितने प्रकारका है ?

उत्तरः—ज्ञानध्यास औ अर्थध्यास । इस भेद तैं
अध्यास दो भांतिका है ॥ तिनमें अर्थध्यास ।
१२० केवलसंबंधाध्यास । १२१ संबंधसहित संबंधी
का अध्यास । १२२ केवलधर्मध्यास । १२३ धर्म-
सहित धर्मोंका अध्यास । १२४ अन्योन्याध्यास ।
१२५ अन्यतराध्यास । इस भेद तैं षट्प्रकारका है ।

अथवा १२६ स्वरूपाध्यास औ १२० संसर्गाध्यास ।
इस भेद तैं अर्थध्यास दो प्रकारका है ।

१ ताके १२२ अंतर्गत उक्त षड्भेद हैं । औ

२ उपरि लिखे भेद भ्रांति आदिक पांच प्रकारके भ्रम-
बी याहीके १२१ अंतर्गत हैं । औ

१ आगे ने डेहों कहियेगा जो आत्मा अनात्माके
विशेषणोंका अन्योन्याध्यास सो बी याहीके
अंतर्गत है । सो ताके टिप्पण विपै दिखाया
जावेगा ।

॥ १२० ॥ अनात्माविषै आत्माका अध्याम हावेई ।
मर्हो आत्माका अनात्माके साथि सादाऋतसंघ अर्थात्
है । आत्माक स्वस्वरूप नहीं । यातें अनात्माविषै आत्माका
केंयलसयधाभ्यास है ।

॥ १२१ ॥ आत्माविषै अनात्माका संघ अर्थात्
स्वरूप होनुं अव्यक्त हैं । यातें आत्माविषै अनात्माका
सयवसाहित सगंधीका अभ्यास है ।

॥ १२२ ॥ स्थूलदेहके गौराभादिक श्री इन्द्रियनके
दर्शनआदिकधर्मकाही आत्माविषै अध्याम होवेई । निमके
स्वरूपका नहीं । यातें आत्माविषै वेद श्री इन्द्रियनके
केंयलधर्मका अभ्यास है ।

॥ १२३ ॥ अन्न अशुके कर्तृपिनाआदिकधर्म श्री
स्वरूप होनुं आत्माविषै अव्यक्त हैं । यातें अ त कथका
आत्माविषै धर्ममहि । धर्मीका अध्याम है ।

॥ १२४ ॥ जोह श्री अग्निकी ज्योई आत्माविषै
अनात्माका श्री अनात्माविषै आत्माका जो अध्यास सो
अन्योन्याभ्यास है ।

॥ १२५ ॥ अनात्माविषै - आत्माका स्वरूप अध्यस्त नहीं । किन्तु आत्माविषै अनात्माका स्वरूप अध्यस्त है । यही अन्यतराध्यास है । दांनूँमैसै' एकका अध्यास अन्यतराध्यास कहियेहैं ।

॥ १२६ ॥ ज्ञानसै' बाध होनैयोग्य वस्तु । अधिष्ठानविषै स्वरूपसै' अध्यस्त हाँवैहै । देहादिअनात्माका अधिष्ठानके ज्ञानसै' बाध होवैहै । यातै' ताका आत्माविषै स्वरूपाध्यास है ।

॥ १२७ ॥ बाधके अयोग्य वस्तुका स्वरूप अध्यास होवै नहीं । किन्तु ताका संबन्ध अध्यस्त हाँवैहै । यातै' अनात्माविषै आत्माका संसर्गाध्यास है । याहीकू' संबन्धाध्यास बी कहैहैं ।

॥ १२८ ॥ केवलधर्माध्यास । धर्मसहित धर्मोका अध्यास औ' अन्यतराध्यास । ये तीन स्वरूपाध्यासके अन्तर्गत हैं ।

केवलमनुभाष्यात् । सोपगम्यासही है ॥

सुषुप्तवद्विषयसुषुप्ताभाष्यात् । सुषुप्तगम्यासही
स्वरूपाभाष्यात् है ॥

अप्रोक्ष्याभाष्यामसौ सुषुप्तगम्यास श्री स्वरूपाभाष्याम दोन
है । चाहें

१ आत्माका स्वरूप तो स्पष्ट है । यानी अस्पष्ट नहीं
किन्तु ताका समर्थ कहिये तादात्म्यवत्तत्त्व अनात्मविषय
अस्पष्ट है । यानी ताका संसर्गाभाष्यात् है । अ
२ अनात्माका स्वरूपही आत्माविषय अस्पष्ट है । यानी
ताका स्वरूपाभाष्यात् है ॥

॥ ते अप्रोक्ष्याभाष्याम दोनू के अंतर्गत है ॥

। १२६ ॥ भेदभ्रान्तिविशदिकपाचकारका भ्रम जो
पूर्व लिखवाई । निम्न

मगभ्रान्तिक छोटिके चारि प्रकारका भ्रम । स्वरूपा-
भाष्यात्के अन्तर्गत है । श्री

पांचवी मगभ्रान्ति सुषुप्तगम्यासके भीतर है ॥

कला] ॥ प्रपञ्चमिथ्यात्ववर्णन ॥६॥ १६३

* १३७ प्रश्नः—अहंकारादिक अनात्माका औ
आत्माका अध्यास जाननेमें विशेष उप-
योगी अर्थात् सर्व अध्यासोंमें अनुस्यूत
कौन अध्यास है ?

उत्तरः—अन्योन्याध्यास ॥

* १३८ प्रश्नः—अन्योन्याध्यास सो क्या है ?

उत्तरः—परस्परविषे परस्परके अध्यासका
नाम १३० अन्योन्याध्यास है ॥

* १३९ प्रश्नः—आत्मा आ अनात्माका परस्पर-
अध्यास किसरीनिसैं है ?

उत्तरः—

१-४ सत् चित् आनन्द औ अद्वैतपना । ये
च्यारीविशेषण आत्माके हैं ॥

१-४ असत् जड दुःख औ द्वैतसहितपना । ये
च्यारीविशेषण अनात्माके हैं ।

तिनमें

॥ १३० ॥ इहां सर्वव्याप्यात्मनके स्वरूप श्री उदाहरण विस्तारके अर्थमें विशेष किये नहीं । किन्तु हाचेवरी कियेहैं । परन्तु अन्योन्याभ्यासका स्वरूप तो विशेषउपयोगी जानिके स्पष्ट दिखायाहै ॥ तार्थ

२ अनात्माके धर्म दुःख श्री हितसहितपन ।

आत्माके आनन्द श्री सद्वैतपनैविवै स्वरूपसे' अभ्यस्त होयके तिनकुं हावे हैं । श्री

२ आत्माके धर्म सत् अहं चित् । अनात्माके अवयव श्री उदताविवै ससर्ग (सम्बन्ध) द्वारा अभ्यस्त होयके तिनकुं हावे हैं ।

कार्यसहित अज्ञानसे' जो आहृत (जाग्या) होवै ।

से। अधिष्ठान कहिये ॥

इसरीतिसै आत्माका श्री अनात्माका यह अन्योन्याभ्यास श्री संसर्गाभ्यास श्री स्वरूपाभ्यासके अन्तर्गत है ॥

कला] ॥ प्रपंचमिश्रयात्ववर्णन ॥६॥ १६५

१-२ अनात्माके दुःख औ द्वैतसहितपना ।
इन दोविशेषणोंनै आत्माके आनन्द औ
अद्वैतपनैकूँ ढांपेहै । तातैं आत्माविपै

(१) “ मैं आनन्दरूप औ अद्वैतरूप
हूं ” ऐसी प्रतीति होवै नहीं ।

(२) किंतु “मैं दुःखी औ ईश्वरादिकसैं
मिश्र हूं ” ऐसी प्रतीति होवैहै ॥

३-४ आत्माके सत् औ चित् । इन दोविशेष
णोंनै अनात्माके असत् औ जडपनैकूँ
ढांपेहैं तातैं अनात्मा जो अहंकारादिक ।
तिसविपै

(१) “ असत् है । अभान [जड] रूप
है ” ऐसी प्रतीति होवै नहीं ।

(२) किंतु “ विद्यमान है औ भासता
(चेतन) है ” ऐसी प्रतीति होवैहै ॥

इसरीतिसँ आत्मा औ अनात्माका
 १११ परस्पर अध्यास हे ॥
 इति श्रीविचारचन्द्रोदये प्रपंचमिथ्यात्व-
 वर्णननामिका पष्ठकला समाप्ता ॥ ६ ॥

अथसप्तमकला प्रारम्भः ॥ ७ ॥

॥ आत्माके विशेषण ॥

~*~*~*~*~

॥ १११ इन्द्रविजय छंद ॥

आत्म विशेषण हँ जु दुभांति ।

विधेय निषेध कहों निरधारे ॥

ये १११ सय जानि भले गुरु शास्त्र ह ॥

सो अपनो निजरूप निहारे ॥

॥ १३१ ॥ ब्रह्मा औ ईश्वरका अरु कूटस्थ औ
 जीवहा जो परस्पर अध्यास हे । सो आगे ग्यारवीं-
 वखानिपै कहेंगे ॥

सच्चिदानन्द रु ब्रह्म स्वयंपर-
 काश कुटस्थ रु साक्षि विचारे ॥
 द्रष्टु अरु उपद्रष्टु रु एकहि ।
 आदि विधेय विशेषण धारे ॥ १४ ॥
 १३४ अंत विहीन अखंड असंग रु ।
 अद्वय १३५ जन्मविना अविकारे ॥
 चारि १३६ अकारविना अरु व्यक्त ।
 न १३७ माननको विषयो जु निकारे ॥
 कर्म करीहि बहै न घटै इस
 हेतुहि अव्यय वेद पुकारे ॥
 अक्षर नाशविना कहिये इस ।
 आदि निषेध्य पीतांबर सारे ॥ १५ ॥

॥ १३२ ॥ इन्द्रविजयछन्द ठुमरी श्री लावनीमें गाया
 जावैहै ॥ ॥ १३३ ॥ वे विधेय निषेध्य विशेषण ॥

॥ १३४ ॥ अनंत ॥ ॥ १३५ ॥ अजन्मा ॥

॥ १३६ ॥ निराकार ॥ ॥ १३७ ॥ अप्रमेय

* १४० प्रश्न:-आत्माके विशेषण कितने प्रकारके हैं

उत्तर:-आत्माके विशेषण । १३=विधेय
कहिye साक्षात्बोधक औ १३=निषेध कहिye प्रपञ्च
के निषेधद्वारा बोधक भेदते दो प्रकारके हैं ॥

॥ १३८ ॥ जैसे "सधवा" शब्द । विधवा स्त्रीका
निषेध करिके सुवामिनीस्त्रीका साक्षात्बोधक है । तैसे
"सत् " आदिऋविधेयविशेषण "सत्सत्" आदिक प्रपञ्च
के विशेषणोंका निषेध करिके सशक्तिरूप प्रकाशके
साक्षात्बोधक हैं । यार्ते " विधेय " कहिये ॥

॥ १३९ ॥ जैसे अविवकाशक विधवास्त्रीका
निषेध करिके । अर्थात् तार्ते विज्ञापण सुवामिनीस्त्रीका
बोधक है । तैसे अनन्यआदिक जे निषेधविशेषण हैं ।
जे अग्रआदिक प्रपञ्च प्रमाणोंका निषेधकरिके अर्थात्
निनते विज्ञापण प्रकाशके बोधक हैं । यार्ते " निषेध "
कहिये ॥

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥ १६६

* १४१ प्रश्न:-आत्माके विधेयविशेषण कौनसे हैं?

उत्तर:-१ सत् २ चित् ३ आनन्द ४ ब्रह्म
५ स्वयंप्रकाश ६ कूटस्थ ७ साक्षी ८ द्रष्टा
९ उपद्रष्टा १० एक इत्यादिक हैं ॥

* १४२ प्रश्न:-सत् आत्मा कैसे हैं ?

उत्तर:-१ जिसकी ज्ञानसे वा और किसीसे
वी निवृत्ति होवै नहीं । सो सत् है ॥

आत्माकी जाते ज्ञानसे वा और किसीसे वी
निवृत्ति होवै नहीं । याते आत्मा सत् है ॥

* १४३ प्रश्न:-चित् आत्मा कैसे है ?

उत्तर:-२ अलुप्तप्रकाश सो चित् है ॥

आत्मा जाते अलुप्तप्रकाशरूप है याते
आत्मा चित् है ॥

* १४४ प्रश्न - आनन्द आत्मा कैसी है ?

उत्तर—३ परम कदिये सर्वसँ अधिक प्रीतिका जो विषय । सो आनन्द है ॥

आत्माविषै जातै सर्वकी परमप्रीति है । यातै आत्मा आनन्द है ॥

* १४५ प्रश्न - ब्रह्मरूप आत्मा कैसी है ?

उत्तर —४

(१) आत्मा सच्चिन्मात्ररूप भुति युक्ति श्री अनुभवसँ सिद्ध है । श्री

(२) ब्रह्म की शास्त्र (उपनिषद्) विदै सच्चिन्मात्ररूप ब्रह्मादै ।

तातै आत्मा ब्रह्मरूप है ॥ किंवा

ब्रह्म नाम व्यापकका है ॥ जिसका देशनै शन न होवै सो व्यापक कहियेहै ॥

कला] ॥ आत्माके विशेषण । ७ ॥ १७१

(१) आत्मा जो ब्रह्मसँ भिन्न होवै तौ
देशतँ अन्तवाला होवैगा ।

(२) जिसका देशतँ अन्त होवै तिसका
कालतँ वी अन्त होवैहै । यह नियम है ॥

जिसका देशकालतँ अन्त होवै सो अनित्य
कहियेहै । तातँ आत्मा अनित्य होवैगा । यातँ
आत्मा ब्रह्मसँ भिन्न नहीं ॥ औ

(१) आत्मासँ भिन्न जो ब्रह्म होवै तौ ब्रह्म
अनात्मा होवैगा ॥

(२) जो अनात्मा घटादिक हैं सो जड
हैं । तातँ आत्मासँ भिन्न ब्रह्म । जड
होवैगा ।

सो वार्ता श्रुतिसँ विरुद्ध है ॥

यातँ आत्मासँ भिन्न ब्रह्म नहीं । तातँ ब्रह्मरूप
आत्मा है ॥

• १४६ प्रश्नः—स्वयंप्रकाश आत्मा कैसा है ?

उत्तर -५

(१) जो दीपककी भाँति आपके प्रकाशनै-
विरै किसीकी भी अपेक्षा करै नहीं । औ

(२) आव सूर्यका प्रकाशक होवै ।

सा स्वयंप्रकाश कहिये है ॥

ऐसा आत्माही है । यातैं आत्मा स्वयं
प्रकाश है ॥

अथवा

(१) जो सदा अपरोक्षरूप होवै । औ

(२) किसी ज्ञान का विषय न होवै ।

सो स्वयंप्रकाश कहियेहै ॥

आत्मा जातैं सदाअपरोक्षरूप है औ प्रकाश-
रूप होतैं। किसी भी ज्ञानका विषय (प्रकाश्य) न
होतैं । यातैं आत्मा स्वयंप्रकाश है ॥

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥ १७३

* १४७ प्रश्न:—कूटस्थ आत्मा कैसे है ?

उत्तर:—६ कूट नाम लोहारके अहिरनका है । ताकी न्यांई जो निर्विकार (अचल) रूपसे स्थित होवै । कूटस्थ कहियेहै ॥

जैसे लोहार अनेकघाट घडताहै । तौ वी अहिरन ज्युंका त्यूं रहताहै । तैसें मनरूपलोहार व्यवहाररूप अनेकघाट घडताहै । तौ वी आत्मा ज्युंका त्यूं रहताहै । यातैं आत्मा कूटस्थ है ॥

कूटस्थ कहनैसैं अचल औ अक्रिय अर्थसैं सिद्ध भया ॥

* १४८ प्रश्न:—साक्षी आत्मा कैसे है ?

उत्तर:—७

(१) लोकव्यवहारविषे

[१] उदासीन कहिये रागद्वैपरहित होवै

[२] समीपवर्ती होवै । औ

[३] चेतन होवै ।

सो सार्ची कहियेहै ॥

जातैं आत्मा

[१] देहादिकलैं उदासीन है । औ

[२] समीपगती है । औ

[३] चेतन कहिये अजडप्रकाश है ।

यातैं आत्मा सार्ची है ।

(२) या अत करणरूप उपाधिनाला चेतन
सार्ची कहियेहै ॥

(३) या अत करण औ अत करणकी वृत्ति-
नविये वर्तमान चेतनमात्र [बेयल-
चेतन] सार्ची कहियेहै ॥

ऐसा आत्मा है । यातैं सार्ची है ॥

* १४६ प्रश्न:-द्रष्टा आत्मा कैलें है ?

उत्तर:-८ देखनैहारा जो होवै सो द्रष्टा कहियेहै ॥

आत्मा जातैं सर्वदृश्यका जाननैहारा है । यातैं आत्मा द्रष्टा है ॥

* १५० प्रश्न:-उपद्रष्टा आत्मा कैसैं है ?

उत्तर:-९ जैसैं

(१-१५) यज्ञशालाविषै यज्ञकार्यके करनै-
हारे १५ ऋत्विज होवैहैं । औ

(१६) सोलवाँ यजमान होवैहैं । औ

(१७) सतरावाँ यजमानकी स्त्री होवैहैं । औ

(१८) अठारवाँ उपद्रष्टा कहिये पास
बैठके देखनैहारा- होवैहैं । सो कछु
वी कार्य करता नहीं ॥

सैं

(१-१५) स्थूलवेदरूप यज्ञशालाविने पांच-
मानइंद्रिय पांचकर्मइंद्रिय श्री पांच-
प्राण । ये १५ श्रुतिव्रज हैं ॥

(१६) सोलयां मनरूप यज्ञमान है । श्री

(१७) सतराश्री बुद्धिरूप यज्ञमानकी श्री है ।

(१८) ये सर्व आपआपके विषयके प्रवृत्त
करनैरूप योगमय यज्ञका कार्य
करतेहैं श्री इनसर्वका समीपवर्ती
ज्ञाननैरूप आत्मा अक्षरवां उप-
द्रष्टा है ॥

• १२ प्रश्न:-एक आत्मा कैतें है ?

उत्तर:-१० आत्माका सञ्चारीय कदिये
जानियेला और आत्मा नदी है । यार्तें आत्मा
एक है ॥

इत्यादिक आत्माके विधियधियेपण है ।

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥ १७७

* १५२ प्रश्नः—आत्माके निषेव्यविशेषणकौनसैं हैं?

उत्तरः—१ अनंत २ अखंड ३ असंग
४ अद्वितीय ५ अजन्मा ६ निर्विकार
७ निराकार ८ अव्यक्त ९ अव्यय १० अक्षर
इत्यादिक हैं ॥

* १५३ प्रश्नः—अनंत आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—१

(१) आत्मा व्यापक है ॥ तातैं आत्माका

देशतैं अंत नहीं । औ

(२) जातैं आत्मा नित्य है । तातैं आत्माका

कालतैं अंत नहीं । औ

(३) जातैं आत्मा अधिष्ठान होनैतैं सर्वका

स्वरूप है । तातैं आत्माका वस्तुतैं

अंत नहीं । औ

जातैं आत्माका देश काल औ वस्तुतैं अंत नहीं
कहिये परिच्छेद नहीं तातैं आत्मा अनंत है ॥

* १५४ प्रश्नः—अखंड आत्मा कैसे है ?

उत्तरः—२

(१) जीवईश्वरका भेद । जीवनका परस्पर-
भेद । जीवजडका भेद । अईश्वरका
भेद । जडजडका भेद । ये पांचभेद
हैं । तिनमें आत्मा रहित है । अथवा-

(२) सजातीय विजातीय स्वगत भेदमें
आत्मा रहित है ।

यानि आत्मा अखंड है ॥

* १५५ प्रश्नः—असंग आत्मा कैसे है ?

उत्तरः—३ संग नाम संबंध का है ॥

सो संबंध तीन प्रकारका हैः—(१) सजातीय-
संबंध (२) विजातीयसंबंध (३) स्वगतसंबंध ॥

(१) अपनी जातियांसे जो संबंध है । सो
सजातीयसंबंध है । जैसे ब्राह्मणका
अन्यब्राह्मणमें संबंध है ॥

(२) अन्यजातिवालेसँ जो संबंध है । सो विजातीयसंबंध है । जैसे ब्राह्मणका शूद्रसँ संबंध है ॥

(३) अपने अवयवसँ कहिये अंगनसँ जो जो संबंध है । सो स्वगनसंबंध है । जैसे ब्राह्मणका अपने हस्तपादमस्तक-आदिकअंगनसँ संबंध है ।

(१) [१] आत्मा (चेतन) एक है ।
तातँ ताकी जाति नहीं । औ

[२] जीव ईश्वर ब्रह्मा विष्णु शिव
में तू इत्यादिकभेद तो उपाधिके
कियेहैं । तातँ मिथ्या हैं ।

यातँ आत्माका काहूके साथि सजा-
तीयसंबंध बनै नहीं ॥

(२) तैसेँ आत्मा अद्वैत है औ सत् है । तिसतँ
भिन्न माया (अब्दान) औ मायाका

कार्य स्थूलसूक्ष्मप्रपञ्च प्रतीत होवैद्वै ।
 सो असत् है औ असत् कह्यु यस्तु
 नहीं । यातैं आत्माका काहूके साथि
 बिजातीयसंबंध बनै नहीं ॥

(३) तैलैं आत्मा निरवयव है औ सच्चिदा
 नन्दादिक तो आत्माके अवयव नहीं ।
 किंतु एकरूप होनेतैं आत्माका
 स्वरूप है । तातैं आत्माका काहूके
 साथि स्वगतसंबंध बनै नहीं ॥

इसरीतिसैं आत्मा सर्वसंबंधसैं रहित है यातैं
 असंग है ।

॥ ५६ प्रश्न — अद्वैत आत्मा कैसे है ।

उत्तर — ४ द्वैत जो प्रपञ्च । सो स्वप्नकी
 न्याई कल्पित होनेतैं वास्तव नहीं है । यातैं
 आत्मा द्वैतसैं रहित होनेतैं आत्मा अद्वैत है ॥

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥ १८१

*१५७ प्रश्न:-अजन्मा आत्मा कैसँ है ?

उत्तर:-५ स्थूलदेहका धर्म जन्म है ॥

सूक्ष्मदेहका धर्म बी नहीं तौ आत्माका धर्म
जन्म कहाँसँ होवैगा ?

फेर जो आत्मा का जन्म मानिये तौ आत्माका
मरण बी मानना होवैगा । तातँ आत्मा अनित्य
सिद्ध होवैगा । सो परलोकवादी आस्तिकनकूँ
अनिष्ट कहिये अवाञ्छित है । काहेतँ

(१) जन्ममरणवाला वस्तु है ताका आदि-
अंतविषै अभाव है । तातँ पूर्वजन्म-
विषै आत्मा नहीं था औ तिसके
कर्म बी नहीं थे । तब इस जन्मविषै
आत्माकूँ कर्मसँ बिना भोग होवैहै । औ

(२) मरखुलें अनंतर आत्मा नहीं होवैगा ।
तार्ने इसजन्मविषै किये कर्मका भोगसँ
बिना नाश होवैगा ।

तासँ वेदोक्तकर्मकी व्यर्थता होवैगी । पातँ
आत्माका धर्म जन्म नहीं ॥ तातँ आत्मा
अजन्मा है । औ

अजन्मा कहुनैलें अजरअमरअर्थसँ सिद्ध
भया ॥

*१५= प्रश्न — निर्विग्रह आत्मा कैसै है ?

उत्तर — ६ जैसे (१) घटके जन्म (२)
अस्तित्वता कहिये प्रकटता (३) वृद्धि (४)
विपरिणाम (५) अपक्षय (६) विनाश । ये
षट्धर्म हैं । परंतु घटविषै स्थित औ घटसँ भिन्न
जा आकाश ह । तिसके धर्म नहै ॥

तैसै

(१) “देह जन्मताहै” यह जन्म ॥

(२) “देह जन्म्याहै” यह अस्तिपना
(पूर्व नहीं था । अब है) ॥

(३) “देह बालक भया” यह वृद्धि ।

(४) “देह युवा भया” यह विपरिणाम ।

(५) “देह वृद्ध भया” यह अपक्षय ॥

(६) “देह मरणकूं पाया” यह विनाश ॥

ये षट्कार देहके धर्म हैं ॥ देहकूं जाननै-
हारा अरु देहसै न्यारा जो आत्मा है । तिसके
धर्म नहीं ॥

इसरीतिसै षट्कारनतैं रहित आत्मा
निर्विकार है ॥

● १५६ प्रश्न — निराकार आत्मा कैसा है ?

उत्तर:— ७ (१) स्थूल (२) सूक्ष्म (३) लघु (४) टुका कहिये छोटा ।
व्यापकप्रकारके अवस्थित आकार हैं ॥

(१) आत्मा । इन्द्रिय और मनः
अधिष्य होनेमें सूक्ष्म है । तब
स्थूल नहीं ॥

(२) आत्मा व्यापक है तब सूक्ष्म नहीं
कहिये अणु नहीं ॥

(३-४) आत्मा सर्वविकाने ओतप्रोत है ।
तब लघु और टुका नहीं ॥

याने आत्मा निराकार है ॥

● १५६ प्रश्न — अव्यक्त आत्मा कैसा है ?

उत्तर — ८ आत्मा । जहाँ मनःन्द्रिय
आदिकका अगोचर होनेमें अस्पष्ट है । याने
आत्मा अव्यक्त है ।

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥७॥ १८५

१६१*प्रश्नः—अव्यय आत्मा कैसै है ?

उत्तरः—६ जैसै कोठेमें धान्यके निकासनै-
करि धान्यका व्यय कहिये घटना होवैहै । तैसै
आत्माका व्यय होवै नहीं । यातैं आत्मा
अव्यय है ॥

*१६२प्रश्नः—अक्षर आत्मा कैसै है ?

उत्तरः—१० आत्मा जातैं क्षर कहिये नाशतैं
रहित है । यातैं आत्मा अक्षर है ॥ याहीकुं
अक्षय । अमृत औ अविनाशी वी कहैहैं ॥

इसरीतिसै आत्माके निषेध्यविशेषण हैं ॥

*१६३प्रश्नः—ये कहे जो आत्माके विशेषण । सो
परस्परअभिन्न किसरीतिसै है ?

उत्तरः—सच्चिदानंदादिक जो आत्माके गुण
होवैं तौ परस्परभिन्न होवैं । औ ये आत्माके
गुण नहीं । किंतु स्वरूप हैं । यातैं परस्परभिन्न
नहीं । किंतु अभिन्न हैं । औ

१ एकही आत्मा नाशरहित है। यातें सत्
कहियेहै। श्री

२ जइसै विलक्षण प्रकाशरूप है। यातै चित्
कहियेहै। श्री

३ दु खसै विलक्षण मुख्यमीतिका विषय है
यातै आनंद कहियेहै ॥

ऐसै सर्व विशेषणविषै जानना ॥

दृष्टान्तः—

जैसे एकही पुण्य

१ पिताकी दृष्टिसे पुत्र कहियेहै। श्री

२ पितामहकी दृष्टिसे पौत्र कहियेहै। श्री

३ पितृभ्राताकी दृष्टिसे भ्रातृज कहियेहै।

४ मातुलकी दृष्टिसे भण्डीज कहियेहै।

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥ १८७

किंवा जैसे एकहीं संन्यासी ।

१ पशु स्त्री गृहस्थ अदंडी आदिकनकी दृष्टिसँ
मनुष्य पुरुष त्यागी दंडी इत्यादि विधेय-
विशेषणोंकरिके कहियेहै । औ

२ घट पापाण वृत्त आदिककी दृष्टिसँ अघट
अपापाण अवृत्त आदिक निषेधविशेषणों-
करिके कहियेहै ॥

तैसेँ एकही आत्मा प्रपंचके विशेषण असत्
जड दुःख औ अंत खंड सङ्ग आदिकी दृष्टिसँ
सत् चित् आनंदादिक औ अनंत आदिक कहियेहैं ॥
इसरीतिसँ कहे जो आत्माके विशेषण सो
परस्पर भिन्न नहीं । किंतु अभिन्न हैं ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये आत्मविशेषण
वर्णननामिका सप्तमकला समाप्ता ॥७॥

अथ अष्टमकलाप्रारम्भः ॥ ८ ॥

॥ सत्चित्त्यानन्दका विशेषवर्णन ॥

॥ इन्द्रियजय छंद ॥

सच्चिदानन्दसस्पर्हि मैं यह ।
सद्गुरुके सुखसैं पहिधान्यो ॥
जागृत स्वप्न सुषुप्ति ज आदिक
तीनहुँ कालहिमैं परमान्यो ॥
जागृतआदि लयाविध तीनहुँ
कालहि हों इसने सत मान्यो ॥
तीनहुँ कालाविषै सय जानहुँ ।
या दिग्मे विदरूपहि जान्यो ॥ १४ ॥

अष्टमकला]॥सत्चित्आनन्दका विशेषवर्णनात्॥२८६

मैं प्रिय हूँ धन पुत्र रु १४० पुद्गल-
आदिकर्तै अथकाल १४१ अगान्यो ॥

आतमअर्थ सबे प्रिय आतम-
आपहि है प्रिय दुःख नसान्यो ॥

या हित मैं सबतै प्रियतम्म रु ।

हों परमानंद दुःखहि भान्यो ॥

देह १४२ दशादि अतीत सु आतम ।

पूरणब्रह्म पीतांबर गान्यो ॥ १७ ॥

* १६४ प्रश्नः-सत् सो क्या है ?

उत्तरः-१ तीनकालमें जो अबाधित होवे ।
सो सत् है ॥

* १६५ प्रश्नः-चित् सो क्या है ?

उत्तरः-२ तीनकालमें जो सर्वकुं जानै
सो चित् है ॥

॥ १४० ॥ स्थूलशरीर ॥ १४१ तृप्त ॥

॥ १४२ ॥ अवस्थाआदिकर्तै ॥

* १६६ प्रश्नः—आनन्द सो क्या है ?

उत्तरः—३ तीनकालमें जो परमप्रेमका विषय होवे । सो आनन्द है ॥

* १६७ प्रश्नः—मैं सत् हूँ । यह कैसे जानना ?

उत्तरः—१ तीनकालविषय मैं हूँ । यार्त मैं सत् हूँ । यह ऐसे जानना ॥

* १६८ प्रश्न —तीनकालविषय मैं हूँ । यार्तैं सा हूँ । यह कैसे जानना ?

उत्तरः—

१ (१) जाग्रतविषय मैं हूँ ।

(२) स्वप्नविषय मैं हूँ ।

(३) सुषुप्तिविषय मैं हूँ ॥

२ (१) नैसर्ग प्रातःकालविषय मैं हूँ ।

(२) मध्याह्नकालविषय मैं हूँ

(३) स्या

कला]॥ सत्चित्त्रानन्दका विशेषवर्णन॥८॥१६१

३ (१) तैसैं दिवसविषै में हूं ।

(२) रात्रिविषै में हूं ।

(३) पक्षविषै में हूं ॥

४ (१) तैसैं मासविषै में हूं ।

(२) ऋतुविषै में हूं

(३) वर्षविषै में हूं ।

५ (१) तैसैं बाल्यअवस्थाविषै में हूं ।

(२) यौवनअवस्थाविषै में हूं ।

(३) वृद्धअवस्थाविषै में हूं ॥

६ (१) तैसैं पूर्वदेहविषै में हूं* ।

(२) इसदेहविषै में हूं ।

(३) भावीदेहविषै में हूं ॥

* या प्रकरणविषै “ था ” अरु “ होऊंगा ” ऐसैं उच्चारण करनेके योग्य भूत श्री भविष्यत्कालका बी “ हूं ” ऐसैं वर्त्तमानकी न्याई उच्चारण कियाहै । सो

७ (१) तैसैं युगविधै में हं ।

(२) मनुविधै में हं ।

(३) करुणविधै में हं ॥

८ (१) तैसैं मूलकालविधै में हं ।

(२) वर्तमानकालविधै में हं ।

(३) भविष्यत्कालविधै में हं ॥

इसरीतिसैं तीनकालविधै में हं । यार्तैं सत्
हूँ । यह जानना ॥

भनादिशब्दकी वक्ष्यनामात्रता (निवृत्ताव) के सूचन
करने अर्थ है ॥ की आत्माकी सदादिरूपताविधै सृति-
आदिक अनेकप्रसङ्गोंका समुदाय है करुणकी किसी-
कालमें भगवत्पदविधै प्रमाणका अभाव है यार्तैं सर्व-
कालोविधै आत्मा सविषदान्तरूप सिद्ध है । यह जानना ॥

कला] सत्चित्आनंदका विशेषवर्णन ॥८॥१६३

* १६६ प्रश्नः—मेरेसँ भिन्न नामरूपवस्तुसहित
तीनकाल क्या जाननै ?

उत्तरः—मेरेसँ भिन्न नामरूपवस्तुसहित-
तीनकाल असत् हैं ऐसँ जाननै ?

* १७० प्रश्नः—सत् औ असत्का निर्णय किससँ
होवैहै ?

उत्तरः—सत् औ असत्का निर्णय
अन्वय व्यतिरेकरूप युक्तिसँ होवैहै ॥

* १७१ प्रश्नः—सत्असत्के निर्णयविषै अन्वय
व्यतिरेकरूप युक्ति कैसँ जाननी ?

उत्तरा—

१ (अ) जो मैं जाग्रत्विपै हू ।

सोई मैं स्वप्नविपै हूँ ।

यातै मैं सत् हू ।

(इय) जाग्रत् मेरेविपै नहीं

यातै यह जाग्रत् असत् है

(अ) जो मैं स्वप्नविपै हूँ ।

सोई मैं सुषुप्तिविपै हू ।

यातै मैं सत् हूँ ॥

(इय) स्वप्न मेरेविपै नहीं ।

यातै यह स्वप्न असत् है ॥

(अ) जो मैं सुषुप्तिविपै हू ।

सोई मैं प्रातःकालविपै हूँ ।

यातै मैं सत् हूँ ॥

(इय) सुषुप्ति मेरेविपै नहीं ।

यातै यह सुषुप्ति असत् है ॥

कला] ॥ सत्चिन्मनानन्दकाविशेषवर्णन ॥८॥ १६५

२ (अ) जो मैं प्रातःकालविपै हूं ।
सोई मैं मध्याह्नकालविपै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) प्रातःकाल मेरेविपै नहीं ।
यातैं यह प्रातःकाल असत् है ॥

(अ) जो मैं मध्याह्नकालविपै हूं-
सोई मैं सायंकालविपै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) मध्याह्नकाल मेरेविपै नहीं ।
यातैं यह मध्याह्नकाल असत् है ।

(अ) जो मैं सायंकालविपै हूं ।
सोई मैं दिवसविपै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) सायंकाल मेरेविपै नहीं ।
यातैं यह सायंकाल असत् है ॥

३ (अ) जो मैं दिवसविधै हूं ।

सोई मैं रात्रिविधै हूं ।

यानैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) दिवस मेरेविधै नहीं ।

यानैं यह दिवस असत् है ॥

(अ) जो मैं रात्रिविधै हूं ।

सोई मैं पक्षविधै हूं ।

यानैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) रात्रि मेरेविधै नहीं ।

यानैं यह रात्रि असत् है ॥

(अ) जो मैं पक्षविधै हूं ।

सोई मैं मासविधै हूं ।

यानैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) पक्ष मेरेविधै नहीं ।

यानैं यह पक्ष असत् है ॥

(अ) जो मैं मासविषै हूं ।

सोई मैं ऋतुविषै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) मास मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह मास असत् है ॥

(अ) जो मैं ऋतुविषै हूं ।

सोई मैं वर्षविषै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) ऋतु मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह ऋतु असत् है ॥

(अ) जो मैं वर्षविषै हूं ।

सोई मैं बाल्यअवस्थाविषै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) वर्ष मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह वर्ष असत् है ॥

५ (अ) जो मैं बाल्यअवस्थाविधै हू ।
 सोई मैं यौवनअवस्थाविधै हू ।
 यातैं मैं सत् हू ॥

(६५) बाल्यअवस्था मेरेविधै नहीं ।
 यातैं यह बाल्यअवस्था असत् है ॥

(अ) जो मैं यौवनअवस्थाविधै हू ।
 सोई मैं वृद्धअवस्थाविधै हू ।
 यातैं मैं सत् हू ॥

(६६) यौवनअवस्था मेरेविधै नहीं ।
 यातैं यह यौवनअवस्था असत् है ॥

(अ) जो मैं वृद्धाअवस्थाविधै हू ।
 सोई मैं पुर्यदेहविधै हू ।
 यातैं मैं सत् हू ॥

(६७) वृद्धाअवस्था मेरेविधै नहीं ।
 यातैं यह वृद्धाअवस्था असत् है ॥

(अ) जो मैं पूर्वदेहविपै हूं ।

सोई मैं इसदेहविपै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) पूर्वदेह मेरेविपै नहीं ।

यातैं यह पूर्वदेह असत् है ॥

(अ) जो मैं इसदेहविपै हूं ।

सोई मैं भावीदेहविपै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) यह देह मेरेविपै नहीं ।

यातैं यह देह असत् है ॥

(अ) जो मैं भावीदेहविपै हूं ।

सोई मैं युगविपै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ।

(व्य) भावीदेह मेरेविपै नहीं ।

यातैं यह भावी देह असत् है ॥

७ (अ) जो मैं युगविपै हूं ।
 सोई मैं मनुविपै हूं ।
 यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) युग मेरेविपै नहीं ।
 यातैं यह युग असत् है ॥

(अ) जो मैं मनुविपै हूं ।
 सोई मैं कल्पविपै हूं ।
 यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) मनु मेरेविपै नहीं ।
 यातैं यह मनु असत् है ॥

(अ) जो मैं कल्पविपै हूं ।
 सोई मैं भूतकाल विपै हूं ।
 यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) कल्प मेरेविपै नहीं ।
 यातैं यह कल्प असत् है ॥

कला] ॥ सत्चित्आनंदका विशेषवर्णन ॥८॥ २०१

८ (अ) जो मैं भूतकालविषै हूं । सोई मैं
भविष्यत्कालविषै हूं । यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) भूतकाल मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह भूतकाल असत् है ॥

(अ) जो मैं भविष्यत्कालविषै हूं ।
सोई मैं वर्तमानकालविषै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) भविष्यत्काल मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह भविष्यत्काल असत् है ॥

(अ) जो मैं वर्तमानकालविषै हूं ।
सोई मैं सर्वकालविषै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) वर्तमान काल मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह वर्तमानकाल असत् है ॥

इसरीतिसैं सत् असत्के निर्णयविषै अन्वय-
व्यतिरेकरूप युक्ति जाननी ॥

● १७० प्रश्न - चित् कैसे है ॥

उत्तर:—२ तीनकालविषय में जानता है
याने में चित् है ॥

● १७१ प्रश्न:—तीनकालविषय में जानता है य
चित् है । यह कैसे जानता ?

उत्तर:—

१ [१] जाग्रत्कृ में जानता है ।

[२] स्वप्नकृ में जानता है ।

[३] सुषुप्तिकृ में जानता है ।

२ [१] तैसै प्रातःकालकृ में जानता है ।

[२] मध्याह्नकालकृ में जानता है ।

[३] सायंकालकृ में जानता है ।

३ [१] तैसै दिवसकृ में जानता है ।

[२] रात्रिकृ में जानता है ।

[३] पक्षकृ में जानता है ।

४ [४] तैसै मासकृ में जानता है ।

कला]॥ सत्चित्आनन्दकाविशेषवर्णन॥६॥ २०३

- [२] ऋतुकुं मैं जानताहूं ।
[३] वर्षकूं मैं जानताहूं ॥
- ५ [१] तैसैं बाल्यअवस्थाकूं मैं जानताहूं ।
[२] यौवनअवस्थाकूं मैं जानताहूं ।
[३] वृद्धअवस्थाकूं मैं जानताहूं ॥
- ६ [१] तैसैं पूर्वदेहकूं मैं जानताहूँ ।
[२] इस देहकूं मैं जानताहूं ।
[३] भावीदेहकूं मैं जानताहूं ॥
- ७ [१] तैसैं युगकूं मैं जानताहूं ।
[२] मनुकूं मैं जानताहूं ।
[३] कल्पकूं मैं जानताहूं ॥
- ८ [१] तैसैं भूतकालकूं मैं जानताहूं ।
[२] भविष्यत्कालकूं मैं जानताहूं ।
[३] वर्त्तमानकालकूं मैं जानताहूं ॥

इसरोतिसैं सर्वकालविषै मैं जानताहूं । यातैं
चित् हूं । यह जानना ॥

• १७४ प्रश्नः—मेरेमें भिन्न नामरूपधस्तुसहित
तीनकाल क्या जानने ?

उत्तरः—मेरेमें भिन्न नामरूपधस्तुसहित
तीनकाल जड़ हूँ । ऐसं जानने ॥

१७५ प्रश्नः—चित् श्री जड़का निर्णय किससे
होयेदे ?

उत्तरः—चित् श्री जड़का निर्णय
अन्वयव्यतिरेकरूप युक्तिसे होयेदे ॥

• १७६ प्रश्नः—चित् श्री जड़के निर्णयविषये अन्वय
व्यतिरेकरूप युक्ति कैसे जाननी ?

उत्तर —

१ (अ) मैं आप्रत्यक्ष जानताहूँ ।

मोरे में स्वप्नक्ष जानताहूँ ।

जान मैं चित् हूँ ॥

कला] ॥ सत्चित् आनन्दका विशेषवर्णन ॥ ८ ॥ २०५

(अ) जो मैं स्वप्नकृं जानता हूं ।

सोई मैं सुषुप्तिकृं जानता हूं ।

यातैं मैं चित् हूं ॥

(व्य) स्वप्न मेरेकृं जानै नहीं ।

यातैं यह स्वप्न जड है ॥

इत्यादि इसरीतिसैं चित् औ जडके निर्णयविषै

अन्वयव्यतिरेकरूप युक्ति जाननी ॥

* १७७ प्रश्न:—आनन्द मैं कैसैं हूं ?

उत्तर:—३ तीनकालविषै मैं परमप्रिय हूं ।

यातैं मैं आनन्द हूं ॥

* १७८ प्रश्न:—तीनकालविषै मैं प्रिय हूं यातैं
आनन्द हूं । यह कैसैं जानना ?

उत्तरः—

- १ (१) जाग्रत्स्थिति में प्रिय है ।
 (२) स्वप्नस्थिति में प्रिय है ।
 (३) सुषुप्तिस्थिति में प्रिय है ॥
- २ (१) तैसै प्रातःकालस्थिति में प्रिय है ।
 (२) मध्याह्नकालस्थिति में प्रिय है ।
 (३) सायंकालस्थिति में प्रिय है ॥
- ३ (१) तैसै दिवसस्थिति में प्रिय है ।
 (२) रात्रिस्थिति में प्रिय है ।
 (३) पक्षस्थिति में प्रिय है ॥
- ४ (१) तैसै मासस्थिति में प्रिय है ।
 (२) ऋतुस्थिति में प्रिय है ।
 (३) वर्षस्थिति में प्रिय है ॥
- ५ (१) तैसै वात्स्यश्रवण्यास्थिति में प्रिय है ।
 (२) रौप्यश्रवण्यास्थिति में प्रिय है ।
 (३) मृदश्रवण्यास्थिति में प्रिय है ॥

कला] ॥ मतचित्तानन्दका वर्णन ॥ ८ ॥ २०७

- ६ (१) तैसैं पूर्वदेहविणै में प्रिय हूं ।
(२) इसदेहविणै में प्रिय हूं ।
(३) भारीदेहविणै में प्रिय हूं ॥
- ७ (१) तैसैं युगविणै में प्रिय हूं ।
(२) मनुविणै में प्रिय हूं ।
(३) कल्पविणै में प्रिय हूं ॥
- ८ (१) तैसैं भूतकालविणै में प्रिय हूं ।
(२) भविष्यत्कालविणै में प्रिय हूं ।
(३) वर्त्तमानकालविणै में प्रिय हूं ॥

इसरीतिसैं तीनकालविषेपरमप्रिय हूं । यातें
में आनन्द हूं । यह जानना ॥

* १७६ प्रश्नः—मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित
तीनकाल क्या जाननै ?

उत्तरः—मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित
तीनकाल दुःख हैं ऐसैं जानना ॥

७१८० प्रश्न:-आनन्द औ दुःखका निर्णय किससे होवेदे ?

उत्तर:-आनन्द औ दुःखका निर्णय अन्यथव्यतिरेकरूप युक्तिसे होवेदे ।

* १८१ प्रश्न:-आनन्द औ दुःखके निर्णयविषे अन्यथव्यतिरेकरूप युक्ति कैसे जानमी ?

उत्तर —

(अ) जो मैं जाग्रत्विषे [परम] प्रिय हूँ ।

सोई मैं स्वप्नविषे प्रिय हूँ ।

याते मैं १४१ आनन्द हूँ ॥

(व्य) जाग्रत् मेरेकुं प्रिय नहीं ।

याते यह जाग्रत दुःख है ॥

इसरातिसे आनन्द औ दुःखके निर्णयविषे अन्यथव्यतिरेकरूप युक्ति जाननी ॥

कला]॥सत्चित्आनन्दका विशेषवर्णन ॥ ८॥२०६

* १८२ प्रश्न:-मैं परमप्रिय हूं । यह कैसे जानता?

उत्तर:—दृष्टांत:—

१ जैसे पुत्रके मित्रविणै प्रीति है । सो पुत्रवास्ते है । श्री

२ पुत्रविणै जो प्रीति है । सो तिसके मित्रवास्ते नहीं ।

यातै' पुत्र अधिकप्रिय है ॥

भासताहै । सो सो काल यद्यपि दुःखरूप है । तथापि
१ अध्यासकरिके आत्माकूं चिदाभासद्वारा प्रिय
भासताहै ॥ तब अन्यकाल प्रिय भासते नहीं । यातै'
सर्वकालमें व्यभिचारीप्रीति है । तातैं ये वास्तव
दुःखरूपहीं हैं । श्री

२ आत्मामें कहिये आपमें अव्यभिचारी(सर्वदा)
प्रीति है । यातै' आत्मा आनन्दरूप है ।

१ तैसै धनपुत्रादिकविधै जो प्रीति है । सो
आत्माके वास्ते है । श्री

२ आत्माविधै जो प्रीति है । सो धनपुत्रादिकके
वास्ते नहीं ।

यानै आत्मा अधिकप्रिय है ॥

इसगीतिसें मैं परमप्रिय हूं । यह जानना ॥

• १८३ प्रश्न प्रीतिका न्यून अधिकभाव कैसे
जानना ?

उत्तर:—

१ ज्ञातृविधै नदंसे प्रिय द्रव्य है ।

काहेन धनवास्ते पुरुष वेश छोड़िके परदेश
जातै श्री अनेकनीचकर्म करताई । यारै द्रव्य
प्रिय है ॥

२ द्रव्यन पुत्र प्रिय है । काहेन पुत्र
दुष्कर्मकरै राजगृहविधै बन्धनकू पयाहोषै
तब निसकू धन दके छुटायताई । यारै धनतै
पुत्र प्रिय है ॥

कला] ॥ सत्चित्स्थानंदका विशेषवर्णन ॥८॥ २११

३ पुत्रतैं शरीर प्रिय है । काहेतैं जब दुर्भिक्ष कहिये दुष्काल होवै । तब पुत्रकूं बेचके शरीरका निर्वाह करैहै । यातैं पुत्रतैं शरीर प्रिय है ॥

४ शरीरतैं इंद्रिय प्रिय है । काहेतैं कोई मारनै आवै तब इंद्रियनकूं छुपायके “मेरे शरीर-विषै मार । परन्तु आंख कान नाक मुखविषै मारना नह्यै ” ऐसैं कहताहै । यातैं शरीरतैं इंद्रिय प्रिय है ॥

५ इंद्रियतैं प्राण (मन) प्रिय है । काहेतैं किसीकूं दुष्टकर्म करनैसैं राजाका हुक्म भयाहोवै कि “ इसके प्राण लेने ” तब कहता-है कि मेरे धन पुत्र स्त्री गृह लूट ल्यो ।

परन्तु प्राण मत लेना । तौ वो राजाकी आशा तौ प्राणके लेनेविषे है । तब कहताहै कि “ मेरा काम काटो । मारू काटो । हाथ काटो । पाउ काटो । परन्तु मेरे प्राण मत लेना ” । यार्त इद्रियनै प्राण प्रिय है ।

६ प्राणने आत्मा प्रिय है । जाहेत किसीक अनिशयइयाधिसै पीडा होतीहोषै । तब कहताहै कि “ मेरे प्राण जाये तब मैं सुखी होऊ ” यार्त प्राणनै आत्मा प्रिय है ॥

इसरीतिसै प्रीनिका व्यूनअधिकभाष जानना ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये सच्चिदानन्दविशेष-
घर्णननाभिका अष्टमकला समाप्ता ॥ ८ ॥

अथ नवमकलाप्रारम्भः ॥ ९ ॥

॥ अवाच्यसिद्धांतवर्णन ॥

॥ इन्द्रविजयल्लंद ॥

ब्रह्म अहै मनवानि-अगोचर ।

शास्त्र रु संत कहै अरु ध्यावै ॥

वेद चदें ललुनादिकरीति रु

वृत्ति विआप्ति जनो मन लावै ॥

हैं जु सदादिविधेयविशेषण ।

वे असदादिक भिन्न कहावै ॥

सत्य अपेक्षिक आदि विरोधि^{१४४}जु

अस तर्जा^{१४५}परमार्थ लखावै ॥१८॥

॥ १४४ ॥ आपेक्षिकसत्य । वृत्तिज्ञान औ विषया-
नंदआदिक विरोधि जो अंश है । ताकूं त्यागिके ॥

॥ १४५ ॥ वास्तवरूप ओ निरपेक्षसत्य । चेतनरूपज्ञान
औ स्वरूपानंद आदिक । ताकूं लक्षणसैं बोधन करै हैं ॥

हे जु अनंत अम्वंड असंग रु
अद्वयआदिनिपेध्य रहावै ॥

वे परपंच निपेघ करी अव-
शेषितवस्तु गिराषिन गावै ॥

यूं परमात्म आत्म देवर्ता ।
वेद रु शास्त्र सचे सुरटायै ॥

१४५ पट्टिन त्यागि अभास पीतांबर ।
श्रुति अह अपरोक्षहि पावै ॥ १६ ॥

॥ १४६ ॥ पट्टिनपीतांबर कहेई कि—आभास
(कल्पना) अह (श्रुति) अपरोक्षहि (इतिवृत्तिवृत्ति)
अपरोक्षज्ञान ॥ यह अर्थ है ॥

८४ प्रश्नः—ब्रह्मात्मा जब वाणीका विषय नहीं ।
तब सत्चित्आनन्दआदिकविशेषणसे
कैसे कहिये है ?

तारः—ब्रह्मात्माके कितनैक १४७ विधेयविशेषण
हैं औ कितनैक १४८ निषेध्यविशेषण हैं । तिनमें
१ विधेयविशेषण जो सदादिक हैं । सो प्रपंच
का निषेधकरिके अवशेष (बाकी रहे) ब्रह्मकू
१४९ लक्षणसे साक्षात्बोधन करैहैं । औ
२ निषेध्यविशेषण जो अनन्तादिक हैं । सो तो
साक्षात्प्रपंचकाही निषेध करैहैं औ तिसरें
विलक्षण ब्रह्मात्मा अर्थतैं सिद्ध होवैहै ।
तातैं ब्रह्मात्मा अवाच्य होनैतैं किसी विशेषणसे
नहीं कहियेहै ॥

॥ १४७ ॥ ‘ सत् है । चित् है ’ । इसप्रकार
विधिमुखसे ब्रह्मके बांधकपद विधेयविशेषण हैं ।

॥ १४८ ॥ ‘ अनन्त (अन्तवाला नहीं) ’ ‘अखंड

(स्वदय सा नदी) ' इयमकार निषेधमुवर्त्तते ' महा-
बोधकपद निषेध्यविशेषण है ।

॥ १४६ ॥

१ (वा) माया भी प्रपञ्चविधै आपेक्षिकमायता है भी
महाविधै निरपेक्षमायता है । दोनू मिलिके
' सत् ' पदका वाक्य है । भी

(ज) मायाकी सत्पताहू शक्तिके केवलमहाही
मायता लक्ष्य है ॥

२ (वा) अतः कण्ठका पृथिरूपा ज्ञान भी चेतनरूपा
ज्ञान । दोनू मिलिके ' चित् ' पदका
वाक्य है ।

(ज) पृथिज्ञानकू खोदिके केवलचेतनरूप ज्ञान
लक्ष्य है ॥

३ (वा) विषयानन्द । य ममानन्द भी प्रधानन्द । तीन्
मिलिके ' आनन्द ' पदका वाक्य है ॥

(ज) दन्तू का रके केवलप्रधानन्द आनन्द-
पदक लक्ष्य है ॥

४ (वा) माया औ ताके कार्य आकाशादिकविषै आपेक्षिकव्यापकता है अरु ब्रह्म (आत्मा) विषै निरपेक्षव्यापकता है । दोनू मिलिके 'ब्रह्म' (विभु) पदका वाच्य है ॥

(ल) केवलब्रह्म ' ब्रह्म ' पदका लक्ष्य है ॥

(वा) साभासद्युद्धिविषै आपेक्षिकस्वप्रकाशता है औ चेतनविषै निरपेक्षस्वप्रकाशता है । दोनू मिलिके 'स्वयंप्रकाश' पादका वाच्य है ॥

(ल) केवलचेतन स्वयंप्रकाश लक्ष्य है ॥

(वा) रज्जुआदिकविषै आपेक्षिकअविकारिता है औ चेतनविषै निरपेक्षअविकारिता है । ये दोनू मिलिके 'कूटस्थ' पदका वाच्य है ॥ औ

(ल) केवलचेतन 'कूटस्थ' पदका लक्ष्य है ॥

५ (वा) लौकिकमाद्यी औ मायाअविद्याउपहितचेतन (ब्रह्म औ आत्मा , दोनू मिलिके 'माद्या' पदका वाच्य है । औ

(क) केवलमायाश्रयिणा उपहितचेतन
पदका सदय है ।

(वा) सामान्यतःकरणकी वृत्तिरूप
विशिष्ट (सहित) चेतन । ' ?
वाच्य है । श्री

(छ) कवचचेतनभावा 'द्रष्टा' पदका

(वा) यज्ञक उपद्रष्टा श्री प्रत्यगात्मा
'उपद्रष्टा' पदका वाच्य ।

(झ) कवचप्रत्यगात्मा 'उपद्रष्टा' पद

० (वा) लोकगत एकाकीपुरुष श्री सत्
महा 'एक'पदका वाच्य है

(छ) केवलमहा 'एक'पदका सदय
ऐसे अनुक्तग्रन्थविधेयविशेषणोंविधे ५

हमरीतिसी प्रत्यक्ष 'असत्' आ
निषेधक सत्तादिपक्षोंके अर्थविधे श्री भा
प्रवृत्ति है ॥

१८५ प्रश्नः—सदादिकविधेयविशेषण । प्रपञ्च
का निषेधकरिके अवशेषब्रह्मकृं कैसें
बोधन करैहैं ?

उत्तरः—

१ सत् कहनैसैं असत्का निषेध भया । बाकी
रह्या सद्रूप । सो लक्षणासैं सिद्ध है ॥

२ चित् कहनैसैं जड़का निषेध भया । बाकी
रह्या चिद्रूप । सो लक्षणासैं सिद्ध है ॥

३ आनंद कहनैसैं दुःखका निषेध भया । बाकी
रह्या आनंद(सुख)रूप । सो लक्षणासैं सिद्ध है ।

४ ब्रह्म कहनैसैं परिच्छिन्नका निषेध भया ।
बाकी रह्या व्यापक । सो लक्षणासैं सिद्ध है ।

५ स्वयंप्रकाश कहनैसैं परप्रकाशका निषेध
भया । बाकी रह्या स्वयंप्रकाश । सो लक्षणा-
सैं सिद्ध है ॥

६ कृश्च (अविकारी) कहनैसँ विकारका ~
निषेध भया । बाकी रखा निर्विकारी । सो
लक्षणासँ सिद्ध है ॥

७ साक्षी कहनैसँ साक्षका निषेध भया ।
बाकी रखा साक्षी । सो लक्षणासँ सिद्ध है ॥

८ द्रष्टा कहनैसँ दृश्यका निषेध भया । बाकी
रखा द्रष्टा । सो लक्षणासँ सिद्ध है ॥

९ उपद्रष्टा कहनैसँ उपद्रवका कहिये समीप
कस्तुका निषेध भया । बाकी रखा उपद्रष्टा ।
सो लक्षणासँ सिद्ध है ॥

१० एक कहनैसँ नानाका निषेध भया । बाकी
रखा एक । सो लक्षणासँ सिद्ध है ॥

इसरीनिमै अन्यविधेयविशेषणविधे की जानना ॥

कला] ॥ अवाच्यसिद्धान्तवर्णन ॥६॥ २२१

* १८६ प्रश्नः—अनन्तादिकनिषेध्यविशेषण । प्रपञ्च
का निषेध कैसें करैहें ?

उत्तरः—

अनन्त कहनैसैं देशकालवस्तुकृतपरिच्छेद
का निषेध भयो । बाकी रह्या अनन्त । सो अर्थसैं
सिद्ध है ॥

इसरीतिसैं अन्यनिषेध्यविशेषणनविणै बी
जानना ॥

* १८७ प्रश्नः—इन विशेषणनका ऐसैं अर्थ करनै
का क्या प्रयोजन है ?


उत्तरः—इन विशेषणनका ऐसैं अर्थ करनै-
का प्रयोजन यह है कि । चेतनकूँ मनवाणीका
अविप्रय करनैहारी श्रुतिके अर्थका अविरोध

होवैहै ॥ जाते गुण किया जाति औ संयंधादिक
जो शब्दकी अरु मनकी प्रवृत्तिके निमित्तरूप
धर्म है । सो ब्रह्ममें नहीं है किंतु निर्धर्मक होनेते
ब्रह्म निर्विशेष है । याने धुति धी ताकूँ मनवाणी
का अविषय कहतीहै ॥

किया जो कछु सोलनाहै सो द्वैतसै होवैहै ।
अद्वैतसै नहीं । याते इन विशेषणका ऐसै अर्थ
करनैसै धुतिविरुद्ध द्वैतकी सिद्धि होयै नहीं औ
अद्वैत सुखसै समझनैकूँ शक्य होवैहै ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये अवाच्यसिद्धांत
वर्णननामिका नवमकला समाप्ता ॥६॥

॥ अथ दशमकलाप्रारंभः ॥ १० ॥
॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥

——
इंद्रविजय छंद ॥

चैतन है जु समान विशेष सु ।
दोविधसत्य सुजान समानै ॥
भ्रांति सरूप विशेष जु कल्पित ।
संस्पृति आश्रय सो तिहि भानै ॥
उया रविको प्रतिबिंब जलादिक ।
सो रविरूप विशेष पिछानै ॥
त्यों मतिमै १५० प्रतिबिंब परातम ।
सो कलपीत विशेषहिं जानै ॥ २० ॥

॥ १५० ॥ परमात्माका प्रतिबिंब ॥

आवत जावत लोक प्रलोक हि ।
भोगत भोग जु १२१कर्म निपानै ॥

सो सय १२२चित्त-अभास करे अठ ।
शुद्ध समान महीं नहि आनै ॥

अस्ति क भाति प्रिय सय पुरन—
ग्रन्थ समान सु चेतन मानै ॥

नाम ह रूप तजी सन् चेतन ।
मोद पतिपंर आप पिछानै ॥ २१ ॥

॥ १२१ ॥ सो कर्मसंयुक्त भोग है । तादृ
मो । ताई ॥

॥ १२२ ॥ चेतनका प्रतिविम्ब ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २२५

* १८८ प्रश्न:—विशेषचैतन्य सो क्या है ?

उत्तर:—अंतःकरण औ अंतःकरणकी वृत्ति-
नविषै जो सामान्यचैतन्यब्रह्मका प्रतिबिम्बरूप
चिदाभास । सो १५३विशेषचैतन्य है ॥

* १८९ प्रश्न:—चिदाभासका लक्षण क्या है ?

उत्तर:—

१ चैतन्य (ब्रह्म) के लक्षणसँ रहित होवै । औ
२ चैतन्यकी न्यांई भासै ।
सो चिदाभास कहियेहै ॥

॥ १५३ ॥ इहां चिदाभासरूप जो विशेषचैतन्य
कहाहै । सो पष्ठकलाविषै उक्त कल्पितविशेषअंशके
अन्तर्गत है ॥

• १६० प्रश्न:-यह चिदाभासविशेषचैतन्य काहे-
तें कहियेहै ?

उत्तर:-अलग्गेश श्री कालविषै जो वस्तु
होवै । सो १२४विशेष कहियेहै ॥ जातै चिदा-
भास अतःकरणदेश श्री जाग्रत्स्वप्नमल या
अज्ञानकालविषैहै यानें विशेषचैतन्य कहियेहै ॥

॥ १२४ ॥ अभिष्ठान श्री अच्युत । हमनेइतें
विशेष दाप्रसारका है ॥ तिनमें

१ भातिकाकविषै जाकी प्रतीति होवै नहीं किन्तु जाकी
प्रतीतिसे भातिकी निवृत्ति होवै । सो अभिष्ठान
रूपविशेष है । श्री

२ भातिकाकविषै जाकी प्रतीति होवै श्री अभिष्ठानके
ज्ञानकाकविषै जाकी प्रतीति होवै नहीं सो अच्यु-
तरूपविशेष है ॥ याहोई कल्पविशेष

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥ १० ॥ २२७

१६१ प्रश्न:-विशेषचैतन्यविषे दृष्टांत क्या है ?

उत्तर:-

दृष्टांत:-

१ जैसैं सूर्यका प्रकाश सर्वत्र समान है । परंतु सर्वठिकानै प्रतिबिम्ब होता नहीं औ जहां जल वा दर्पणरूप उपाधि होवै तहाँ प्रतिबिम्बरूप करि विशेष भासताहै ॥

२ किंवा जैसैं सूर्यका प्रकाश सर्वत्र समान है । परंतु सो वस्त्रकपासआदिककूँ जलावता नहीं औ जहाँ आगिआ (सूर्यकांतमणि) रूप उपाधि होवै । तहाँ अग्निरूपसैं विशेष होयके वस्त्रकपासआदिककूँ जलावताहै ॥

तिनमें

१ सामान्यरूप है सो सर्वदा ज्युंका त्यूं होनैतैं यथार्थ (बहुकालस्थायि) है । औ

२ उपाधिकरि भासताहै जो विशेषणरूप । सो
 ध्यभिचारी होनेतैं अययार्थ (अल्पकाल-
 स्थायि) है ॥

१ नैसं सामान्यचैतन्य जो अस्ति भाति प्रिय ।
 सो सर्वत्र समान है । परन्तु तिलसैं पोलना
 चलना इत्यादिकविशेषव्यवहार होता नहीं! औ

० जहाँ अन्त करणरूप उपाधि होयै तदा
 चिदाभासरूपसैं विशेषचैतन्य होवके सोन-
 नाचलना । कर्त्तापनाभोक्तापना । परलोकइस-
 लोकविषै गमनआगमन । इत्यादिकविशेष-
 व्यवहार होवैहै ॥

तिनमें

१ सामान्यचैतन्य जो ब्रह्म सो सत्य है । औ

२ उपाधिकरि भासताहै जो विशेषचैतन्य चिदा-
 भास सो मिथ्या है ॥ नैसै

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २२६

(१) पुण्यपापका कर्त्तापना ।

(२) सुखदुःखका भोक्तापना ।

(३) परलोकइसलोकविषै गमनागमन ।

(४) जन्ममरण ।

(५) चौरासीलक्षयोनिकी प्राप्ति ।

इत्यादिकसंसाररूप धर्म बी चिदाभासके हैं ।

यातैं मिथ्या हैं ॥

* १६२ प्रश्नः—विशेषचैतन्यके जाननैमें क्या निश्चय करना ?

उत्तरः—

१ विशेषचैतन्य जो चिदाभास । औ

२ तिसके धर्म ।

सो मैं नहों औ मेरे नहों । किंतु ये मेरेविषै

कल्पित हैं ॥ मैं इनका अधिष्ठान सामान्यचैतन्य

इनतैं न्यारा हूं । यह निश्चय करना ॥

* १६३ प्रश्न — सामान्यचैतन्य सो क्या है ?

उत्तर —

१ जो आकाशकी न्यारै सर्वत्र परिपूर्ण है ।

२ जो सर्वनामरूपका अधिष्ठान है ।

३ जो अस्तिभातिप्रितिरूप है ।

४ जो निर्विकारग्रह है ।

सो सामान्यचैतन्य है ॥

* १६४ प्रश्न — ग्रह । सामान्यचैतन्य काहेतें कहिये है ?

उत्तर — अधिकदेश और कालविषे जो धस्तु होयै । सो सामान्य कहिये है ।

जाने ग्रह । युद्धिकरिषत सर्वदेश ओ सर्व-
कालविषे व्यापक है । तारें ग्रह सामान्य-
चैतन्य कहिये है ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २३१

१६५ प्रश्न:-सामान्यचैतन्य ज्ञाननैविष्ये दृष्टांत
क्या है ?

उत्तर:-

दृष्टांत:-जैसे एकरज्जुकेविष्ये नानापुरुषनकूँ
किसीकूँ दंडकी । किसीकूँ सर्पकी । किसीकूँ
पृथ्वीके रेखाकी । किसीकूँ जलधाराकी भ्रांति
होवैहै । तिस भ्रांतिविष्ये दोअंश हैं ।

१ एक सामान्यइदंअंश है । औ

२ दूसरा सर्पादिकविशेषअंश है ॥ तिनमें

१ (१) 'यह' दंड है ॥

(२) 'यह' सर्प है ॥

(३) 'यह' पृथिवीकी रेखा है ॥

(४) 'यह' जलधारा है ॥

इसरीतिसँ सर्पादिकविशेषअंशनविष्ये सामान्य
"इदं" अंश कहिये "यह" अंश सर्वत्रव्यापक
है औ सो रज्जुका स्वरूप है । सो सामान्य-

इदंअंश जातें

[१] आंतिकालविषै धी भासताहै । औ

[२] आंतिकी निवृत्तिकालविषै धी "यह"

रज्जु है" इसरीतिसें भासताहै ।

यातें सामान्यइदंअंश अभ्यभिचारी होनेतें सत्य है । औ

२ परस्परअभ्यभिचारी जो सर्पादिका विशेषअंश सो काक्षित है ।

सिद्धांत:-तेसैं सवंपदार्थनविषै पांचअंश हैं:-

१ अस्ति २ भाति ३ प्रिय ४ नाम ५ रूप ॥

१ "घट है" यह अस्ति [सत्] ।

२ "घट भासता है" यह भाति [चित्] ।

३ "घट प्रिय है" । कहैतें घट जल मरनैकुं उरवागो है । यातें यह प्रिय (आनंद) ॥सर्प-

सिंहआदिक धी मर्षिणी औ सिद्धिणीकुं प्रिय है

५ "घट" यह कोअक्षर नाम है ।

ला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २३३

५ स्थूलगोलउदरवान् घटका रूप (आकार) है ।
ऐसे घटआदिकसर्वभूत औ भूतनके कार्यनविषे
वी जानना ॥

यह बाहीरके पदार्थनविषे पांचअंश दिखाये ॥ तैसे

१ भीतरदेहआदिकविषे-

[१] "मैं हूं" यह अस्ति है ।

[२] " मैं भासता (जानता) हूं " यह
भाति है ।

[३] "मैं आप आपकूं प्यारा हूं" यह प्रिय
है । औ

[४] देह । इंद्रिय । प्राण । मन । बुद्धि ।
चित्त । अहंकार । अज्ञान औ इनके
धर्म । ये नाम हैं ।

[५] इनके यथायोग्य आकार । सो रूप है ॥
ये अंतरके पदार्थनविषे पांचअंश दिखाये ॥

२ इन सर्वके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “ पृथिवी है ” ।

[२] “ पृथिवी भासती है ”

[३] “ पृथिवी मिथ है ” । काहेतँ पृथिवी
रहनेकं स्थान देतीहै ।

[४] “ पृथिवी ” ऐसा नाम है ॥ औ

[५] “ गन्धगुणयुक्त ” रूप है ॥

३ पृथिवीके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “ जल है ” ।

[२] “ जल भासताहै ” ।

[३] “ जल मिथ है ” । काहेतँ जल
तृणरू दूरे करताहै ।

[४] “ जल ” ऐसा नाम है । औ

[५] “ शीतस्पर्शगन्धयुक्त ” रूप है ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २३५

४ जलके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “तेज है” ।

[२] “तेज भासता है”

[३] “तेज प्रिय है” । काहेतैं तेज शीत
औ अंधकारकूँ दूरी करताहै ।

[४] “तेज” ऐसा नाम है । औ

[५] “उष्णस्पर्शगुणयुक्त” रूप है ॥

५ तेजके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “वायु है” ।

[२] “वायु भासता है” ।

[३] “वायु प्रिय है” । काहेतैं वायु प्रसीना-
कूँ दूरी करताहै ।

[४] “वायु” ऐसा नाम है । औ

[५] “रूपरहित अरु स्पर्शगुणयुक्त”
रूप है ॥

६ वायुके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “आकाश है” ।

[२] “आकाश भासताहै” ।

[३] “आकाश प्रिय है” । काहेतँ आकाश
रहनैफिरनैकूँ अवकाश देताहै ।

[४] “आकाश” ऐसा नाम है । श्री

[५] “शब्दगुणयुक्त” रूप है ॥

७ आकाशके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “ पीछे क्या है सो मैं जानता नहीं” ।
ऐसा अज्ञान है । सो

[२] “ अज्ञान भासता हूँ” ।

[३] “ अज्ञान प्रिय है” । काहेतँ अज्ञानी
जीवनकूँ प्रिय है । श्री अज्ञान
प्रपञ्चका कारण होनैसँ जीवनका
निर्याह करताहै ।

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २३७

[४] “अज्ञान” ऐसा नाम है । औ

[५] “ आवरणविशेषशक्तिवाला अनादि
अनिर्वचनीय भावरूप” यह रूप है ॥

८ अज्ञानके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “ कछु वी नहीं है ” ऐसँ प्रतीयमान
सर्ववस्तुनका अभाव रहताहै ।

[२] “ अभाव भासताहै”

[३] “ अभाव शून्यध्यानीनकूँ प्रिय है”
याका

[४] “ अभाव ” ऐसा नाम है । औ

[५] “ सर्ववस्तुनका अभाव (निषेधमुख-
प्रतीतिका विषय) ” रूप है ॥

६ अभावकं नामरूपके तयाय क्रियेत्—

[१] अभावत्रया स्वरूपमून अधिष्ठान ।
सनधन्नुर्द्धा अवसोप रदतादै । सो

[०] अभावके अभावपनैरू प्रकाशतादै ।
यातं चित्तु है । श्री

[३] दु गतं भिन्न है । यातं आमंद है ॥

हसरीतित्तं

१ तथेनामरूपविधि अनुगत अव्यभिचारी नाम
रूपका अधिष्ठानग्रह १२२सामान्यचैतन्य है ।
मो सतय है । श्री

॥ १२२ ॥

१ गुणित मूर्त्ति श्री समाधिका प्रकाशक सामा-
न्यचैतन्य है ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २३६

२ “घटकूँ मैं जानताहूँ” इसरीतिसे प्रमाता । प्रमाण
औ प्रमेयरूप त्रिपुटीका प्रकाशक साक्षी सामान्य-
चैतन्य है ।

३ जाग्रदादिअवस्थाकी सन्धिनका प्रकाशक सामान्य-
चैतन्य है ॥

४ तैसैँ ही वृत्तिनकी सन्धिनका प्रकाशक सामान्य-
चैतन्य है ॥

५ अंगुष्ठके अग्रभागका प्रकाशक सामान्य-
चैतन्य है ॥

६ देशांतरविषे वृत्ति गई होवै । तब तिसके मध्यभागका
प्रकाशक सामान्यचैतन्य है ॥

७ सूर्यचंद्राकार वृत्ति हुयीहोवै तिसके मध्यभागका
प्रकाशक सामान्यचैतन्य है ॥

८ “मेरुकूँ मैं नहीं जानताहूँ” ऐसैँ अज्ञानविशिष्टमेरुका
प्रकाशक सामान्यचैतन्य है ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २४२

१[१] जातें समुद्रजलसैं कठिण फेन औ
लवण होवैहैं । यातें जान्याजावैहै कि
पृथिवी जलका कार्य है । तातें पृथिवी-
तैं जल सूक्ष्म औ व्यापक है ॥
किंचा

[२] पृथिवीके पापणआदिकअवयव वस्त्र-
विषै डालेहुये निकसते नहीं । औ

[३] जल वस्त्रविषै ठहरता नहीं । औ

[४] पृथिवीमें जहां जहां खोदफे देखो
तहां तहां जल निकसताहै । औ

[५] पुराणोंविषै पृथिवीतैं दशगुणअधिक-
देशवर्ति जल कहाहै ।

यातें बी पृथिवीतैं जल सूक्ष्म औ
व्यापक है ।

२ [१] तैसैं अग्निआदिकके तापसैं शरीरविधै
 प्रस्येद (प्रमीना) छटतादै औ घर्षा
 होवैदे । यातैं जान्याजावैदे कि जल
 अग्निका कार्य है । तातैं जलनै अग्नि
 (तेज) सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥
 किया

[२] जल घटविधै ठहरता नहीं परन्तु घट-
 विधै ठहरतादै । औ

[३] सूर्यादिकका प्रकाश घटविधै भी ठह-
 रता नहीं । औ

[४] पुराणोंविधै जलतैं दशगुणअधिक-
 देशवर्ति तेज कहादै ।

यातैं भी जलनै तेज सूक्ष्म है औ
 व्यापक है ॥

हला] ॥ सामान्यविशेषवैतन्यवर्णन ॥१०॥ २४३

३ [१] तैसैं अशिका जन्म औ नाश पवनके
आधीन है । यातैं जान्याजावैहै कि
तेज वायुका कार्य है । तातैं तेजतैं
वायु सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥

किंवा

[२] सूर्यादिकका प्रकाश घटादिपात्रविषै
ठहरता नहीं । परन्तु नेत्रसैं दीखताहै
औ वायु तौ नेत्रसैं बी दीखता
नहीं । अरु

[३] पुराणोंविषै तेजतैं दशगुणअधिक वायु
कहाहै ।

यातैं तेजतैं वायु सूक्ष्म है औ व्यापक है॥

४ [१] तैसैं वायुकी उत्पत्ति स्थिति अरु लक्षण
 आकाश (पुलार) विगैहों होवैहै । यातैं
 जान्याजावैहै कि वायु आकाशका
 कार्य है । तातैं वायुतैं आकाश
 सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥

किया

(२) वायु नैघसैं दीयता नहीं परन्तु
 त्वचासैं स्पर्शगुणद्वारा प्रदण होताहै
 औ आकाश नी त्वचासैं धी प्रदण
 होना नहीं । औ

[३] पुराणोंविगै वायुतैं दशगुणअधिकदेश-
 धति आकाश कहाहै ॥

यातैं धी मो आकाश वायुतैं सूक्ष्म औ
 व्यापक है ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २४५

[१] तैसैं “ आकाशसैं आगे क्या होवैगा ”
ऐसा विचार कियेहुये “ मैं नहीं
जानताहूं ” ऐसैं बुद्धिके कुंठीभावका
आश्रय (विषय) अज्ञान प्रतीत होता
है । यातैं जान्याजावैह कि आकाश
अज्ञानका कार्य है । तातैं सो अज्ञान
आकाशतैं सूक्ष्म औ व्यापक है ॥

किंवा

[२] आकाश त्वचासैं ग्रहण होता नहीं ।
परंतु मनसैं ग्रहण होता है । औ अज्ञान
मनसैं बी ग्रहण होता नहीं । औ

[३] आकाशतैं अनंतगुणअधिक अज्ञान
शास्त्रविषै कहा है ।

यातैं बी सो अज्ञान आकाशतैं सूक्ष्म औ
व्यापक है ॥

६ [१] तैसैं "मैं नहीं जानताहूँ" इस अनुभव-
का विषय जो अज्ञान । ताका प्रकाश
जानलैवाले चेतनसैं होवैहै । औ
(१) = अज्ञान है ।

(२) अज्ञान भासताहै ।

(३) अज्ञान असंपुरण प्रिय है ॥

इसरीतिसैं अज्ञानविषै अनुस्यूत अस्तिभाति-
प्रियरूप ब्रह्मचेतन भासताहै । यारैं अज्ञान
ब्रह्मचेतनके आश्रित है । तारैं ब्रह्मचेतन
अज्ञानतैं मूढम औ व्यापक है ॥ किंवा

[२] अज्ञान मनकरि ग्रहण होता नहीं
परन्तु " मैं नहीं जानताहूँ " इस
अनुभवरूप लिंगकरि ताका अनुमान
होवैहै । औ ब्रह्मचेतन स्वयंप्रकाशरूप
होनैतैं किसी बी प्रमाणका विपर-
नहीं । औ

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २४७

[३] शरीरविषै तिलकी न्याई ब्रह्मकै
एकदेशविषै अज्ञान स्थित है । औ
अवशेष रहा ब्रह्म शुद्धस्वप्रकाश है ।
ऐसैं श्रुतिविषै कहाहै ।

यातैं बी सो ब्रह्मचेतन अज्ञानतैं सूक्ष्म
औ व्यापक है ॥

इसरीतिसैं सामान्यचैतन्यरूप ब्रह्मकी सर्वप्रपंचसैं
अधिकसूक्ष्मता औ व्यापकता है ॥

* १६७ प्रश्न:-सामान्यचैतन्यके जाननैसैं क्या
निश्चय करना ?

उत्तर:—

१ [१] अस्तिभातिप्रियरूप सामान्यचैतन्य जो
ब्रह्म सो मैं हूं । औ

२ [२] मैं सो अस्तिभातिप्रियरूप सामान्य-
चैतन्यब्रह्म हूं । औ

२ नामरूपजगत् मेरेविषयै कहिरत है ;

यह निश्चय करना ॥

* १६८ प्रश्नः—इसरीतिसैं निश्चय कियेसैं क्या होयैहै ?

उत्तरः—इसरीतिसैं निश्चय कियेसैं सर्वभ्रनर्त्य-
की निवृत्ति औ परमानन्दकी प्राप्तिरूप मोक्ष
होयैहै ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये सामान्यविशेष-
चैतन्यवर्णन नामिका दशमस्कन्धा समाप्ता ॥

अथ एकादशकलाप्रारम्भः ॥ ११ ॥

॥ 'तत्त्वं' पदार्थैक्यनिरूपण ॥

॥ इन्द्राविजय छंद ॥

वाच्य रु लक्ष्य लखी तत्-त्वंपद ।

लक्ष्य दुहंकर एक हठावै ॥

भिन्न जु देशहि काल सु वस्तु रु ।

धर्मसमेत उपाधि उडावै ॥

जन्म थिती लय कारक १५७ मायिक ।

जाननहार सघी जग भावै ॥

ईश्वर वाच्य सु है ततपादहि ।

ब्रह्म सु लक्ष्य उपाधि अभावै ॥ २२ ॥

ससृति मानत आपहिमें पर-
 तंत्र १५ अधिद्यक अरुप जनार्थ ॥
 त्वपद वाच्य सु जीय विवेचिन ।
 लक्ष्य सु साक्षि उपाधि दृष्टावै ॥
 वाच्य तु अर्थ हि भेद वि है पुनि ।
 लक्ष्य विभेद न रंचक गावै ॥
 ब्रह्म अहं इस भांति जु जानत ।
 सोई परमात्मा ब्रह्महि पावै ॥ २३ ॥

* १६६ प्रश्न - ' तत् ' पद सो क्या है ?

उत्तर — सामवेदकी छादोग्यउपनिषद्के षष्ठ-
 प्रपाठक (अध्याय) विषे श्वेतकेतु नाम पुत्रके
 प्रति तिसके पिता उद्दालकमुनिने उपदश किये
 " १५५ तत्त्वमसि " महावाक्यका प्रथमपद ।
 सो " तत् " पद है ॥

ला]॥ “तत्त्व” पदार्थक्यनिरूपण ॥ ११ ॥ २५१

॥ १५८ ॥ अविद्याउपाधिवान् ॥

॥ १५९ ॥

१ “इस तत्त्वमसि” की न्यांई

२ “प्रज्ञानं ब्रह्म” यह ऋग्वेदका महावाक्य है ।

३ “अहं ब्रह्मास्मि” यह यजुर्वेदका महावाक्य है । श्री

४ “अयमात्मा ब्रह्म” यह अथर्ववेदका महा-
वाक्य है ॥

१ जो तत्पदका वाच्यअर्थ ईश्वर है श्री लक्ष्यअर्थ
शुद्धब्रह्म है । सोई ऊपरलिखे तीनमहावाक्यगत
“ब्रह्म” शब्दका वाच्यअर्थ अरु लक्ष्यअर्थ है । श्री

२ जो त्वंपदका वाच्यअर्थ जीव है अरु लक्ष्यअर्थ
कूटस्थसाक्षी है । सोई उक्ततीनमहावाक्यगत
“प्रज्ञानं” “अहं” “अयं” पदपदित “आत्मा”

इन तीनपदका वाच्यअर्थ श्री लक्ष्यअर्थ है । श्री

३ सारे “तत्त्वमसि” वाक्यका जो जीवब्रह्मकी
एकतारूप अर्थ है । सोई उक्त तीनमहावाक्यन
का अर्थ है ॥

० २०० प्रश्नः—“ त्व ” पद सो क्या है ?

उत्तर —इसीहीं “तत्त्वमसि” महावाक्यका दूसरापद । सो “त्वं” पद है ॥

० २०१ प्रश्न —वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ सो क्या है ?

उत्तर —शब्दका अर्थके साथि जो संबंध सो शब्द की वृत्ति कहिये ॥ सो वृत्ति दो प्रकारकी है । १ एक शक्तिवृत्ति है औ २ दूसरी लक्षणावृत्ति है ॥

१ शब्दविषै अर्थके ज्ञान करनेका सामर्थ्यरूप जो शब्दका अर्थके साथि साक्षात्सम्बन्ध । सो शब्दकी शक्तिवृत्ति है ॥ श्री

२ शक्तिवृत्तिस जानेदुये अर्थद्वारा जो शब्दका अर्थके साथि परपरारूप सम्बन्ध है । सो शब्दकी लक्षणावृत्ति है ॥

कला] ॥“तत्त्वं”पदार्थैक्यनिरूपण ॥११॥ २५३

तिनमें

१ शक्तिवृत्तिकरि जो अर्थ जानियेहै सो शब्दका वाच्यअर्थ कहियेहै । ताहीकूं शक्यअर्थ

औ मुख्यअर्थ वी कहैहैं ॥ औ

२ लक्षणावृत्तिकरि जो अर्थ जानियेहै । सो शब्दका लक्ष्यअर्थ कहियेहै ॥

* २०२ प्रश्न:-लक्षणावृत्ति कितनै प्रकारकी है ?

उत्तर:-१ जहत् २ अजहत् औ ३ भाग-
त्यागके भेदतै लक्षणावृत्ति तीनप्रकारकी है ॥

* २०३ प्रश्न:-तीनप्रकारकी लक्षणाके लक्षण औ उदाहरण कौनसैं हैं ?

उत्तर:—

१ जहां संपूर्णवाच्यअर्थका त्यागकरिके वाच्य-
अर्थ संबंधीका ग्रहण होवै । सो जहत् लक्षणा है ॥

जैसे कोईक पुरुषने पाहुकू पूछ्या कि —
 “गार्का घाडा कदा है ?” तब तिसने कहा कि
 “गह्वाघियै गार्का घाडा है” ॥ इहा गह्वापदका
 वाच्यअर्थ देवनदीका प्रवाह है । तिसघियै गार्-
 का घाडा समझै नहीं । यार्तै सपूर्णवाच्यअर्थ
 जो देवनदीका प्रवाह । ताका त्यागकरिके ।
 तिसके सबधी तीरका ग्रहण है ॥

२ जहा वाच्यअर्थका त्याग न करिके तिसके
 सबधीका ग्रहण होयै । सो अजरमूलक्षणा है ॥

जैसे किसीने कहा कि — “शोण दौडता
 है” ॥ तहा शोणपदका वाच्यअर्थ जो लालरंग
 है । तिसघियै दौडना सम्भवै नहा । यार्तै लाल
 रंगवाला घंटा दौडताहै । ऐसे वाच्यअर्थका
 त्याग न करिके तिसके सबधी घोटेरूप अधिक
 अर्थका ग्रहण होयैहै ॥

कला] ॥ “तत्त्वं” पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ११ ॥ २५५

३ जहां विरोधी कलुक्वाच्यभागका त्याग-
करिके तिसके संबंधी अविरोधी कलुक्वाच्यभाग
का ग्रहण होवै । सो भागत्यागलक्षणा है ॥

जैसे पूर्व किसी देशकालविणै देख्या पुरुष
अन्यदेशकालविणै देखनैमें आवै । तब देखनै-
हारा पुरुष कहना है कि:-“तिस (दूर) देश औ
तिस (भूत) कालविणै जो पुरुष देख्याथा
सो पुरुष इस (समीप)देश औ इस (वर्तमान)
कालविणै आयाहै ” ॥ इहां तिस देशकाल औ
इस देशकालरूप वाच्यभागकी एकताका विरोध
है । यातैं तिनकी दृष्टि त्यागकरिके । “ पुरुष
यहहीं है ” ऐसे अविरोधीवाच्यभागका ग्रहण
होवैहै ॥

*२०४प्रश्न:-तीनप्रकारकी लक्षणामेंसे महावाक्य

• विणै कौनसी लक्षणा संभवैहै ?

उत्तर.—

१ जज्ञ जहत्लक्षणा होवै । तद्वा सम्पूर्ण वाच्य
अर्थका त्याग होवैहै ॥ जो महावाक्यविषे
जहत्लक्षणा मानिये । तौ

(१) “तत्” “त्वं” पदके वाच्यअर्थविषे
प्रवेश भवे प्रह्वचितन्य औ साक्षी-
चितन्यका त्याग होवैगा । औ

[२] तिसरै भिन्न असत्जडदुःखरूप प्रपञ्च
का ग्रहण करना होवैगा । अथवा
समष्टि व्यष्टि प्रपञ्चमय उपाधि(विशे-
षणरूप वाच्यभाग) का भी चेतनके
साथ त्याग कियेसै अघशेष रहे
शून्यका ग्रहण करना होवैगा ॥

नार्त महाअनर्थकी प्राप्ति होवैगी । तिसरै
पुरुषार्थ सिद्ध होवै नहीं। नार्त महावाक्यविषे
जहत्लक्षणा सभनै नहीं ॥

कला] “तत्त्वं ” पदार्थैक्यनिरूपण ॥११॥ २५७

२ जहां अजहत्लक्षणा होवै तहां वाच्यअर्थका कछु वी त्याग होवै नहीं । औ अधिकअर्थका ग्रहण होवैहै ॥ जो महावाक्यविषै अजहत्लक्षणा मानिये तौ “ तत् ” “ त्वं ” पदका वाच्यअर्थ ज्यूंका त्यूं बन्यारहैगा औ ताके साथि शून्यरूप अधिकअर्थका ग्रहण करना होवैगा । यातैं एकनाका विरोध दूरी होवै नहीं । तातैं लक्षणा करनेका कछु प्रयोजन सिद्ध होवै नहीं । यातैं महावाक्यविषै अजहत्लक्षणा संभवै नहीं ॥

१ जहां भागत्यागलक्षणा होवै तहां विरोधी भागका त्याग करीके अविरोधीभागका ग्रहण होवैहै ॥ जो महावाक्यविषै भागत्यागलक्षणा मानिये तौ

[१] “तत्” “त्वं” पदके वाच्यअर्थमैसै धर्मसहित मायाअविद्यारूप विरोधी-भागका त्याग होवैहै । औ

[०] अविरोधीअसङ्गुद्धचेतनभागका प्रदण होचैहै ।

तार्ते

[१] तिनकी एकता यी यनैहै । औ

[०] निमनै परमपुढवार्थकी प्राप्ति होवे है ।

यानै महावाक्यनिर्ण भागस्यागलक्षणा
सभयैहै ॥

● २०५ प्रश्न - "तत्" पदका वाच्यअर्थ औ
लक्ष्यअर्थ क्या है ?

उत्तर:—

१ अम्यारत ओ माया मो ईश्वरका देश है ॥

२ उत्पत्ति स्थिति औ प्रलय । ये तीन ईश्वरके
काश है ॥

कला] ॥ “सत्त्वं” पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ११ ॥ २५६

३ सत्त्वगुण रजोगुण औ तमोगुण । ये तीन ईश्वरके १६० वस्तु हैं । कहिये सृष्टिकी सामग्री हैं ॥

४ विराट् हिरण्यगर्भ औ अव्याकृत । ये तीन ईश्वरके शरीर हैं ॥

५ वैश्वानर सूत्रात्मा औ अंतर्हामी । ये तीन ईश्वरके अभिमानी हैं ॥

॥ १६० ॥ यद्यपि माया औ नोनगुण एहहीं पदार्थ हैं । यातें ईश्वरके देश वस्तु औ शरीरकी एकता होवैहै । तथापि जैसे कुलालकूं घट करनेके जिये १ मृत्तिक रूप पृथ्वी देश है । औ
२ मृत्तिकाका पिंड वस्तु है । औ
३ अस्थिआदिकरूप पृथ्वीका भाग शरीर है ।
तिनकी एकताका असंभव नहीं । तैसे ईश्वरके बी
पेशाआदिककी एकताका असंभव नहीं है ॥

६ ' मैं एक हूँ । सो बहुरूप होऊँ "वेसी मोई जणा
तिसकू आदिलेके "जीउरूपकरि प्रवेश भया"
इहापर्यंत जो सृष्टि । सो ईश्वरका कार्य है ॥

७ (१) सर्वसृष्टिपना (२) सर्वक्षपना (३)
व्यापकपना (४) एकपना (५) स्थायीपना
पना (६) समर्थपना (७) परोक्षपना
(८) मायाउपाधियान्पना । ये आठ ईश्वरके
धर्म हैं ।

१ (१) इन सर्वसहित माया । औ

(२) तिसविधे प्रतिबिम्बरूप चिदाभास । औ

(३) तिनका अधिष्ठान ब्रह्म ।

य सर्व मिलिके ईश्वर कहियेहै । सो "तत्"

पदका वाक्यअर्थ है ॥

२ इन सर्वसहित माया औ चिदाभासभागका
त्यागकारके अग्ररूप रहा जो बिराट्द्विरूपगर्भ
औ अन्धकारतका अधिष्ठान ईश्वरसाक्षी शुद्धब्रह्म
सो "तत्" पदका लक्ष्यअर्थ है ॥

कला] ॥ "तत्त्वं" पदार्थैक्यनिरूपण ॥२१॥ २६१

* २०६ प्रश्न:-ब्रह्मका श्री मायामें प्रतिबिम्बरूप
ईश्वरका परस्परअध्यास (अन्यो-
न्याध्यास) कैसे हैं ?

उत्तर:-अविचारदृष्टिसे

- १ ब्रह्मकी सत्यताका ईश्वरविषे संसर्ग (तादा-
त्म्यसंबंध) अध्यस्त है । यार्ते ईश्वर सत्य
प्रतीत होवैहै । श्री
- २ ईश्वर अरु ताकी कारणताका स्वरूप ब्रह्ममें
अध्यस्त है । यार्ते ब्रह्म जगत्का कारण
प्रतीत होवैहै ॥ याहीका अनुवाद तटस्थ
लक्षणके बोधक श्रुति पुराण श्री आचार्योंके
वचन करैहैं ॥

इसरीतिसँ ब्रह्म श्री ईश्वरका परस्पर
अध्यास है ॥

* २०७ प्रश्न - उक्त अध्यासकी निवृत्ति किससे होयै ?

उत्तर:- उक्त अध्यासकी निष्ठात विवेक ज्ञानसे होयै है ॥

* २०८ प्रश्न — “त्व” पदका वाच्य अर्थ और लक्ष्य अर्थ क्या है ?

उत्तर:—

१ घण्टा कठ और हृदय । ये तीन जीवके देश हैं ॥

२ जाग्रत स्वप्न और सुषुप्ति ये तीन जीवके काल हैं ॥

३ स्थूल सूक्ष्म और कारण । ये तीन जीवके वस्तु (भोगसामग्री) हैं ॥ और

४ यही शरीर है ॥

५ विश्व तैजस और माह । ये तीन जीवपनैके अभिमानी हैं ॥

६ जाग्रतसे आदितेके मोक्षपर्यंत जो भोगरूप ससार । सा जीवका कार्य है ॥

कला] ॥ “ तत्त्वं ” पदार्थैक्यनिरूपण ॥११॥ २६३

७ [१] अल्पशक्तिपना [२] अल्पक्षपना [३]
परिच्छिन्नपना [४] नानापना [५] परा-
धीनपना [६] असमर्थपना [७] अपरोक्ष-
पना औ [८] अविद्यावाधिवान्पना ।
ये आठ जीवके धर्म हैं ॥

१ [१] इन सर्वसहित जो अविद्या । औ
[२] तिसविधै प्रतिदिवरूप चिदाभास । औ
[३] तिनका अधिष्ठान कूटस्थ ।
ये सर्व मिलिके जीव कहियेहै ॥ सो जीव
“ त्वं ” पदका वाच्यअर्थ है ॥

२ इन सर्वसहित चिदाभासभागका त्याग करिके
अवरोध रह्या जो स्थूलसूक्ष्मकारणशरीरका
अधिष्ठान जीवसाक्षी कूटस्थ । आत्मा सो
“ त्वं ” पदका लक्ष्यअर्थ है ॥

* २०६ प्रश्न - कूटस्थका औ बुद्धिमें प्रतिबिम्बरूप-
जीवका परस्परअध्यास कैसे है ?

उत्तर:-अविचारदृष्टिसे

- १ कूटस्थकी सत्यताका ससर्ग (साक्षात्पर्यसंबंध)
जोयमें अभ्यस्त है । यातें जीव मिथ्या प्रतीत
होवे नहीं । किंतु सत्य प्रतीत होवेही । औ
- २ जीव अथ ताके कर्त्तापनैआदिक धर्मका
स्वरूप । कूटस्थमें अभ्यस्त है । यातें कूटस्थ
अकर्त्ता अभोका असंसारी नियमुक्त असङ्ग
ब्रह्मरूप प्रतीत होवे नहीं । किंतु तातें
विपरीत प्रतीत होवेही ॥

इसरीतिसे कूटस्थका औ जीवका परस्पर
अध्यास है ॥

* २१० प्रश्न:-उक्तअध्यासकी निवृत्ति किससे
होवेही ?

उत्तर:-उक्तअध्यासकी निवृत्ति विवेक-
ज्ञानसे होवेही ॥

कला] ॥ 'तत्त्वं' पदार्थैक्यनिरूपण ॥११॥ २६५

* २११ प्रश्न:—“ तत् ” पद औ “ त्वं ” पदके अर्थ की महावाक्यविषै कथन करी एकता कैसें संभवै ?

उत्तर:—

१ यद्यपि “तत्” पद औ “ त्वं ” पदके वाच्य-
अर्थ जो उपाधिसहित चैतन्य (ईश्वर औ
जीव) हैं । तिनकी एकताका विरोध है ।

२ तथापि “तत्” पदका लक्ष्यार्थ ब्रह्म औ
“ त्वं ” पदका लक्ष्यार्थ आत्मा । तिनकी
एकताका कछु बी विरोध नहीं ॥

“ ऐसें “ तत् ” पद औ “ त्वं ” पदके अर्थकी
महावाक्यविषै कथन करी एकता संभवै है ॥

* २१२ प्रश्न:—“मैं ब्रह्म हूं” ऐसा ब्रह्मआत्माकी
एकताका ज्ञान किसकू होवै है ?

उत्तर:—यह ज्ञान विदाभासकू होवै है ॥

० २१३ प्रश्न.—ब्रह्मते भिन्न जो चिदाभास । सं
 आपकू ब्रह्मरूप करीके कैसे जानैहै ?

उत्तर:—

१ जीवभाषके अधिष्ठान कूटस्थका ब्रह्मके साथ
 मुख्यभेद है । औ

२ पुनिसहित चिदाभासका ब्रह्मके साथ अपनै
 स्वरूपक बाध करीके अभेद होवैहै ।

याते

१ चिदाभास अपनै स्वरूपका बाध करीके
 आपकू अहशब्दके लक्ष्यार्थ कूटस्थरूप
 जानैहै । औ

२ अपनै निजरूप कूटस्थका “ मैं कूटस्थ ॥ ”
 ऐसे अभिमान करिके “ मैं ब्रह्म हूँ ” । ऐसे
 जानैहै ॥

इसरीतिसँ चिदाभास आपकू ब्रह्मरूप करिके
 जानैहै ॥

कला] ॥ “तत्त्वं” पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ११॥ २६७

* २१४ प्रश्न:—इन “तत्” औ “त्वं” पदके लक्ष्यार्थ की एकताविषे दृष्टांत क्या है ?

उत्तर:—दृष्टांत:—

१ जैसै

[१] घटमठउपाधिसहित घटाकाश औ मठाकाशकी एकताका विरोध है ।

[२] तथापि घटमठरूप उपाधिकी दृष्टिकुं छोड़िके केवलआकाशकी एकताका विरोध नहीं ।

२ जैसै

[१] काचकी हंडी औ मृत्तिकाकी हंडीविषे दीपक जलताहोवै । तिनकी उपाधि दोहंडीकी एकताका विरोध है ॥

[२] तथापि अग्निपनैकरि दीपककी एकताका विरोध नहीं ॥

३ जैसे

[१] राजा श्री रघारो (मेह) होयै ।
तिनकी उपाधि सेना श्री अजायगर्गकी
एकताका विरोध है ॥

[२] तथापि मनुष्यपनैकी एकताका विरोध
नहीं ॥

४ जैसे

[१] गङ्गाजल श्री गङ्गाजलका कलश
होयै । तिनकी उपाधि नदी श्री
कमराकी एकताका विरोध है ।

[२] तथापि केवलगङ्गाजलकी एकताका
विरोध नहीं ॥

कला] ॥ “ तत्त्वं ” पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ११ ॥ २६६

५ जैसें

[१] सागर औ जलका बिंदु होवै । तिनकी उपाधि सागर औ बिन्दुकी एकताका विरोध है ॥

[२] केवल जलकी एकताका विरोध नहीं ॥

६ जैसें

[१] कोई एक पुरुषकूँ पिताकी अपेक्षासँ पुत्र कहते हैं औ पितामहकी अपेक्षासँ पीत्र कहते हैं । तिनकी उपाधि पिता औ पितामहकी एकताका विरोध है ।

[२] केवल पुरुषकी एकताका विरोध नहीं ॥

७ जैसे कोई काशीका राजा था । सो हस्ती पर बैठिके स्वारीमें निकस्याथा । ताकू कोई यात्रायासी पुरुषनै अच्छीतरहसँ देखा था ॥ पीछे सो स्वदेशकू गया श्री काशीके राजाकू कोई अन्यराजानै राज्य छीनके निकामदिया । तब सो लंगोटी पहरेके अगमें विभूति लगायके हाथमें तुषी श्री दंड लेवे नम्रपादसँ तीर्थयात्राकू गया ॥ फिरन फिरने निम यात्रायासीपुरुषके भ्राममें गया ॥ तब तिसकू देखिके सो यात्रायासीपुरुष अन्ययात्रायासीपुरुषनकू कहता भया कि -अपननै काशीविषे जो राजा ग्याथा । “ सो यह है ” ॥

कला] ॥ "तत्त्वं" पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ८॥२७१

तव अन्ययात्रावासीपुरुष कहतेभये कि:—

[१] सो देश अन्य । यह देश अन्य ॥

[२] ताका काल (अवस्था) अन्य ।

याका काल अन्य ॥

[३] तिसकी वस्तु (सामग्री) अन्य ।

याकी वस्तु अन्य ॥

[४] तिसका अभिमान अन्य । इसका
अभिमान अन्य ॥

[५] तिसका कार्य अन्य । इसका कार्य
अन्य ॥

[६] तिसके धर्म अन्य । इसके धर्म अन्य ॥

तिस काशीके राजाकी औ इस भिजुक-
को ऐकता कैसें बने ? ॥

तब सो प्रथमयात्रावासीपुरुष कहतामया ।
 कि:-“ तिसके औ इसके (१) देश
 (२) काल (३) वस्तु (४) अभिमान
 (५) कार्य औ (६) धर्मका त्याग करीके
 दोनूँ धियँ अनुगत (अनुस्यूत) ओ पुरुषमात्र
 सो एकही है ” ॥

सिद्धान्त:-तैसे जीयईश्वरके बी देशकाल
 आदिकका त्याग करीके । दोनूँ धियँ अनुगत ओ
 चेतनमात्रप्रपञ्च औ आत्मा सो एकही है ॥ यार्ते
 ‘ प्रपञ्च सो भै हूँ ’ औ ‘ मै सो प्रपञ्च हूँ ’ ऐसा
 हृद निश्चय करना । सोई तत्त्वज्ञान है ॥

पाहीतैं सर्वदुःखकी निवृत्ति औ परमानन्दकी
 प्राप्तिरूप मोक्ष होयै है ।

इनि श्रीविचारचन्द्रोदय ‘ तत्त्वमासि ’
 महावाक्यगत ‘ तत्त्वं ’ पदार्थव्यनिरूपण
 नामिका एकादशकला समाप्ता ॥ ११ ॥

॥ अथ द्वादशकलाप्रारंभः ॥ १२ ॥
ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकारवर्णन ।

॥ १६१ तोटकछंद ॥

जिन आत्मरूप १६२ पगो जु भले ।

तिस त्रैविधकर्म भिटे सकले ॥

१६३ तम आवृत्ति आश्रित संचित ले ।

निज बोध सु पावक सर्व जले ॥ २४ ॥

जड चेतन गांठ विभेद बले ।

हृदराग दवेष कषाय गले ॥

जलमें जिम लिप्त न १६४ कंजदले ।

परसे न अगामि जु कर्म मले ॥ २५ ॥

॥ १६१ ॥ दुमरीमें गाया जावैहै ॥

॥ १६२ ॥ देख्यो ॥

॥ १६३ ॥ अज्ञानकी आधारशक्तिके आश्रित संचित
कर्मोंकुं लेके ॥ ॥ १६४ ॥ कमलका पत्र ॥

इस जन्म अरम्भक कर्म फले ।

सुखदुःखद्वि भोगत होत प्रले ॥

इस भांति जु होइत जन्म विले ।

१९५ विष्व रूप पीताम्बर स्वं विमले ॥२६॥

* २१५ प्रश्न — कर्म सो क्या है ?

उत्तर,—शरीर घाणी औ मनकी ओ मिया
नो कर्म है ॥

* २१६ प्रश्न — कर्म कितने प्रकारका है ?

उत्तर — १ सचित २ प्रारब्ध औ
३ क्रियमाण (आगामि) भेदन कर्म तीन-
प्रकारका है ॥

* २१७ प्रश्न — सचितकर्म सो क्या है ?

उत्तर — / अनकअर्तानजन्माविर्ष सचय-
किया जा कम । नो सचितकर्म है ॥

ला] ॥ ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकारवर्णन ॥ १२ ॥ २७५

* २१८ प्रश्न:- प्रारब्धकर्म सो क्या है ?

उत्तर:- २ अनेकसंचितकर्मनके मध्यसँ परिपक्व भया औ ईश्वरकी इच्छासँ इस वर्तमान-देहका आरंभक जो कोईएक संचितकर्म सो प्रारब्धकर्म है ॥

* २१९ प्रश्न:- क्रियमाणकर्म सो क्या है ?

उत्तर:- ३ ज्ञानतँ पूर्व वा पीछे इस वर्तमान-देहविषै मरणपर्यंत करियेहै जो कर्म । सो क्रियमाणकर्म है ॥

* २२० प्रश्न:- ज्ञानीके कर्मकी निवृत्ति किसरीतिसँ होवैहै ?

उत्तर:- १ ज्ञानसँ अज्ञानके आवरणअंशकी निवृत्ति होवैहै ॥ आवरणकी निवृत्तिके भये आवरणकूँ आश्रयकरिके स्थित संचित कहिये पूर्वके अनेकजन्मविषै किये कर्मकी निवृत्ति (नाश) होवैहै । औ

२ ज्ञानके आगेपीछे इसजन्मविधे किये क्रियमाणकर्मका " मैं अकर्ता अभोक्ता असंग प्रलय हूँ ॥" इस निश्चयके बलसे अपने आधय भ्रमज-तादात्म्यके माशुकरिके औ रागद्वेषके अभावसे जलविधे स्थित कमलपत्रकी ग्याई शानीकूँ स्पर्श होवे नहीं। किंतु ज्ञानीके क्रियमाण ओ इस-जन्मविधे किये शुभ औ अशुभकर्मका कर्मसे मुहृद कहिये सकामीभक्त औ द्वेषी कहिये निद-कजन प्रहस्य करे हैं।

३ औ अज्ञानकी विशेषशक्तिके आधिन ज्ञानी-के प्रारब्ध कहिये ऐसे किसी एकजन्मविधे किये इसजन्मके आरम्भ सेही भोगसे निवृत्ति होवेई। तार्ते ज्ञानी सर्वकर्मसे मुक्त है ॥ याहीसे कर्म-रहित जन्मादिकर्मसाथसे ही मुक्त है ॥

इसरीतिसँ ज्ञानीके कर्मकी निवृत्ति होवेई ॥
इति श्रीविचारचंद्रोदय ज्ञानीकर्मनिवृत्ति
प्रकारवर्णननामिका द्वादशकला समाप्ता ॥

अथ त्रयोदशकलाप्रारंभः ॥१३॥

॥ सप्तज्ञानभूमिकावर्णन ॥



॥ तोटक छंद ॥

निज बोधकि भूमि सु सप्त अहैं ।

इस भांति १६६वसिष्ठ मुनीश कहैं ॥

शुभसाधन संपति आदि लहै ।

अवणादिविचार द्वितीय वहै ॥ २७ ॥

निदिध्यासन तीसरभूमि गहै ।

अपरोक्ष निजातम चौथि चहै ॥

हमता ममता विन पंचम है ।

छटवी सब वस्तु अकार दहै ॥ २८ ॥

॥ १६६ ॥ योगवाग्निष्टविषै ॥

सतमी तुरिया जु वरिष्ठिन है ।

सबवृत्ति बिलीन चिदात्म रहै ॥

११७ हृद्य गाढसुषुप्ति न जागत है ॥

परमानन्द मत्त पीतांबर छै ॥ २८ ॥

* २०१ प्रश्न - सर्वज्ञानिनका निश्चय तो एकही है।

परतु स्थितिका भेद काहेतें है ?

उत्तर - सर्वज्ञानिनकी स्थितिका भेद
ज्ञानभूमिकारे भेदतें है ॥

* २२२ प्रश्न — तो ज्ञानभूमिका कितनी हैं ॥

उत्तर १ शुभेच्छा २ सुविचारणा ३ तनु-
मानसा ४ सत्प्रापत्ति ५ अससक्ति ६ पदार्था-
भाविनी ७ तुरीयगा । ये सात ज्ञानभूमिका हैं ।

* २२३ प्रश्नः—शुभेच्छा सो क्या है ?

उत्तरः—१ पूर्वजन्मविषै अथवा इसजन्मविषै किये निष्कामकर्म औ उपासनासँ शुद्ध औ एकाग्र-चित्तवाले पुरुषकूँ विवेकवैराग्यपट्संपत्ति औ मोक्षइच्छा । ये च्यारीसाधन होयके जो आत्माके जाननैकी तीव्रइच्छा होवैहै । सो शुभेच्छा नाम ज्ञानकी प्रथमभूमिका है ॥

* २२४ प्रश्नः—सुविचारणा सो क्या है ?

उत्तरः—२ आत्माके जाननैकी तीव्रइच्छासँ ब्रह्मनिष्ठगुरुके विधिपूर्वक शरण जायके । गुरुके मुखसँ जीवब्रह्मकी एकताके बोधक वेदांत-वाक्यकूँ श्रवण करीके।तिस श्रवण किये अर्थकूँ आपके मनविषै घटावनैवास्ते अनेकयुक्तियांसँ मनन (विचार) करना । सो सुविचारणा नाम ज्ञानकी दूसरीभूमिका है ॥

* २०५ प्रश्न—तनुमानसा सो क्या है ?

उत्तर—३ स्वरूपके साक्षात्कार कहिये अग्रेसर अनुभव अर्थ ध्यानमननद्वारा निर्णय किये ब्रह्मात्माकी एकतारूप अर्थके निरंतर चितनरूप निर्विध्यासनसँ जो स्थूलमनकी कहिये बहिर्मुखमनकी सूक्ष्मता नाम अतर्मुखता होयै। सो तनुमानसा नाम ज्ञानकी तीसरी-भूमिका है ॥

* २२१ प्रश्न—सत्त्वापत्ति सो क्या है ?

उत्तर—४ ध्यानमनननिर्विध्यासनसँ सशय औ विषयवर्त्त रहित स्वरूपसाक्षात्काररूप निर्विकल्पस्थितिक भयेत तत्त्वज्ञानयुक्त मनरूप मत्ता (गुह्य अतःकरण) को जो प्राप्ति होयै। सो सत्त्वापत्ति नाम ज्ञानकी चतुर्थभूमिका है ॥

कला] ॥ सप्तज्ञानभूमिकावर्णन ॥१३॥ २८१

* २२७ प्रश्न:—असंसक्ति सो क्या है ?

उत्तर:—५ निर्विकल्पसमाधिके अभ्यासकी परिपक्वतासँ देहविपै सर्वथा अहंताममता गलित होयके । देहादिकविपै जो सर्वथा आसक्तिका नाम प्रीतिका अभाव होवैहै । सो असंसक्ति नाम ज्ञानकी पंचमभूमिका है ॥

* २२८ प्रश्न:—पदार्थाभाविनी सो क्या है ?

उत्तर:—६ अतिशयनिर्विकल्पसमाधिके अभ्याससँ देहादिकसर्वपदार्थनका अधिष्ठानब्रह्मरूपसँ प्रतीति होनैकरि जो अभाव कहिये अप्रतीति होवैहै । सो पदार्थाभाविनी नाम ज्ञानकी षष्ठभूमिका है ॥

* २२९ प्रश्न:—तुरीयगा सो क्या है ?

उत्तर:—७ ज्ञाता ज्ञान औ ज्ञेयरूप त्रिपुटीकी चतुर्थपंचमभूमिकाकी न्याँई भावरूपकरि औ षष्ठभूमिकाकी न्याँई अभावरूपकरि प्रतीति बी

जदा होवै नहीं । ऐसी जो स्वरसैं उत्थानरहित
तुरीयपदयिमें मनकी स्थिति । सो तुरीयगानाम
ज्ञानकी सप्तमभूमिका है ।

२३० प्रश्न - ये सप्तभूमिका किसके साधन हैं ?

उत्तर:—

१-३ प्रथम द्वितीय औ तृतीयभूमिका । तत्त्व-
ज्ञानके साधन हैं । औ

४ १५=चतुर्थभूमिका औ तत्त्वज्ञानरूप होनैतैं
जीवन्मुक्ति औ विदेहमुक्तिके
साधन हैं । औ

५-७ पञ्चम षष्ठ औ सप्तभूमिका जायन्मुक्तिके
विलक्षणआनन्दके साधन हैं ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये सप्तज्ञानभूमिका
वर्णननामिका अर्थादशकला समाप्ता । १३।

कला] ॥ सप्तज्ञानभूमिकावर्णन ॥१३॥ २८३

॥ १६८ ॥

१ कृतोपासन कहिये ज्ञानतै' पूर्व करीहै पूर्ण
उपासना जिसनै । सो श्री .

२ अकृतोपासन कहिये ज्ञानतै' पूर्ण नहीं करीहै
उपासना जिसनै । सो

इस भेदतै' चतुर्थभूमिकारूप ज्ञानका अधिकारी
दो प्रकारका है ॥ तिनमें

१ कृतोपासन जो है सो तौ सम्यक् वैराग्यादिसाधन-
करि संपन्न होवैहै श्री ज्ञानके अनंतर अल्पाभ्यास-
सँ झटिति पंचमआदिकभूमिकाविषै आरुढ होवैहै ॥

२ श्री अकृतोपासन जो है तामें सर्वसाधन स्पष्ट
प्रतीत होते नहीं किंतु एकदो साधन प्रकट होवैहैं
श्री अन्यसाधन गोप्य रहतेहैं । यातैं सो
बुद्धिमान् होवै तौ चतुर्थभूमिकारूप तत्त्वज्ञानकूं
पावताहै । परंतु बहुकालकें अभ्याससैं कदाचित्
कोईक पंचमआदिकभूमिकाविषै आरुढ होवैहै ।
झटिति नहीं ॥

॥ अथ चतुर्दशकला प्रारम्भः ॥१४॥

॥ जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन ॥

॥ लोटकलुंद ॥

जय जानत है निजरूपहिं ।

तय जीवन्मुक्ति समीपहिं ॥

अमधन्ध निवृत्ति १९१ सदेहहिं ।

सुखसंपत्ति होवत गेहहिं ॥ ३० ॥

विदयान तजै इस देहहिं ।

तय पावत मुक्ति विदेहहिं ॥

तम लेश भजै सद नाशहिं ।

तज देत प्रपंच अभासहिं ॥ १३ ॥

॥ १९३ ॥ तय शरीरमहित पुरुषक' भयरूप
बधकी निवृत्तिस्वरूप जीवन्मुक्ति समीपदीह' कहिये ॥
तरकाज हावई । यह अर्थ है ॥

च.र्द.कला]॥जीवनमुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन॥१४॥२८५.

१७० सरिता इव सागर देशाहिकू ।

चिन्मात्र मिलाय १७१ विशेषहिकू ॥

चिद होय भजे अवशेषहिकू ।

नहिं जन्म पीताम्बर शेषहिकू ॥३२॥

* २३१ प्रश्नः—जीवनमुक्ति सो क्या है ?

उत्तरः—देहादिकप्रपंचकी प्रतीतिके होते
जो ब्रह्मस्वरूपसँ स्थिति । सो जीवन्मुक्ति है ॥

* २३२ प्रश्नः—जीवन्मुक्तिविषै प्रपंचकी प्रतीति
काहेतै होवैहै ?

उत्तरः—आवरण औ विक्षेप । ये दो

॥१७०॥ सागरदेशहिकू सरिता इव (नदीकी न्याँई)

॥ १७१ ॥ स्थूलसूक्ष्मप्रपंचसहित चिदाभासरूप
विप्रेक्षकू ॥

अविद्याकी शक्तियां हैं । तिनमें

१ आचरणशक्तिका ज्ञानमें नाश होवैहै । तब
ज्ञानीकृ अन्यजन्म दोष नही ।

२ परन्तु प्रारम्भके कालमें दूधधान्यफलकी व्यां
विशेषशक्ति (अविद्यालेश) रहैहै ।

तब ज्ञानमुक्तिविषय प्रपञ्चकी प्रतीति होवै

* २३३ प्रश्न—जीवन्मुक्तिविषय प्रपञ्चकी प्रतीति
जैसे होवैहै ?

उत्तर —

१ जैसे रज्जुके ज्ञानसे सर्पभ्रातिके निवृत्त भये
पीछे कवादिक भासनेहैं । औ

२ जैसे दर्पणके ज्ञानीकृ प्रतिबिम्ब भासताहै । औ

३ जैसे मरस्थलके ज्ञानीकृ मृगजल भासताहै ।
तब तबज्ञानीकृ जीवन्मुक्तिदशाविषय बाधित
भये प्रपञ्चकी प्रतीति होवैहै ॥

कला] जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन॥१४॥ २८७

* २३४ प्रश्नः—वाधित भये प्रपंचकी प्रतीतिविषे
अन्यदृष्टांत क्या है ?

उत्तरः—दृष्टांतः—जैसे महाभारतके युद्धमें
द्रोणाचार्यके मरण भये पीछे अश्वत्थामाआदिक
के साथ युद्ध भयाहै ॥ तब सत्यसंकल्पश्रीकृष्ण-
परमात्माने यह संकल्प किया किः—“ इस
युद्धकी समाप्तिपर्यंत पह रथ और घोड़े ज्यूंकेत्यूं
हों वने रहें” । वह चितनकरिके युद्धभूमिमें आये ॥
तहां अश्वत्थामाआदिकोंने ब्रह्मास्त्र (अग्निअस्त्र)
आदिकका समूह डारया । तिसकरि तिसी क्षण-
विषे अर्जुनके रथ और घोड़े भस्मीभूत भये । तौ
वी श्रीकृष्णपरमात्मारूप सारथिके संकल्पके
बलसे ज्यूं त्यूं बनेरहै । जब युद्ध समाप्त भया
नव भस्मीका ढेर होगया ॥

सिद्धान्तः—तैम

१ म्भूतदेहरूप रथ है ।

२ ताके पुण्यवापरूप दोचक्र हैं । औ

३ तीनगुणरूप ध्वज है । औ

४ पाद्यप्राणरूप बंधन है । औ

५ दशइंद्रियरूप घोड़े हैं । औ

६ शुभशुभशब्दादिपांशुधिरूप मार्ग है औ

७ मनरूप लगाम है । औ

८ बुधिरूप सारथि (धीरुण्य) है । औ

९ मारब्धकर्मरूप ताका संकरूप है । औ

१० अहकाररूप बैठनेका स्थान है । औ

११ आत्मारूप रथी (अर्जुन) है ।

१२ ताके वैराग्यादिसाधनरूप शस्त्र है ।

सो रथपर आरूढ़ होयके सत्सगरूप रणभूमि-
में गया । ताकू गुरुरूप अश्वत्थामाआदिकनै
महाबायक उपदेशरूप ब्रह्मास्त्रआदिक मारणा ।

कला] ॥ जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन ॥ १३॥ २८६

तिसकरि ज्ञानरूप अग्नि उदय होयके तिसी
क्षणविषै देहादिप्रपंचरूप रथादिकसर्वका बाध
भया । तौ बी श्रीकृष्णरूप सारथिस्थानी बुद्धिके
प्रारब्धकर्मरूप संकल्पके बलसँ देहादिकका नाश
होता नहीं । किंतु १७२पीछे बी देहादिककी प्रतीति
होवैहै ॥ याहीकूँ १७३ बाधितानुवृत्ति कहैहैं ॥

इसरीतिसँ यह बाधित भये प्रपंचकी
प्रतीतिविषै दृष्टांत है ॥

१* २३५ प्रश्नः—विदेहमुक्ति सो क्या है ?

उत्तरः—

१ प्रपंचकी प्रतीतिरहित ब्रह्मस्वरूपसँ स्थिति । वा
२ प्रारब्धकर्मके भोगसँ नाश भये पीछे स्थूलसूक्ष्म
शरीरके आकारसँ परिणामकूँ प्राप्त भये
अज्ञानका चेतनविषै विलय ।

सो विदेहमुक्ति है ॥

॥ १७२ ॥ जिसका नाश होवे सो नाशका प्रति
यागी है ॥

१ सा प्रतिषेधी की नाशविधै प्रतीति होवेई । भी

२ बाधविधै प्रतिषेधोकी प्रतीति होवे नहीं । किन्तु
तीनकाक्षसमाय प्रतीत होवेई ।

यह नाश भी यात्रका भेद है ॥

॥ १७३ ॥ जैसे कुचाक्षय चक । दंड्यै' फेरनेका
प्रयत्न छोड़हुये पीछे वो वेगके बलसे फिरताई । तैसे'
बाध हुये पीछे वो प्राक्कर्मसे' रेहादिप्रपञ्चका जो
प्रतीति होवे । सो बाधिनानुवृत्ति है ॥

कला] ॥ जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन ॥१४॥ २६१

* २३६ प्रश्नः--प्रारब्धके अन्त भये कार्यसहित
अज्ञानलेशका विलय किस माधनसँ
होवैहै ?

उत्तरः--प्रारब्धके अन्त भये अधिक वा न्यून
मूर्छाकालमें यद्यपि ब्रह्माकारवृत्तिका असंभव है
और विद्वानकूँ विधि भी नहीं है । तथापि सुषुप्ति
की न्याई । ता मूर्छाकालमें भी ब्रह्मविद्याका
संस्कार है । तामें आरूढ चेतनसँ कार्यसहित
अज्ञानलेशका विलय (नाश) होवैहै ॥ और काष्ठ
आरूढअग्निसे तृणादिकका दाह होयके आपके
बो दाहकी न्याई । ता संस्कारआरूढचेतनसँ
प्रपंचका विनाश होयके आप (ज्ञानके संस्कार)
का भी विनाश होवैहै । पीछे असंगशुद्धसच्चिदा-
नंदस्वप्रकाश अपनाआप ब्रह्म अवशेष रहताहै ।

इति श्रीविचारचंद्रोदये जीवन्मुक्तिविदेह-
मुक्तिवर्णन० चतुर्दशकला समाप्ता ॥१४॥

॥ अथ पंचदशकलाप्रारंभः ॥ १५ ॥

॥ १७४ वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्गानि ॥



ललितछंद ॥ (गोपिकागीतवत्)

जन तु १०२ जानिले ज्ञेय अर्थकृ ।

सकल छंद स-वे अनर्थक ॥

सुगति कौन है हेतु ताहिको ।

१०२ जनक बीचको कौन बाहिको ॥ ३३ ॥

धिषय बोधको कौन जानिले ।

प्रनक ईशको तत्त्व मानिले ॥

१०० अहमअर्थकृ मूव सोजिले ।

“तत पदार्थकृ शुद्ध म्वाजिले ॥ ३४ ॥”

॥ १७४ ॥

१ वेदांतशास्त्ररूप प्रमाणसँ जन्य जो यथार्थज्ञान । सो प्रमा है ॥

२ ता प्रमासँ जागनँ योग्य जो पदार्थ । सो प्रमेय है॥
तिनका इहां कथन है ॥ यातँ इस (पंचदशम)
कलाके विचारतँ प्रमेयगतसंशयकी निवृत्ति होवैहै ॥

५ प्रमेयगतसंशयका कथन हमारे किये बालबोधिनी-
टीकासहित बालबोधनामकग्रंथके नवमउपदेशविपै
कियाहै । तहां देखलेना ॥

॥ १७५ ॥ वेदांतके प्रमेयरूप पदार्थनकूँ जानिले ॥

॥ १७६ ॥ बाहिको (मोक्षके हेतु ज्ञानको) बीचको
जनक (अवांतरसाधन) कौन है ?

॥ १७७ ॥ अहं (त्वं) पदके अर्थकूँ ॥

१०८ परमआत्मा एक मानिले ।

तहें सदादि ऐश्वर्य आनिले ॥

सम विदात्म सो १०९ सर्वदा अहे ।

इस पीमांयरो ज्ञानकं गहें ॥ ३५ ॥

७ ११७ प्रश्न.—मोक्षका स्वरूप क्या है ?

उत्तर:—

१ कार्यमक्षिण अज्ञानरूप अन्तर्यकी कदिये
बधनकी निवृत्ति । औ

२ परमानन्दरूप ब्रह्मकी प्राप्ति ।

यह मोक्षका स्वरूप है ॥

॥ १०८ ॥ महा ॥

॥ १०९ ॥ सच्चिदानन्दस्वरूप सो (ब्रह्मसात्माही
एकरा) सबदा (तीनाकालमें) है ॥

कला] ॥ वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्णन ॥ १५॥ २६५

* २३८ प्रश्नः—तिस मोक्षका साक्षात्साधन क्या है?

उत्तरः—ब्रह्म औ आत्माकी एकताका अपरोक्षज्ञान । मोक्षका साक्षात्साधन है ॥

* २३९ प्रश्नः—मोक्षका अवांतर (ज्ञानद्वारा) साधन क्या है ?

उत्तरः—निष्कामकर्म औ उपासनादिक अनेक मोक्षके अवांतरसाधन हैं ॥

* २४० प्रश्नः—तिस ज्ञानका विषय क्या है ?

उत्तरः—आत्मा औ ब्रह्मकी एकता ज्ञानका विषय है ॥

* २४१ प्रश्नः—आत्माका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः—१ देह-इंद्रिय-प्राण-मन-बुद्धि-अज्ञान औ शून्यसँ भिन्न । २ अकर्ता । ३ अभोक्ता । ४ असंग । ५ व्यापक । औ ६ चेतन । आत्माका स्वरूप है ॥

* २४२ प्रश्नः—ब्रह्मका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः—१ निष्प्रपञ्च । २ अमंग । ३ परिपूर्ण । श्री ४ चेतन । ब्रह्मका स्वरूप है ॥

* २४३ प्रश्नः—ब्रह्मआत्माकी एकता कैसी है ?

उत्तरः—१ सच्चिदानन्द । २ ऐश्वर्यस्वरूप । ३ सदाविद्यमान । ब्रह्मआत्माकी एकता है ॥

* २४४ प्रश्नः—ज्ञानका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः—जीवब्रह्मके अमेदका निश्चय । ज्ञानका स्वरूप है ॥

* २४५ प्रश्नः—ज्ञानका साक्षात्तरंग (समीपका) साधन क्या है ?

उत्तरः—ब्रह्मनिष्ठगुरुके मुग्सँ महावाक्यके अर्थका श्रवण । ज्ञानका साक्षात्तरंग साधन है ॥

कला] वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्णन ॥१५॥ २६७

* २४६ प्रश्न:-ज्ञानके परंपराअंतरंगसाधन कौन-
सैं हैं ?

उत्तर:-१ विवेक । २ वैराग्य । ३ पट्-
संपत्ति (शम । दम । उपरति । तितिक्षा । श्रद्धा ।
समाधान) । ४ सुमुक्षुता । ५ “ तत् ” पद औ
“ त्वं ” पदके अर्थका शोधन । ६ श्रवण ।
७ नमन औ ८ निदिध्यासन । ये आठ ज्ञानके
परंपरासैं अंतरंगसाधन हैं ॥

* २४७ प्रश्न:-ज्ञानके बहिरंग (दूरके) साधन
कौन हैं ?

उत्तर:-निष्कामकर्म औ निष्कामउपासना-
आदिक । ज्ञानके बहिरंगसाधन हैं ॥

* २४८ प्रश्न:-ज्ञानके सर्वमिलिके कितनैं साधन हैं ?

उत्तर:-ज्ञानके सर्वमिलिके एकादश (११
वा कलु अधिक) साधन हैं ॥

इति आविचारचंद्रोदये वेदांतप्रमेयनिरूपण-
नामिका पंचदशकला समाप्ता ॥१५॥

मंगलाचरणम् ।

ॐ नमः शिवाय ॥

चैनम्यं शाश्वते शान्तिं व्योमातीति निरंजनम्
नादपिन्दुकलातीति तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥१॥

सर्वश्रुतिशिरोरत्नविराजितपदांघ्रजम् ॥

वेदांतांघ्रजमातङ्गं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥२॥

अज्ञानातिमिराधिस्य ज्ञानांजनशलाकया ॥

अश्रुतमालिप्तं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥३॥

गुरुर्ध्यागुरुर्विष्णुगुरुर्देवो महेश्वरः ॥

गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥४॥

अस्वंहर्मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ॥

तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥५॥

अस्वहानन्दयोधाय शिष्यसंतापहारिणे ॥

सद्भिदानदरूपाय रामाय गुरवे नमः ॥६॥

॥ इति मंगलाचरणम् ॥

॥ अथ षोडशकलाप्रारंभः ॥१६॥

॥ अथ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥

॥ उपोद्धातकीर्त्तनम् ॥

स्मृत्वाऽद्वैतपरात्मानं शंकरं परमं गुरुम् ॥
तात्पर्यसंविदे वक्ष्ये श्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥१॥

टीका:-अद्वैतपरमात्मारूप जो परमगुरु
शंकर हैं ॥ तिनकूं स्मरण करिके । श्रुतिनके
तात्पर्यके ज्ञानअर्थ । मैं श्रुतिषड्लिंगसंग्रह
नामक लघुग्रंथकूं कहताहूं ॥ १ ॥

विषयासक्ति-मानस्य-मेयस्य-संशय-भ्रमाः ।
चत्वारःप्रतिबंधाःस्युर्जानादाढ्यस्य हेतवः ॥

टीका:-१ विषयासक्ति २ प्रमाणगतसंशय

३ प्रमेयगतसंशय औ ४ भ्रम कहिये विपर्यय ।

ये च्यारी ज्ञानकी अदृढताके हेतु प्रतिबंध
होवैहैं ॥ २ ॥

आद्यस्य विनिवृत्तिः स्याद्विराग्यादिचतुष्टयात्
अवर्णेन द्वितीयस्य मननात्तार्क्ष्यस्य च ॥ ३ ॥

टीकाः—प्रथमकी निवृत्ति । विराग्य है आदि
जिनके ऐसे साधनोंके चतुष्टयमें होवे है ओ
द्वितीयकी निवृत्ति अवर्णसं होवे है औ तृतीयकी
निवृत्ति मननमें होवे है ॥ ३ ॥

ध्यानेन तु चतुर्थस्य विनिवृत्तिर्भवेद्ध्युषम् ।
पूर्वपूर्वानिवृत्त्या नैवांतरोत्तरनाशनम् ॥ ४ ॥

टीकाः—औ चतुर्थप्रतिपक्षकी निवृत्ति ।
निदिध्यासनसे निश्चित होवे है ॥ पूर्वपूर्वकी अनि-
वृत्तिकरि उत्तरदत्तरका नाश कहिये निवृत्ति
नष्टा होवे है ॥ ४ ॥

विषयासक्तिनाशेन विना नो श्रवणं भवेत्
ताभ्यामृतं न मननं न ध्यानं तैर्विना भवेत्

टीका:-विषयासक्तिके नाशसँ विना श्रवण
होवै नहीं औ तिन दोनूँ विना मनन नहीं
होवै है औ इन तीनूँसँ विना निदिध्यासन
होवै नहीं ॥ ५ ॥

स्ववर्णाश्रमधर्मेण तपसा हरितोषणात् ।
साधन प्रभवेत्पुंसां वैराग्यादिचतुष्टयम् ॥६॥

टीका:-स्व कहिये मिथ्यात्मा-शरीर । ताके
वर्ण अरु आश्रमसंबंधी धर्मकरि औ कृच्छ्रचां-
द्रायणादितपकरि औ हरिभजन किंवा सर्वभूतन
पर दयादिरूप हरिके संतोषकारक कर्मतँ पुरुष-
नकृं वैराग्यादिकका चतुष्टयरूप साधन प्रकर्ष-
करि होवैहै ॥ ६ ॥

तत्सिद्धाद्युपसन्नः सन् गुरु ब्रह्मविदुत्तमम् ।
ज्ञानोत्पत्त्यै महावाक्यश्रुतिकुर्याद्वितन्मुखात् ।

टीका:- निन ज्यारी साधनोंकी सिद्धिके हुये
ब्रह्मवेत्ताओंविषे उत्तम कहिये निदोषगुरुके
प्रति उपसत्तियुक्त कहिये शरणागत हुया ।
ज्ञानकी उत्पत्तिअर्थ तिस गुरुके मुखसे वेदविषे
प्रसिद्ध अर्थसहित महावाक्यके अर्थसू कहै ॥७॥

तत्सिद्धौ द्वापरभ्रांतिप्रहाणाय मुमुक्षुभिः ।
श्रवणं मननं ध्यानमनुष्ठेय फलावधि ॥८॥

टीका:- ता ज्ञानकी सिद्धि कहिये उत्पत्तिके
हुये । मुमुक्षुनकरि द्वापर जो द्विविधसंशय औ
भ्रांति आ विपरोनभावना । निनके नाशअर्थ
प्रमाणसंशयादिप्रविध प्रतिउधरे नाशरूप फल
पर्यंत जैम दार्यनमं श्रवण मनन औ निदिध्यासन
करतहु पायि दे ॥ ८ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगमग्रहः ॥१६॥ ३०३

श्रवणस्य प्रसिद्धयैव भवतोऽत्ये तथा सति।
द्वयोर्मूलं तु श्रवणं कर्तव्यं तद्धि धीधनैः६

टीका:-श्रवणकी प्रकर्षकरि सिद्धिसँहीं
अंतके दो जे मनन अरु ध्यान वे होवैहैं।
तैसँ हुये तिन दोनूँका प्रसिद्धमूल जो श्रवण।
सो ठो बुद्धिरूप धनवानोंकरि प्रथमकर्तव्य
है ॥ ६ ॥

वेदांतानामशेषाणामादिमध्यावसानतः ।
ब्रह्मात्मन्येव तात्पर्यमिति धीः श्रवणं भवेत्

टीका:-तात्पर्यके निर्णायक पङ्क्तिरूप शु-
क्तिनकरि “ सर्ववेदांत जे उपनिषद् । तिनका
आदि मध्य श्री अंततैं ब्रह्मरूप आत्माविषैहीं
तात्पर्य है” ऐसी जो बुद्धि कहिये निश्चय । सो
श्रवण होवैहै ॥ यह श्रवणका शास्त्रउक्त
लक्षण है ॥ १० ॥

१ उपक्रमापसंहारा २ अभ्यासो ३ अपूर्वताफलम्
४ अर्थवादो ५ उपपत्ती च लिंग तात्पर्यनिर्णये ।

टीका—तिन पटलिंगनक अथ नामकरि
निर्देश करह — १ उपक्रम अरु उपसंहार इन
दोनू की एकरूपता । २ अभ्यास । ३ अपूर्वता
४ फल । ५ अर्थवाद । आ ६ उपपत्ति । यह
प्रत्येक तात्पर्यके निणयविषै लिंग ह ॥ ११ ॥

॥ १ ॥ उपक्रम आ उपसंहार ॥

वस्तुन प्रतिपाद्यस्यादायते प्रतिपादनम् ।
उपक्रमापसंहारी तदेक्य कथितं युधै १२

टीका—अर पटल्लिंगनकरि प्रत्येक लिंगन
लक्षणक रहह — प्रकरणक प्रतिपादन
करनक याम्य जो ब्रह्मरूप अद्वितीयवस्तु है ।
ताका प्रकरणक आदिविषै तथा अन्तविषै जा

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३०५

प्रतिपादन । सो उपक्रम अरु उपसंहार है ॥
तिनमें आदिविषयै जो प्रतिपादन । सो उपक्रम
है । ओ अंतविषयै जो प्रतिपादन । सो उपसंहार
है ॥ तिन दोनूँकी एकलिंगरूपता पंडितोंने
कहीहै ॥ १२ ॥

॥ २ ॥ अभ्यास ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य पठनं च पुनःपुनः ।
अभ्यासः प्रोच्यते प्रोज्ञैः स एवावृत्तिशब्द-
भाक् ॥ १३ ॥

टीका:-प्रकरणकरि प्रतिपादन करनेयोग्य
अद्वितीयवस्तुका तिसप्रकरणके मध्यविषयै
जो पुनः पुनः पठन । सो पंडितनकरि
अभ्यास कहियेहै । सोई अभ्यास आवृत्ति-
शब्दका वाच्य है ॥ १३ ॥

॥ ३ ॥ अपूर्वता ॥

श्रुतिभिन्नप्रमाणेनाविषयत्वपूर्वता ।

कुत्रचित्स्वप्रकाशत्वमप्यमेयतयोच्यते १५

टीका:-प्रकरणरुति प्रतिपाद्य अद्वितीयस्तुकी

जो श्रुतिनै भिन्न कहिये प्रत्यक्षादिलौकिक-

प्रमाणरुति अविषयता है । सो अपूर्वता है ॥

श्री कह्योऊ ता अद्वितीयस्तुकी स्वप्रकाशता यी

अमेयता कहिये सर्वप्रमाणकी अविषयतारूप

हतुकरि अपूर्वता कहियेहै ॥ १४ ॥

८

॥ ४ ॥ फल ॥

श्रुयमाणंतु न ज्ञानादत्तमाप्त्यादिप्रयोजनम्

फल प्रतीतिन प्राप्त्यर्मुख्य मोक्षकलक्षणम्

टीका:-श्री प्रकरणरुति प्रतिपाद्य अद्वितीय

प्रमुख ज्ञाननै प्रकरणविवैश्वयमत्य कहिये तुन्या

ज्ञानितकी प्राप्ति आदिक प्रयोजन । सो पहिलीनै

मानरूप एकतासागयाला मुख्य फल कहाई ॥ १५ ॥

कृत्ता] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगमग्रहः ॥ १६ ॥ ३०७

॥ ५ ॥ अभेवादः ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य प्रशंसनमथापि वा ।
नैदा तद्विपरीतस्य ह्यर्थवादः स्मृतो बुधैः १६

टीका:- प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीय-
वस्तुका जो प्रशंसन कहिये स्तुति अथवा तिसर्तें
विपरीत कहिये द्वैतकी निंदा वी पंडितोंनै
अर्थवाद कहाहै ॥ १६ ॥

॥ ६ ॥ उपपत्तिः ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य युक्तिभिः प्रतिपादनम्
उपपत्तिः प्रविज्ञेया दृष्टान्ताद्या ह्यनेकधा १७

टीका- प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीयवस्तु-
का युक्तिसँ जो प्रतिपादन । सो दृष्टान्तआदिक
अनेकप्रकारकी युक्तिरूप उपपत्ति जाननेकूँ
योग्य है ॥ १७ ॥

गतल्लिङ्गविचारेण भवेत्तात्पर्यनिर्णय
तात्पर्यं यस्य शब्दस्य यत्र सः स्यात्तादर्थ

टीका- उक्तप्रकारके पद्लिङ्गनके उपनि
पदनियै विचारके उपनिपदनका अर्थैत कहि
प्रत्येकअभिप्रायविधै जो तात्पर्य है । तात्
निश्चय होधै ॥ ओ जिन शब्दका जित अर्थ
है ना उव हाये । ना ता शब्दका अर्थ हो
है । अन्य कहिये केषल वाच्यअर्थ नहीं ॥ १८ ॥

मदानां श्रुतिसिद्ध्या मानसंशयानुत्तारं
करोम्यथानिनिच्छिमनिधियल्लिङ्गकीर्त्तनम्

टीका- मन्त्र कहिये अरुडितजनोके ' वेद स्त
नर अहतायवसविधे ता उर्यके निश्चयरूप "
अवणुकी निडिकरि ' वेदान अरुतमल्लरु
प्रतिपादक ह वा अन्यअर्थके प्रतिपादक है ? "

इस ज्ञानरूप प्रमाणसंशयके नाशअर्थ ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३०६

भूमिविषै गाडेहुये निधिके सिद्धिकरि कीर्त्तनकी
न्याई । मैं लिंगनके कीर्त्तनकूँ करूँहूँ ॥ १६ ॥

तत्त्वालोके विशेषोऽपि विचारस्तददर्शनान् ।
मयातेषां समासेन क्रियते दिक्प्रदर्शनम् २०

टीका—यद्यपि आनन्दगिरिस्वामीकृत तत्त्वा-
लोकनामकग्रन्थविषै इन लिंगनका विशेष
विचार किया है । यातैँ इसलघुग्रन्थका प्रयोजन
नहीं है । तथापि ता तत्त्वालोकके अदर्शनतैँ ।
‘भुजेकरि तो संक्षेपसैँ’ इन लिंगनकी दिशामात्रका
प्रदर्शन करिये है ॥ २० ॥

सर्वपूषानिपद्गूथपूषासनमनेकधा ।

ज्ञानशेषं तु तज्ज्ञेयं चित्तशुद्धिकरं यतः २१

टीका—सर्वउपनिषदरूप ग्रन्थनविषै अनेक
प्रकारका उपासन कहिये ध्यान कहा है । सो
ज्ञानका शेष कहिये उपकारक जाननेकूँ

योग्य है । उर्तें चित्तकी शुद्धिका करनेवा
है । यानै उपनिषदनियै जो उपासनाभा
है । ताके पृथक् लिगनके विचारका उपयो
नहीं है । यानै' सो इहां नहीं किया ॥ ३१ ॥

इति धीमृतिपङ्क्तिगतापदे उपादधातकीर्तन

नाम प्रथमं प्रकरणं समाप्तम् ॥ ३१ ॥

अथेशावास्योपनिषल्लिगकीर्तनम् ॥

ईशावास्यमुपक्रमोपसंहारः स पर्यगात् ।

अनेजदेकमित्याद्योऽभ्यासस्तस्याद्वयस्य ।

१ उपक्रमउपसंहार — (१) 'ईशा-
वास्यामिदं सर्वं' । कहिये ' यह सर्व
जगन् । ईश्वरकरि आवास्य कहिये आच्छादन
करनहु याग्य है " । ऐसै प्रथममन्त्रसँ उपक्रम
परिके । (२) ' स पर्यगाच्छुक्ले । ' कहिये
" सा ब्यासीओरनं जातामया श्री शुद्ध है " ।
इस मन्त्रनकनि उपसंहार है ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगमं महः ॥१६॥ ३११

१ अभ्यासः—श्रौ “अनेजदेकं मनसो
जवीयो” । कहिये “ अचंचल एक मनसैं
वेगवान् है” । इसआदि अर्थरूप तिस अद्वैतका
अभ्यास है ॥ इहां आदिराब्दकरि “ तदंतरस्य
सर्वस्य ” कहिये “ सो इस सर्वके अंतर है ”।
इस मन्त्रका ग्रहण है ॥ १ ॥

नैनहेवा अपूर्वत्व फलं मोहाद्य भावकम् ।
कुर्वन्नित्यनुवाद्यैवासूर्या भेदाविनिदनम्

२ अपूर्वताः—नैनहेवा आप्नुवन् पूर्व-
मर्शत्” । कहिये इसकूं देव जे इन्द्रिय वे न
प्राप्त होते भये । सो पूर्व गयाहै ” । इस ४
मन्त्रकरि उपनिषदनतैं अन्य प्रत्यक्षादिप्रमाणनकी
अविषयतारूप अपूर्वता कहीहै ॥

४ कलः—श्री“तत्र को मोहः कः शोक,
 ऽमृतमनुपश्यतः” कहिये “ तहां एवताके
 दग्तहारेकू कौन मोह है । कौन शोक है” । इस
 ७ मन्त्रसे मोहयादिकका अभावरूप कल
 कहाई ॥

५ अर्थवादः—कुर्वन्नवेह कर्माणि जिजी-
 विषेच्छत्तत्समाः” । कहिये “ इहा कर्मनकू
 करनाहुया शतरर जोयनेकू इच्छे” । इस
 २ मन्त्रसे जीवनको इच्छावाले भेददर्शीकू कर्म
 करनेका अतुगद करिकेही । पीछे “असूर्या
 नाम ते लोकाः” । कहिये “ वे अतुरनके
 लोक प्रनिद्ध ह ” । इन ३ मन्त्रसे भेदज्ञानकी
 निंदा अर अर्थात् अमेदज्ञानकी स्तुतिरूप
 अर्थवाद उदाई ॥ २ ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्गुलिंगसंग्रहः ॥१६॥ ३१३

तस्मिन्नपो मातरिरवेत्युपपत्तिः प्रदर्शिता !
एतैरीशोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥३॥

६ उत्पत्तिः—श्रौ “तस्मिन्नपो मात-
रिश्वा दधाति” । कहिये “ ताके होते वायु
जलकुं धारताहै” । ऐसै इस ४ मन्त्रसँ उपपत्ति
कहिये अभेदबोधनकी युक्ति दिखाई ॥ इन लिंगों-
करि ईशोपनिषद्का अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य
अंगीकार करियेहै ॥ ३ ॥

इति श्री० ईशोपनिषद्विलिङ्गकी० द्वितीयं
प्रकरणं ॥ २ ॥

अथ केनोपनिषद्विलिङ्गकीर्तनम् ॥३॥
प्रोत्रस्येत्पाद्युपक्रम्य प्रतिबोधादिवाक्यतः
उपसंहार एवोक्तस्तदैक्यं ज्ञायते बुधैः ॥१॥
१ उपक्रमउपसंहारः—[१] “प्रोत्रस्य

श्रोत्र ' । कहिये "धोत्रका धोत्र है" इत्यादि १ खड्के २ पाष्यसें उपक्रमकरिके ॥ [२. 'प्रनियोधयेदित' । कहिये 'बोवगोधके प्रति विदित हैं" । इत्यादि १।१२ वाक्यसें उपसंहार ही कहा है । इन शोनूँकी एकता पंडितनकरि जानियेई ॥ ८ ॥

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धीत्याद्यभ्यास उदीरित
तत्रेत्याद्यपूर्यस्त्व प्रेत्यास्मादिनि वै कलुष
२ अभ्यास.—'तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि' ।
कहिये 'ताहीकू तू ब्रह्म जान" इत्यादि १।४ =
अभ्यास कहा है ॥

३ अपुवर्ताः—औ'न तत्र चतुर्गच्छति'
कहिये "तिसविधै चक्षु गमन करता नहीं" ।
इत्यादि १।३ उपनिषदनर्तै भिन्न प्रमाणकी
अविषयतारूप अपूर्वता है ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३१५

४ फलः—‘भूतेषु भूतेषु विचिंत्य धीराः’
कहिये “ धीर । सर्वभूतनविषे जानिके ” । ऐसैं
आत्मज्ञानकू अनुवाद करिके ‘प्रेत्यास्माल्लोका-
दमृता भवन्ति’ । कहिये “ इस लोकतैं देह
अरु प्राणके वियोगकू पायके अमृतरूप होवैहै”
ऐसैं ३-५ प्रसिद्धफल कहाहै ॥ २ ॥

ब्रह्महेत्याद्यर्थवादऽविज्ञातामिति चांतिमम्
एतैः केनोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥३॥

५ अर्थवादः—औ ‘ब्रह्म ह देवेभ्यो
विजिग्ये काहय “ब्रह्म देवनके अर्थ विजय
देताभया” । इत्यादि इन ३ । १ वाक्यनसैं
आख्यायिकारूप अर्थवाद कहाहै ॥

६ उपपत्ति—औ ‘यस्यामतं तस्य
मतं’ कहिये “जिसकू अज्ञात है तिसकू ज्ञात
है” । इत्यादिरूप इस २ । ३ स्थयंप्रकाश अद्वैत-
वस्तुके साधक वाक्यकरि अंतिम कहिये ‘उपपत्ति

कहिये तर्कमयधुनिरूप यष्टलिंग कहा है ॥ ३ ॥
 लिंगांतरि क न उपनिषद्का अद्वैतब्रह्मविषय ता
 अङ्गीकार करिये है ॥ ३ ॥

इति श्री० केनोपनिषद्भिगक रत्न नाम

तृ० प्र० ममाप्तम् ॥ ३ ॥

प्रथ कठोपनिषद्भिगकर्तनम् ॥४॥

येष मेने मनुष्ये ति इत्यादि सामान्यनस्त
 अन्यथा धर्मतस्ति इत्यादिवाक्याद्य विशेषत

१ उपक्रम उपसहारः-[१] 'येष मेने

विचिकित्सा मनुष्ये' इत्यादि मरे मनुष्यविषय
 जा यह सशय है इत्यादि १।१।१० सामान्यत
 उपक्रम है । तथा 'अन्यथा धर्मादन्यत्रा
 धर्मादन्यत्राप्मात्कृताकृतात्' कहिये 'धर्मतै
 भिन्न अरु अधमने भिन्न श्री इस कार्य कारणतै
 भिन्न है इत्यादि १।२।१४ वाक्यतै विशेषकरि
 उपक्रम है । १ ॥

कला] ॥ "आश्रुतिपङ्क्तिर्लिंगमग्रहः ॥१६॥ ३१७

उपक्रमोऽगुष्टमात्र इत्यारभ्योपसंहृतिः ।
न जायतेऽशरीरं च नित्यानां नित्य एव सः २
चेतनोऽचेतनानां च बहुनामेक एव च ।
अतत्तियेषोपलब्धव्य इत्याद्यभ्यास ईरितः ३

(२) औ 'अंगुष्टमात्रः पुरुषोऽन्तरात्मा' । कहिये 'अंगुष्टमात्र पुरुष अन्तरात्मा है' । ऐसैं आरंभ करिके इस २।६।१७ वाक्यसैं उपसंहार कहाहै ॥

२ अभ्यासः—औ 'न जायते म्रियते वा' । कहिये "जन्मता नहीं वा मरता नहीं" । १।२।१८ औ 'अशरीरं शरीरेष्वनवस्थे-
ष्ववस्थितम्' । कहिये अस्थिर शरीरनविनै स्थित अशरीरकृ" २।२।२१ औ नित्यो नित्यानां । कहिये "सो नित्योंका नित्य है" । २।४।१३ ॥ २ ॥

श्री 'चेतनश्चेतनानामेको बहूनां विद-
धानि कामान्' । कहिये "चेतनोंका चेतन
है । बहुतमके मध्य एक हुआ कामोंकू करता
है" । २ । ५ । २३ श्री 'अस्मीत्येवांपल-
दधदया' । "है" देखेंहीं जाननेकू योग्य है ।
७ । १३ इत्यादि बहुकरिके अभ्यास कहा
है ॥ ३ ॥

नैव वाचा न मनसंत्याद्यपूर्वत्वमिगितम् । मृ-
त्युप्रोक्ता त्वेवमाद्याफल श्रुत्या समीरितम्

३ अपूर्वताः—“नैव वाचा . न मनसा
प्राप्तु शक्यो न चक्षुषा' कहिये 'नहीं वाणी
करि न मनकरि न चक्षुकरि जाननेकू शक्य
है' । १ । ६ । १६ इत्यादि अपूर्वता अभि-
प्रेत है ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिप्रसंगः ॥ १६ ॥ ३१६

४ फलः—श्रौ “मृत्युप्रोक्तां नचिकेतांऽथ
लब्ध्वा विद्यामेनां योगविधिं च कृत्स्नम्।
ब्रह्म प्राप्तो विरजोऽभूद्विमृत्युरन्योऽप्येवं
यो विदध्यात्ममेव” । कहिये “अनन्तर नचि-
केता । यमकरि कही इस विद्याकूँ श्रौ संपूर्ण
योगविधिकूँ पायके ब्रह्मकूँ प्राप्त निर्मल मृत्यु-
रहित होताभया । अन्य वी जो अध्यात्मकूँहीं
जानैगा सो ऐसे होवेगा” । इत्यादि १ अध्या-
यकी ६ पष्ठवल्लीके १८ वाक्यतैं । श्रुतिमें फल
सम्यक् कहाहै ॥ ४ ॥

स लब्ध्वा मोदनीयं वै फलं प्रोक्तं स्फुटं तथा
ब्रह्म क्षत्रं च युगलमोदनं त्वेवमादितः५
तैसै “स मोदते मोदनीय हि लब्ध्वा” ।
कहिये “सो मोदरूपसैं अनुभव करने योग्यकूँ
पायके मोदकूँ पावताहै” १ । २ । १३ इस
वाक्यकरि गेसैं यह वी स्पष्ट फल कहाहै ॥

५ अर्थवाद—श्री “यस्य ब्रह्म च क्षत्रं
 च उभे भयन ओदनः” । कहिये “ जाका
 ब्राह्मण श्री क्षत्रिय दोनू ओदन दोवई” । १। २।
 २४ इत्यादि वाक्यते ॥ ५ ॥

अर्थवादश्च युक्तिर्यै त्वग्निरित्यादिवाक्यतः।
 एभि कठोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिदमे ६

अद्वैतब्रह्मकी स्तुतिरूप अर्थवार कहाई ।
 तैत्ति ‘मृतयोः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेय
 पश्यति’ कहिये “ जो इहां नानाकी न्यां
 देखताई सो मृत्युनं मृत्युकुं पावताई ”

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह ॥१६॥ ३२१

६ उपपत्तिः—अग्निर्गर्थको भुवनं प्र-
विष्टो रूपरूपं प्रतिरूपो बभूव” । कहिये
“जैसेँ एक अग्नि भुवनके प्रति प्रविष्ट हुया
रूप—रूपके ताँई प्रतिरूप होताभया” । २ । ५ ।
६—११इत्यादि तीनमन्त्ररूप वाक्यनकरि औ
चकारसँ येन रूपं रसं गंधं” कहिये “ जिस
करि रूपकूं रसकूं गन्धकूं जानताहै । इस २।
४।३ आदिक अनेकवाक्यनसँ वी युक्तिशब्दकी
वाच्य उपपत्ति कहीहै ॥ इन लिंगोंकरि कटा-
वल्लीउपनिषद् का अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य अङ्गी-
कार करियेहै ॥ ६ ॥

इतिश्री०कठोपनिषद्भक्तिगकी च० प्र० समाप्तम्॥४॥

अथ प्रश्नोपनिषद्लिंगमार्तनम् ॥५॥

ब्रह्मपरा हि वै ब्रह्मनिष्ठा इत्युपक्रम्य तत्
तान्हावाचैतावदेवोपसंहारस्तदेकता ॥

१ उपक्रमउपसंहार.-[१] " ब्रह्मपरा
ब्रह्मनिष्ठा पर ब्रह्मान्वेषमाणाः" । कहिये
ब्रह्मनिष्ठै तत्परब्रह्मनिष्ठ परब्रह्मकू खोजते हुये"
१ । १ ऐसे तिस परब्रह्मकू ही उपक्रम करिके ।

(२) ' तान्हावाचैतावदेवाहमेतत्परं ब्रह्म
यद् नाना परमस्ति" । कहिये" तिनकू फइता
भया इतनाही मैं इस परब्रह्मकू जानताहू ।
इसन पर नहा है । ६ प्रश्नके ७ वाक्यसँ ऐसे
उपसंहार है । इन दोनूकी एकलिंगरूपता
है ॥ १ ।

ला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः । १६ ॥ ३२३

एतद्वै सत्यकामेति यत्तादभ्यास उच्यते ।

इहैवानःशरीरे तु सोम्य ! चत्याद्यपूर्वता

१ अभ्यास—औ “ एतद्वै सत्यकाम !

परं च।परं च यदोकारः” । कहिये “ हे
सत्यकाम ! यह निश्चयकरि परब्रह्म औ अपर-
ब्रह्म है । जो ॐकार है ” । ५ । २ । ऐसै औ

“यत्तच्छ्रुतमजरममृतमभयं परं च , ।

कहिये “जो सो शांत-अजर-अमृत-अभय श्रुत
परब्रह्म है । ५ । ७ ऐसै अभ्यास कहिये है ॥औ

३ अपूर्वता—इहैवानः शरीरे सोम्य !

स पुरुषो यरिमन्नेताःपोडशकला-प्रभवन्ति
कहिये“ हे सोम्य ! इसीहीं शरीरके भीतर सो
पुरुष है । जिसविषे ये पोडशकला उपजतीयां
हैं ” । इस ६ । २ वाक्यसँ शरीरविषे स्थित-
काहीं उपदेशविना अनुपलंभ कहिये अप्रीतीति-
रूप अपूर्वता सूचन करी ॥ २ ॥

त येषं पुरुषं वेदेत्यादितः फलमुच्यते ।
तदच्छ्रायमदेहं चेत्यादिभिः कथिता स्तुतिः ।

४ फलः—श्री—“तं येषं पुरुषं वेद यथा ।
मा वो मृत्युपरि ज्यथा इति” । कदिये
‘तिम्र वेद्यपुरुषकृ जैमाई तैमा जानता । तुमकृ
मृत्युकी पीडा मति होइ ” । वेद ६ । ६ इत्यादि
वाक्यन फल कदियई ॥ श्री ॥

५ अर्थवादः—“तदच्छ्रायमशरीरमलो-
हित शुभ्रमक्षरं वेदयते यस्तु सोम्य । स
सर्वज्ञ सर्वो भवति” । कदिये—हे सोम्य !
जो पाठक तिम्र अमानरहित अशरीर—अलो-
हित शुभ्र अक्षरकृ जानताई । सो सर्वज्ञ अरु
सर्व दावी । इत्यादि ४ । १० वाक्यनकरि
अर्थवादरूप स्तुति कटीई ॥ ३ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३२५

दीसमुद्रदृष्टान्तादुपपत्तिः प्रदर्शिता ।

तैः प्रश्नोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥४॥

६ उपपत्तिः—श्री 'स यथेमा नद्यः'
कहिये "सो जैसें ये नदीयां" इस ६।५.
आदिक ६।६। वाक्यगत दृष्टान्ततै परमात्मातै
पोडशकलाओंकी उत्पत्ति अरु विनाशके उपन्या-
सतै उपपत्ति दिखाई ॥ इन लिंगोंकरि प्रश्नोप-
निषद्का अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकार
करिये हैं ॥ ४ ॥

इति श्री० प्रश्नोपनिषद्विलङ्ग० पंचमं प्र० समाप्तम् ॥५॥

अथ मुण्डकोपनिषद्विलङ्गकीर्त्तनम् ॥६॥

अथ परेत्युपक्रम्य यो ह वै परमं च तत् ।

ब्रह्म वेदेत्यादिवाक्यादुपसंहार ईरितः ॥१॥

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) 'अथ परा
यया तदक्षरमधिगम्यते यत्तददृश्यं ? ।

कहिये “अब पराविद्या कहिये है:-जिसकरि सो
 अक्षर जानिये है जो सो अदृश्य है” । इत्यादि
 १।१।५—६ यास्यकरि उपक्रमकरिके ।
 (२) “स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद”
 कहिये ‘सो जोई नित परम ब्रह्मकू जानना है’
 इत्यादि ३।२ । ६ यास्यर्न उपसहार कहा
 है ॥ १ ॥

आविः सन्निहितं चेति तदेतदक्षरं त्विति ।
 अभ्यासो गृह्यते नैव चक्षुरेत्याद्यप्युक्तम् ॥ १ ॥

१ अभ्यास:-श्री “आविः सन्निहितं”
 कहिये ‘प्रत्यक्ष है अरु समीपमें है’ २।२।१
 श्री ‘तदेतदक्षरं ब्रह्म’ कहिये ‘सो यह अक्षर-
 रूप ब्रह्म है’ १।२।२ । २ ऐसे तो अभ्यास
 कहा है ॥ श्री

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३२७

३ अपूर्वताः—“न चक्षुषा गृह्यते नापि
वाचा । ” कहिये “ न चक्षुकरि ग्रहण कहियेहै
अरु वाक्करि वी नहीं । ” इत्यादिरूप ३
मुंडकके १ खंडके = वाक्यकी अर्थरूप अपूर्वता
कहिये प्रमाणांतरकी अविषयता है ॥ २ ॥

भिद्यते हृदयग्रन्थिरित्याद्यात्कलमीरितम् ।
यं यं लोकं च हेत्याद्यैरर्थवादःप्रघोषितः॥३

४ फलः—“ भिद्यते हृदयग्रन्थिः । ”

कहिये तिस परावरके देखे हुये । “हृदयग्रन्थि
भेदकूं पावता है ।” इस २ । २ । = आदिक
३ । २ । ८—६ वाक्यतैं फल कहा है ॥

५ अर्थवाद - श्री ' यं यं लोकं मनसा
 सधिभाति विशुद्धसत्त्वं कामयते याश्च
 कामान् । त त लोकं जायते तांश्च कामा-
 स्तरमादात्मज्ञं सर्वयेद्भूतिकामः ।' कदिये
 निर्मल मनवाला जिस जिस लोककूं मनसैं चित-
 घता है ओ जिन भोगनकू इच्छता है । तिस
 तिस लोककू ओ तिन भोगनकूं पावता है ।
 ताने विभुनिकी इच्छावाला आत्मशानीकू पूजन
 करे । " इम ३ । १ । १० आदिक पादवनसैं
 अर्थावाद पढाई ॥ ३ ॥

सुर्दामाग्नैर्पथत्यादिनोपपत्तिः प्रकाशिता ।
 एतैर्मुहुरुतात्पर्यमद्वैतैऽगीकृतं बुधै ॥४॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३२६

६ उपपत्तिः—श्री “ यथा सुदीप्तात्पाव-
काद्विस्फुलिङ्गा सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः।
तथाऽक्षराद्विविधा सौम्य ! भावाः प्रजा-
यन्ते तत्र चैवापियन्ति” कहिये “जैसैं प्रज्वलित
अग्नितैं हजारों हजार सरूप विस्फुलिङ्ग उपजते
हैं। तैसैं हे सौम्य ! अक्षरतैं विविध पदार्थ
उपजतेहैं श्री तहांहीं लीन होतेहैं । ” इस
२।१।१। आदिक वाक्यतैं उपपत्ति प्रकाश
करीहै॥इन लिङ्गोंकरि मुं डकोपनिषद्का अद्वैत-
विषै तात्पर्य पंडितोंनै अङ्गीकार कियाहै ॥४॥
इति श्री० मुं डकोपनिषद्लिङ्ग० पण्डं प्र० समाप्तम् ॥६॥

अथ माह्वयोपनिषल्लिङ्गकीर्तनम् ।

ॐ मित्येतदुपक्रम्यामाद्य इत्युपसंहृतिः
प्रपञ्चोपशमं शान्तमित्याद्यभ्यास ईरितः ॥

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) ‘ॐ मित्ये
तदक्षरमिदं सर्वं’ कहिये “यह सर्व ‘ॐ
येमा यह अक्षर है ।” इस १ वाक्यसे उपक्रा
फरिगे । ‘अमाद्यश्चतुर्थो’ । कहिये “अमा
त्ररूप चतुर्थपाद है ।” इत्यादिरूप १२ वाक्यसे
उपसंहार है । श्री

२ अभ्यास—“ प्रपञ्चोपशमं शान्तं ।
कहिये ‘निष्पन्न अरु शान्त है” । १२ इत्यादि
अभ्यास कदा है ॥ १ ॥

अदृष्टमाद्यपूर्वत्वं संविशत्वात्मना फलम्
अर्वांतरकलांतिस्तु तदर्थवांदो विदां मते ॥ २

३ अपूर्वता—श्री “ अदृष्टमव्ययहार्यं ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥ ३३?

कहिये “अदृष्ट है अरु अव्यवहार्य है” । ७
इत्यादि प्रमाणांतरकी अविषयतारूप अपूर्वता
है ॥ औ

४ फलः—“संविशत्यात्मनात्मानं य एवं
वेद” । कहिये “आत्माकूँ जो ऐसैं जानताहै सो
आत्माके साथि प्रवेश करताहै” । इस १२
वाक्यकरि फल कहाहै ॥ औ

५ अर्थवादः—“आप्नोति ह वै सर्वान्
कामान्” । कहिये ‘सर्व कामोंकूँ पावताहै’ ।
इस ६ आदिक १० वाक्यनसैं जो अवांतर-
फलकी उक्ति है । सो तो विद्वानोंके मतविषै
प्रसिद्ध अर्थवाद है ॥ २ ॥

अद्वैते च प्रवेशायोपपत्तिः; पादकल्पना ।
मांडूक्योपनिषद्भाव एवेमैरिष्यतेऽद्वये ३

६ उपपत्तिः—औ अद्वैत ब्रह्मविषै प्रवेश
अर्थ १—१२ वें वाक्यपर्यंत जो ४ पादनकी

कल्पना है । सो उपपत्ति कहिये युक्ति है ॥ इन
 लिंगोंकरिहीं माहूक्योपनिषद्का भाव कहिये
 तात्पर्य अर्द्धतब्रह्मविषै अंगीकार करियेहै ॥३॥
 इति ध्यो० माहूक्योपनिषद्लिंग०सप्तम०त्र०समाप्तम्॥

अथ तैत्तिरीयोपनिषद्लिंगकीर्तनम् । ८ ।

ब्रह्मविदित्युपक्रम्य यश्चायं तूपसंहृतिः ।
 तस्मादा इत्यवोयास्यं यदा ह्येवेति चापरम् ?

र्थापाऽस्मादित्यधोऽपासो यतो वाचो-
 त्वपूर्वता ।

सोऽश्नुते ब्रह्मणा कामान् सहत्यादि फलं
 श्रुतम् ॥ २ ॥

१ उपक्रमउपसंहारः— (१) “ ब्रह्मवि-
 दामोनि पर” कहिये ब्रह्मवित् परब्रह्मकू-
 पावताहै ’ । २ । १ ऐसैं उपक्रम करिके ।

कला] ॥ धौश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३३३

(२) 'स यश्चायं पुरुषे । यश्चासावादित्योऽस
एकः' । कहिये " सो जो यह पुरुषविषै है श्री
जो यह आदित्यविषै है । सो एक है" । इत्यादि
रूप इस २ । ८ वाक्यकरि उपसंहार है । श्री

२ अभ्यासः—“ तस्माद्वा एतस्मादा-
त्मन आकाशः संभूतः” । कहिये “तिस इस
आत्मातैं आकाश उपज्या” । २ । १ ऐसैं श्री
“यदा ह्यवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनन्त्येऽनि-
रुक्तेऽनिलयने” कहिये “ जवहीं यह इस
अदृश्य-अशरीर-अवाच्य-अनाधारविषै” । यह
२ । ७ अपर वाक्य है ॥ १ ॥

श्री “भीष्मास्माद्वातः पचते” । कहिये इस
परमात्मासैं भयकरि वायु चहता है ” । २ । ८
ऐसैं अभ्यास है ॥ श्री

३ अपूर्वताः-“यतो वाचो निवर्त्तते
अप्राप्य मनसा सह” । कहिये “मनसहित
वाणीया अप्राप्त होयके जिसतैं निवर्त्त होवैहै” ।
इम २। ४ वाक्यसैं मनवाणीकरि उपलक्षित
सकलप्रमाणकी अगोचरत्तारूप अपूर्वता कही ॥

४ फल -औ” सोऽनृतं सर्वान् कामान्
सह पूज्यता विपरिचिता” । कहिये “सो ज्ञानी
ज्ञानरूप प्रह्वके साथि एक दुया सर्व कामोंकु
भागताह । २। ४ इत्यादि २ चल्लीके ७ वें
अनुवाकम फल कहाहै ॥ २ ॥

अर्थवादोऽनर कुयोदुदर भेदनिन्दनम् ।
गायन्तास्ते हि सामैतादित्यादिर्बिन्दुयःस्तुतिः

५ अर्थवाद.- ‘यदुदरमनर कुरुते । अथ
तस्य भय भवति” । कहिये “जो यत् बिन्दित
नरक रानाहै । अनन्तर ताकु भय होवैहै” ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३३५

२।७ पेसैं भेदज्ञानकी निंदा है औ “ गाय-
न्नास्ते हि तत्साम० अहमन्नमहमन्नमह-
मन्नम्। हमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नादः”।
कहिये “ विद्वान् इस सामकूँ गायन करताहुया
स्थित होवै है:-मैं [सर्व] भोग्य हूं। मैं भोग्य
हूं। मैं भोग्य हूं। मैं। [सर्व] भोक्ता हूं। मैं
भोक्ता हूं। मैं भोक्ता हूं ”। इत्यादि २।१०
विद्वान्की स्तुति है। सो अर्थवाद है ॥ ३॥
गतां भूतानि जायंते नत्सृष्ट्वेत्यादितोऽतिमम्
तैत्तिरीयश्रुयते भाव एवेमैरिष्यतेऽद्वये॥४॥

६ उपपत्ति:-औ “ यतो वा इमानि
भूतानि जायंते”। कहिये “ जिसतैं ये भूत
उपजतेहैं”। ३।१ औ “ तत्सृष्ट्वा तदेवानु-
प्राविशत् ” कहिये “ ताकूँ सृजिके ताहीके
प्रतिप्रवेश करताभया”। २।६ इत्यादि कार्य-

३ अपूर्यताः—“यतो वाचो निवर्तते
अपाप्य मनसा सह” । कहिये “मनसहित
वाणीया अग्रास होयके जिसर्तै निवर्त होवैहै” ।
इम २ । ४ वाक्यसै मनवाणीकरि उपलक्षित
सरलप्रमाणोंकी अगोचरत्तारूप अपूर्यता कही ॥

४ कलः—औ “सोऽरनुते सर्वान् कामान्
सह यूत्स्येण विपरिचिता” । कहिये “सो प्राणी
ज्ञानरूप ब्रह्मके माथि एक हुण सर्व कामोंकुं
भागताहै । २ । १ इत्यादि २ यज्ञीके ७ ये
अनुवाकर्म कल कहाहै ॥ २ ॥

अर्धयादोऽनर कुशोदरं भेदनिदनम् ।
गायन्नास्ते हि सामेनादिस्थादिर्बिदुषःस्तुतिः

५ अर्धयादः—“यदुदरमनर कुम्भे । अथ
नस्य भय भयति” । कहिये “ओ यत् निचित
नस्य कानाहै । अन्तर मायुं भय होवैहै” ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३३५

२।७ ऐसे भेदज्ञानकी निद्रा है औ “ गाय-
न्नास्ते हि तत्साम० अहमन्नमहमन्नमह-
मन्नम्। हमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नादः”।

कहिये “ विद्वान् इस सामकूँ गायन करताहुया
स्थित होवै है:-मैं [सर्व] भोग्य हूं। मैं भोग्य
हूं। मैं भोग्य हूं। मैं। [सर्व] भोक्ता हूं। मैं
भोक्ता हूं। मैं भोक्ता हूं ”। इत्यादि २।१०
विद्वान्की स्तुति है। सो अर्थवाद है ॥ ३॥

भूतां भूतानि जायते तत्सृष्टेत्यादितोऽतिमम्
तैत्तिरीयश्रुयते भाव एवेमैरिष्यतेऽद्वये॥४॥

६ उपपत्ति:-औ “ यतो वा इमानि
भूतानि जायते”। कहिये “ जिसतैं ये भूत
उपजतेहैं”। ३।१ औ “ तत्सृष्ट्वा तदेवानु-

प्राविशत् ” कहिये “ ताकूँ सृजिके ताहीके
प्रतिप्रवेश करताभया”। २।६ इत्यादि कार्य-

कारणके अभेदके बोधक सृष्टिः साध्यतै श्री ।
 प्रवेशा प्रविष्ट अरु प्रवेश्यके अभेदके बोधक
 प्रवेशसाध्यतै अतका उपपत्तिरूप लिंग कहा है ।
 इन लिंगोंकरिहीं तैत्तिरीयोपनिषद्का भाव कहिये
 सात्पर्य अद्वैतविषै अंगीकार करिये है ॥४॥

इति धी० तैत्तिरीयोपनिषद्लिंग० नामाष्टम

प्रकरण समाप्तम् ॥ ८ ॥

अयेतरेयोपनिषद्लिंगकीर्त्तनम् ॥ ९ ॥

आत्मा या इत्युपक्रम्योपसंहारस्तु चातिमे
 प्रज्ञानं सूक्ष्मं वाक्पै न महतांक्तो हि धीधनैः*

* उपक्रम उपसंहार—[१] आत्मा
 या इदमेक एवाग्र आसीत् " कहिये " यह
 आगे आ-मादा होता भया " ११ ११ १
 वसै उपक्रम करिये । (२) " प्रज्ञानं सूक्ष्म "

कला] ॥ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३३७

कहिये “ प्रज्ञान जो जीव सो ब्रह्म है ” । इस
अंतके ३ अध्यायविषय स्थित ५ खण्डके ३
ऋक्गत महावाक्यकरि बुद्धिमानोंने प्रसिद्ध
उपसंहार कहा है ॥ १ ॥

स इमानसृजल्लोकान्स ईक्षत सृजा इति ।
तस्मादिदं द्रष्टव्यादिवाक्यैरभ्यास ईरितः २

६ अभ्यासः—श्री “ स इमँल्लोकान-
सृजत् ” । कहिये “ सो इन लोकनकूँ सृजता
भया ” । १ । १ । २ श्री “ स ईक्षते मे नु
लोका लोकान्नु सृजा इति ” कहिये “ सो
ईक्षण करताभयाः—ये लोक हैं । लोकपालोंकूँ
सृजों ऐसैं ” । १ । १ । ३ श्री । “ तस्मादि-
दं द्रो नाम ” कहिये “ तार्ते इदं द्र नाम है ” ।
१ । ३ । १४ इत्यादि वाक्योंकरि अभ्यास
कहा है ॥ २ ॥

स जान इत्यपूर्वत्वं प्रजानेष्टं तदित्यपि ।
स जनेनेतिवाक्येन फलं स्पष्टमुदारितम् ।

३ अपूर्वताः—श्री "स जानां भूताभ्य-

मिदमेक्षत " कदियं " सो प्रगटदुया भूततयु'
स्पष्ट ज्ञानता भया " इत्य १ । ३ । १३ वाक्यस्य
सर्वं भूततया प्रमाणक दोषं कति तितकी अयि-
यतास्य विद्या - सर्वं संप्राप्तानेष्टं " कदियं
स्यनगतं स्वयंवाश नीतव्यरूप निगोदकपालाई'
इत्य अ वाक्य ५ सगदके ३ वाक्यस्य तैर्
स्वयंवाशनास्य श्री अपूर्वता कहीदै ।' श्री

४ कल स जनेन प्रज्ञानात्मनाऽऽमा-
ल्लिकादु ज्ञानासुरिजन मय्य लोक सद्यो
तामानाऽऽयाऽद्युत ससभयतु ससभयतु
इत्य म क हय ना इत्य उक्तव्यगै इत्य
सा ३ न उक्त पल कनीक उक्त मातव्य ओकविने

कला] ॥ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥१६॥ ३३६

सर्वकामोंकूं पायके अमृत होताभया । ऐसे
सत्य है” । इस ३ अध्यायके ५ खंडके ४ वाक्य-
करि स्पष्ट फल कहा है ॥ ३ ॥

ता एता देवताः सृष्टास्तथा गर्भे नु सन्निति
स्तुतिर्युक्तिस्तु स इमानित्यारभ्यविदार्यसः
एतं सीमानमित्यादिश्रुतिवाक्यात्प्रकीर्ति-
ता। इमैरुक्तस्तु षड्लिंगैरैतरेयश्रुतौ गतम् ५
तात्पर्यं ज्ञायतेऽद्वैते तन्निष्ठैर्वेदपारगैः ।
तथा मुमुक्षुभिः सर्वैरपि विज्ञेयमादरात् ६

५ अर्थवादः—औ “ता एता देवताः
सृष्टाः” कहिये “वे ये उत्पादित देवता स्तुति
करती भई ” । १।१।१ औ “गर्भे नु सन्नन्वे-
षामवेदमहं देवानां जनिमानि विश्वा” ।
कहिये “माताके गर्भस्थानविपैहीं हुया मैं इन
देवतके सर्वजन्मोंकूं ” जानता हूं ” । १।१।५ पेसैं
अद्वैत परमात्माकी स्तुतिरूप अर्थवाद कहाहै ॥ औ

■ उपपत्ति — “स इमो ह्योक्तानसृजत्”
 कहिये ‘सो इन लोकनकू सृजताभया’ ।
 १ । १ । २ इहार्हें आरम्भ करिके ॥ ४ ॥
 स एतमेव सीमान विदारयैतया द्वारा
 प्रापयत् । कहिये “सो इसीद्विं मस्तकगत
 स्वामाकू विदारण करिके इस द्वारकरि शरीरविषै
 प्राप्त होना भया । इत्यादि १ । ३ । १२
 वाक्यन भनिर्न युक्ति कहिये उपपत्ति कही है ।
 उक्त इन पदलिङ्गोंसँ ता वेतरेयउपनिषद्विषै
 स्थित २ ॥

अद्वैतविषै ना तापर्यहै । सो वेदके परम्
 प्राप्त भय कहिये भाषिय औ निसविषै निष्ठा
 पाल कहिये प्रह्वनिष्ठनकरि जानियहै ॥ तैसें सर्व
 मुमुक्षुनकरि बी आश्रमैं जाननक योग्य है ॥ ६ ॥

इति श्री० वेतरेयउपनिषद्विंशतः प्रथमः

प्रकरणं समाप्तम् ॥ ६ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३४१

अथ श्रीछांदोग्योपनिषद्लिंग- कीर्तनम् ॥ १० ॥

तत्र षष्ठाध्याय-लिंगकीर्तनम् ॥ ६ ॥
सदेवेत्युपक्रम्यैवैतदात्म्यमिदमित्यतः ।
उपसंहृतिरभ्यासो नवकृत्व उदीरितः । १ ॥
तत्रवमसीतिवाक्यस्यावर्तनाद्युद्धिमत्तमैः
अत्रैव साम्यसन्नेत्यपूर्वतोक्ता हि पंडितैः २

१ उपक्रमउपसंहारः—“सदेव सोम्ये-
दमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं” । कहिये “हे
सोम्य ! सृष्टितैं पूर्व एकहीं अद्वितीय सत् हीं
होता भया” । ६ । २ । १ ऐसैं उपक्रम करिके
“एतदात्म्यमिदं सर्वं” कहिये यह सर्व इस

सत् रूप आत्मभाववाला है ” । ऐसे इस ९ अध्यायके १६ अङ्कके ३ वाक्यतैं उपसङ्गा कहा है ॥

२ अभ्यास - नवधार कहा है ॥ “ तन्व-
मसि ’ कहिये “ सो तू है ” । इस ६ । ८ ।
१६ वाक्यके आधारनतैं पड़ितोंनैं कहा है ॥

३ अपूर्वता - श्री “ अथ वाच किल
सत्सोम्य ! न निभालयसेऽग्रैव किलोति’
कहिये वेसैं हे सोम्य ! इस शरीरविषे आचा-
र्यक उपदेशतैं बिना सत् रूप ब्रह्म विद्यमान है
ताक् इद्रिपनसैं नहा जानताहै । इहाही विद्य-
मान सत्क् गुरुउपदेशरूप अन्य उपायसे ज्ञान”
६ । १३ । २ वेसैं पड़ितोंनैं गुरुउपदेशसैं
बिना प्रमाणा-नरकी अविषयत्तारूप भ्रमिद्ध
अपवना कहीहै ॥ १-२ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३४३

तावदेव चिरं तस्यैत्यादिवाक्यत्फलं स्मृतम्
तमादेशमुनाप्राक्ष्य इत्यादेः स्तुतिरीरिता ॥३॥

४ फलः-आचार्यवान् पुरुषो वेद ।
तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्षयेऽथ
संपत्स्ये” कहिये “आचार्यवान् पुरुष जानताहै।
तिस ब्रह्मीकं तहांल गिहीं विदेह मोक्ष विषै विलंब
है । जहांल गि प्रारब्धके क्षय करि देहका अंत
भया नहीं । अनंतर सत् रूप ब्रह्मकूं पावताहै” ।
इत्यादि ६ । १४ । २ वाक्यतें फल कहाहै ॥

५ अर्थवादः-औ “उत तमादेशमप्राक्ष्यो
येनाश्रुतः श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं
विज्ञातं ” कहिये “ हे श्वेतकेतो ! तिस आदे-
शकूं बी आचार्यके प्रति तू पृच्छताभया है ।

जिसकरि नहीं सुन्या सुन्या होवैहै । नहीं मनन
 किया मनन किया होवैहै । नहीं जान्या जान्या
 होवैहै । " इत्यादि ६ । १ । १ यावत्तै अर्थ
 वादरूप अर्द्धतके ज्ञानकी स्तुति कही है ॥ ३ ॥

उपपत्तिषेधा सोम्यैकेनेत्यादिनिदर्शनम् ।
 तनैरह्णांशोऽव्यवसायस्य षष्ठग लिप्यतेऽद्धये ४

६ उपपत्ति—श्री “ यथा सोम्यैकेन
 मृत्पिष्टेन सर्वं मृ-मयं विजातः स्यात् ”
 कहिय है सोम्य । जैसे एक मृत्तिकाके पिष्ट
 करि सब घटादि कार्य मृत्तिकामय जान्या जायै
 है । इत्यादि ६ । १ । १-३ यावत्तै
 हृद्यगतरूप उपपत्ति है ॥ इन लिगोंकरि षष्ठ अभ्या-
 यगन छादाग्यउपनिषद्का तात्पर्य अर्द्धतविषै
 अर्द्धाकार कहियहै ॥ ४ ॥

कला] श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३४५

अथ सप्तमाध्यायलिंगकीर्तनम् ॥७॥

गोक्रं तरति तद्वेत्ते-त्युपक्रमोपसंहृतिः ।

तस्य ह वेति वाक्येन तदैक्यमनुभूयताम्

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) “ तरति शोकमात्मवित् ” । कहिये “ आत्मशानी शोककं तरताहै ” । ७ । १ । ३ ऐसैं उपक्रम करिके । (२) “ तस्य ह वा एतस्यैवं पश्यत एवं मन्वानस्यैवं विजानत आत्मतः प्राण आत्मत आशा ” । कहिये “ तिस इस ऐसैं देखनेवालेके औ ऐसैं मनन करनेवालेके औ ऐसैं जाननेवालेके आत्मातैं प्राण औ आत्मातैं आशा होवै है ” । इस ७ अध्यायके २६ खंडके १ वाक्यकरि उपसंहार कहा है । तिन दोनूकी एकता अनुभव करना ॥ ५ ॥

अधस्ताच्च स एव स्यात्तथाऽधातस्त्वहंकृते-
 आदेशश्च स्मृतोऽभ्यासोऽधात आत्मोपदेश-
 युक्तः ॥ ६ ॥

१ अभ्यास—मौ 'स एवाधस्तात्
 उपरिष्ठात्' कहिये 'सोई नीचे है । सो उपरि
 है' । तैसें 'अधातोऽहंकारादेश एवाहं-
 मधस्तादहमुपरिष्ठात्' कहिये "अब अहं-
 कारका उपदेश ही है कि—मैं नीचे हूँ । मैं
 उपरि हूँ" । तैसें 'अधात आत्मादेश एवा-
 त्मैवाधस्तादात्मोपरिष्ठात्' कहिये "अब
 आत्माका उपदेश है कि—आत्माही नीचे है ।
 आत्मा उपरि है" इस आत्माके उपदेशकरि
 युक्त । उक्त ७ अध्यायके २५ पङ्क्तिके १-३।
 वाक्यनक्ति अभ्यास कहा है ॥ ६ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६। ३४७

देहादिसर्वविद्यानामगोचरतयाऽऽत्मनः ।

अपूर्वता फलं पश्यो नैव मृत्युं हि पश्यति ७

३ अपूर्वताः-औ 'स होवाचगर्वेदं
भगवोऽध्येमि' कहिये 'नारद सनत्कुमारकृ'
कहै हैं:-हे भगवन् ! ऋग्वेदकृं पढ्या हूं'
इत्यादि ७ । १ । २-३ वाक्यकरि आत्माकी
ऋग्वेदआदि सर्व विद्याओंकी अगोचरता करि
गुरुउपदेशकरि वेद्यतारूप अपूर्वता की है ॥

४ फलः-औ 'न पश्यो मृत्युं पश्यति'
कहिये "ज्ञानी मृत्युकुं देखता नहीं" । इत्यादि
७ । २६ । २ वाक्यकरि फल कहाहै ॥ ७ ॥

पश्यः पश्यति सर्वं हीत्यर्थवादः सुसूचितः ।
जाता वा आत्मतः प्राणादयो युक्तिः प्रद-
शिता ॥ ८ ॥

५ अर्थवादः-औ 'सर्वं ह पश्यः

पश्यन्ति । सर्वमाप्नाति सर्वं ' कश्चि-
 " शानी सर्वकू देखताहैं । सर्व तर्फसें सर्वकू
 पावताहैं " । ७ । २६ । २ ऐसे अर्थवाद सूचन
 कियाहैं ॥ आ

६ उपपत्ति - ' आत्मत प्राण आत्मत
 आशा ' कहिये आत्मातै प्राण । आत्मातै
 आशा ' । इत्यादि ७ । २६ । १ याक्य करि
 हनु आत्मैकताबाधक युक्ति कहिये उपपत्ति
 दिखाई ॥ ८ ॥

छांशागपशुनितात्पर्यं सप्तमाध्यायगं बुधः ।
 दृष्टयने चाद्वये भूम्नि पृथुभिलिङ्गेरिमं स्फुटम

पडितोंने इन पद लिगोंकरि सप्तमाध्यायगत
 छान्दोग्य उपनिषद्का तात्पर्य । अर्थात् प्रत्यक्षितै
 स्पष्ट अङ्गीकार करियहैं ॥ ६ ॥

कला] ॥ “श्रीश्रुतिपङ्गुलिंगसंग्रहः ॥१६॥ ३४६

अथाष्टमाध्यायलिंगकीर्त्तनम् ॥ ८ ॥

य आत्मेत्युपक्रम्यैव तं वा एतमुपासते ।
इत्यादिनोपसंहार एव आत्मेतिवाक्यतः १०

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) ‘ य आ-
त्मापहतपाप्मा ’ । कहिये “ जो आत्मा
पापरहित है ” । ८ । ७ । १. ऐसैं उपक्रम
करिके हों । (२) ‘ तं वा एतं देवा आत्मा-
नमुपासते ’ कहिये तिस इस आत्माकूँ देव
नेश्रयकरि उपासनेहैं ” । इत्यादि ८।१२।६ रूप
वाक्यकरि उपसंहार कहाहै ॥

२ अभ्यासः—‘एष आत्मेति होवाचै-
तदस्मृतमभयमेतद्ब्रह्मेति’ । कहिये “यह
आत्मा । यह अस्मृत अभय । यह ब्रह्म है ।
ऐसैं कहताभया” इस ८ अध्यायके १० खंडके
१ वाक्यतैं अभ्यास कहाहै ॥ १० ॥

अभ्यासोऽपूर्वता ब्रह्मचर्येणेत्यादित. फलम्
पुनरावर्तते नैव स इत्यादिरचेरितम् ॥११॥

३ अपूर्वताः—‘तद्य एवैतं ब्रह्मलोकं
ब्रह्मचर्येणानुविंशति तेषामंघ्र्ये ब्रह्मलोकः’
कहिये “मार्ते” जेई इस ब्रह्मरूप लोककूं ब्रह्मचर्य
करि शास्त्र अरु आचार्यके उपदेशके पीछे प्राप्त
करतेहैं । तिनहींकू यह ब्रह्मरूप लोक प्राप्त
होयेहै । इन ८ । ४ । ३ आदिक वाक्यनहीं
अपूर्वता ध्यनित करीहै ॥

४ फल.—‘ब्रह्म नोऽस्मभिसंपश्यते । न
न पुनरवर्त्तते’ कहिये ‘ ब्रह्मरूप लोककूं
प्राप्तनाई आं पुनरावृत्तिकूं पायता नही”इत्यादि
८ । ५ । १ वाक्यकरि फल कहाहै ॥ ११ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३५१

आख्यायिकार्थवादः स्यादिन्द्रस्यासुरस्वामिनः
अशरीरो वायुरभ्रमित्यादिर्युक्तिरोरिता १२

५ अर्थवादः—इन्द्र अरु विरोचनकी आ-
ख्यायिका अर्थवाद होवैहै ॥

६ उपपत्तिः—‘अशरीरो वायुरभ्रं
विद्युत्स्तनयित्पुरशरीराण्येतानि’ कहिये
“वायु अशरीर है । मेघ बीजली मेघगर्जन ये
अशरीर हैं” । इत्यादि ॥१२॥२ अभेदक युक्तिरूप
उपपत्ति कहीहै ॥ १२ ॥

छांदोग्यश्रुतितात्पर्यमष्टमाध्यायगं त्विमैः
दृश्यतेऽद्वय एवास्मिन्ब्रह्मण्येतत्प्रदर्शितम् ॥

इन लिंगोंकरि तो अष्टमाध्यायगत छांदोग्य-
उपनिषद्का तात्पर्य । इस अद्वैतब्रह्मविषेहों
अङ्गीकार करिये है । यह दिखाया ॥ १३ ॥

इति श्री० छांदोग्योपनिषत्सिंहग० दशमं
प्रकरणं समाप्तम् ॥ १० ॥

अथ श्रीबृहदारण्यकोपनिषद्विलिंग कात्तर्त्तनम् ॥११॥

तच्च प्रथमाध्यायविलिंगकीर्त्तनम् ॥१॥

आत्मेत्येवेत्यादिवाक्यादुपक्रमोपसंहृतिः
लोकमात्मानमेवोपासीतित्यादिसमीरणात्

१ उपक्रमउपसंहारः— १) “आत्मे-
त्येवोपासीत” । कहिये “आत्मा ऐसैहो
जानता” । इत्यादि १ । ४ । ७ रूप वाक्यतै
उपक्रम करिके । (२) “आत्मानमेव लोक-
मुपासीत” । कहिये “आत्मारूपहो लोकहु”
जानता” । इत्यादि १ अध्यायके ४ व्याख्यानके
१४ वें वाक्यतै उपसंहार कहाहै ॥१॥

तदेतत्पदनीय च तदेतत्प्रेय इत्यादि । वाक्य-
मारभ्य सप्रोक्ताऽभ्यासस्तस्य परात्मनः ?

२ अभ्यासः— श्री “तदेतत्पदनीयमस्य
सर्वस्य यदयमात्मा” कहिये “सो यह प्राण

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगोसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३५३

करनेकं योग्य है । जो यह इस सर्वका आत्मा है ” । १ । ४ । ७ ऐसे औ “ तदेतत्प्रेयः पुत्रात्प्रेयो वित्तात् ” । कहिये ‘सो यह पुत्रतै प्रिय है । वित्ततै प्रिय है’ । इसी १ । ४ । ८ वी वाक्यकं आरम्भकरिके । आगे (१ । ४ । १० विषे) दोवार ‘अहं ब्रह्मास्मि’ । इस महावाक्यके कथनपर्यंत तिस परमात्माका अभ्यास कहाहै ॥ २ ॥

तदाहुर्यदिनाराया अपूर्वत्वं समिङितम् ।
य एव वेद वाक्येन सर्वात्मत्वं फलं स्मृतम् ३
३ अपूर्वताः—‘तदाहुर्यद्ब्रह्मविद्याया सर्व
अविष्यन्ता मनुष्या मन्यन्ते’ । कहिये
“सो कहतेहैं—जो ब्रह्मविद्याकरि सर्वरूप होने-
वाले मनुष्य मानतेहैं” । इस १ । ४ । ६ उक्ति
कहिये वाक्यतै प्रमाणांतरकी अविषय जीवनकी
सर्वात्मतारूप अपूर्वता अभिप्रेत है ॥

४ फलः—“ न एव वेदाहं ब्रह्मास्मीति
स इदं सर्वं भवति” । कहिये “जो ऐसैं अहं
ब्रह्मास्मि इस प्रकारसैं जानताहै । सो यह
सर्वं होयैहै ” । इस १ । ४ । १० वाक्यकहि
ज्ञानसैं सर्वविमभायरूप फल कहायै ॥ ३ ॥

तस्याभूत्यै हि देवाश्च नेशते इतिवाक्यतः
अवेवादो द्विरूपां वै प्रोक्तः श्रुत्यास्फुटोक्तिः

५ अर्थवादः—“ तस्य ह न देवाश्च
न। सृत्या ईशाने ” कहिये “निस ब्रह्मजिनासुकें
ब्रह्मसर्वभायके न होने अर्थ देव भी समर्थ होते
नहीं । नव अन्य न द्वार्य यामें क्या कहना ” ।
इत्यादिरूप इस १ । ४ । १० वाक्यसैं अमेद-
ज्ञानका स्तुति आं मेदज्ञानकी निंदा । इन दो-
रूपनयाना अर्थवाद श्रुतिनै स्पष्ट उक्तिनै
कहायै ॥ ४ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ६५५

उपपत्तिः स एषो ही हेति वाक्यात् स्मृता त्विमैः
बृहदारण्यकाद्यस्याद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥५॥

६ उपपत्तिः—“ स एष इह प्रविष्ट
आनखाग्रभ्यः ” । कहिये “ सो परमात्मा
नखाग्रपर्यंत इस देहविषै प्रविष्ट भयाहै ” । इत्यादि-
रूप इस १ । ४ । ७ वाक्यतै उपपत्ति कही है ॥
इन लिंगोंसँ बृहदारण्यक उपनिषद् के प्रथमाध्याय
का अद्वैतविषै तात्पर्य अंगीकार करियेहै ॥५॥

अथ द्वितीयाध्यायलिंगवर्तिनम् ॥२॥

ब्रह्म तेऽहं ब्रूवाणीति सामान्योपक्रमः स्मृतः
व्येव त्वा ज्ञपयिष्यामि विशेषोपक्रमस्त्वयम्
य एषः पुरुषो विज्ञानमयस्तूपसंहतिः ।

सामान्यतो विशेषेण तदेतत् ब्रह्म चेत्यपि ७

१ उपक्रमउपसंहारः (१) “ ब्रह्म

नेऽहं यूचाणीति " कहिये " ब्रह्म तेरेतार्हं
 कहताहु " । २ । १ । १ । यह सामान्यउपक्रम
 है श्री " नयेव तथा ज्ञपयिष्यामि " । कहिये
 " ब्रह्म तेरेतार्हं जनायु गार्हं " । २ । ३ । १५
 यह तो विशेष उपक्रम है ॥ ६ ॥ (२) श्री
 " य तपः पुरुषो विजानमयः " । कहिये " जो
 यह पुरुष विजानमय है " । २ । १ । १६ यह
 ना सामान्यने उपमहार है श्री " सदेतद्रूपमा-
 पूर्वमनवर " कहिये " तो यह ब्रह्मकारणरहित
 अत फारंगति है " । २ । ५ । १६ यह
 धिगात्करि उपमहार है ॥ ७ ॥

सत्यं सत्यस्य साभान आदेशो नेति नेति वा
 स पा... यमिनि नाभ्यासो बहुकृत्य उदीरितः

२ अभ्यासः— " सत्यस्य सत्यं " ।

कहिये " सत्यवा सत्य है " । २ । १ । २० + ३ ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३५७

३।६ औ “ अथात आदेशो नेति नेति ” ।
कहिये “ यातैं अत्र ' नेति नेति ' ऐसा आदेश
है ” । २।२।६ औ “ स योऽयमात्मेद-
ममृतामिदं ब्रह्मेदं सर्वम् ” कहिये “ सो जो
यह आत्मा है । यह अमृत है । यह ब्रह्म है ।
यह सर्व है ” । २।५।१-१५ ऐसैं बहु-
करिके अभ्यास कहाहै ॥ ८ ॥

विज्ञातारमरे ! केनेत्यादिनाऽपूर्वता मता ।
यत्र वास्य ह्यभूदात्मैव सर्वं चादितःफलम् ६

३ अपूर्वताः—“ विज्ञातारमरे ! केन
विजानीयात् ” कहिये “ अरे ! मैंनेयि ! विज्ञा-
ताकूं किसकरि जानै ” । इत्यादि २।४।१४
वाक्यकरि प्रमाणांतरकी आविषयतारूप अपूर्वता
मानीहै ॥

४ कलः—“यत्र वा अस्य सर्वमात्मैवा-
भूतत्वेन कं जिघ्रेत्” । कहिये “जहाँ (जिस
मौलविषे) इन विद्वानको सर्व आत्माहीं होता-
भया । तहाँ किन्करि किसको सूँघे” । इत्यादि
२ अध्यायके ४ ब्राह्मणके १४ वाक्यतैं निष्प्र-
प ब्रह्मरूपसँ अयस्थितिरूप अद्वैतज्ञानका फल
कहाई ॥ ६ ॥

परादादु ब्रह्म ते नैवाक्यायिका बहयोऽपि च।
अर्थवादस्त्वनूप गतिरुर्णनाभ्यायनेकशः । १०॥

५ अर्थवादः—“ ब्रह्म न परादायोऽ-
न्यआत्मनो ब्रह्म वेद” । कहिये ‘ ब्राह्मणजाति
ताको निरसकार करेहें जा आत्मातैं अन्य ब्राह्मण
जातिहु जाननाई ’ । १० । ४ । ६ । ऐसैं भेद-
ज्ञानकी सिंदा श्री बह्मनब्राह्मणिका यी अर्थ-
वाद है । १०

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३५६

६ उपपत्तिः— ‘ स यथोर्णनाभिस्तनुना-
चरेद्यथाऽग्नेः क्षुद्रा त्रिस्फुलिगा व्युच्च-
रन्ति ” कहिये “ सो जैसेँ ऊर्णनाभि तंतुकरि
उच्चगमन करैहै औ जैसेँ अग्नितें अल्पअग्निके
अवयव विविध उच्चगमन करैहैं” । इस २ ।
१ । २० आदिक २ । ४ । ६—१२ वाक्यनविषै
अनेकदृष्टान्तरूप उपपत्ति है ॥ १० ॥

बृहदारण्यकस्यैव द्वितीयस्याद्वितीयके ।
तात्पर्यं त्विष्यते प्राज्ञैरेभिर्लिङ्गैःसमिगितैः॥

बृहदारण्यक उपनिषद्के द्वितीयअध्यायका
पंडितोंकरि इन सूत्रन किये लिङ्गोंसेँ अद्वितीय-
ब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकार करियेहै ॥ ११ ॥

अथ तृतीयाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ॥३॥

यत्साक्षादित्युपक्रम्योपसंहारस्तु बाध्यतः
विज्ञानमित्यतः प्रोक्त आधृत्तिरेव ते रत्नात् १।

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) “ यत्सा-
क्षादपरोक्षाद्ब्रह्म ” कहिये “ जो साक्षात् अप-
रोक्ष ब्रह्म है ” । ३ । ४ । १ । ऐसैं उपक्रमकरिके ।
[२] “ विज्ञानमान इ यूह्य ” । कहिये “ विज्ञान
आनंदरूप ब्रह्म है ” । ऐसैं इस ३ । ५ । २८
वाक्यन ता उपसंहार कहाई ॥

२ अभ्यासः—“ एष त आत्मानन्द्या-
मृमृन ” । कहिये “ यह तेरा आत्मा अन्त-
र्यामी अमृतरूप है ” । इस ३ । ७ । ३-२३
वाक्यन आधृत्तिका वाक्य अभ्यास कहाई ॥२॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३६१

तं त्वौपनिषदं चाहं पृच्छामीति त्वपूर्वता ।
फलं परायणं चैनत्तिष्ठमानस्य तद्विदः ॥ १३ ॥

३ अपूर्वता—“ तं त्वौपनिषदं पुरुषं
पृच्छामि ” । कहिये “ तिस उपनिषदनकरि
गम्य पुरुषकूं [मैं याज्ञवल्क्य] तुज [शाक-
ल्यके] ताई पूछताहूँ ” । ३ । ६ । २६ ऐसैं
तो उपनिषदनकीहीं विषयतारूप अपूर्वता
कहीहै ॥

४ फलः—“ परायण तिष्ठमानस्य तद्वि-
दः ” । कहिये “ यह ब्रह्म अद्वैततत्त्वविषै स्थित
तत्त्ववेत्ताका परमगति है ” । ३ । ६ । २८
ऐसैं फल कहाहै ॥ १३ ॥

यो वै तत्काप्यसूत्र त विद्याद्येत्यदितोऽपि
 च । यो वै एतच्च न ज्ञात्वाऽक्षरं मार्गिति
 च स्तुति ॥ १४ ॥

५ अर्थवादः—“ यो वै तत्काप्य ।
 सूत्र विद्यात्वं चांतर्यामिणमिति स ब्रह्म-
 चित्” कहिये हे काप्य । जोई तिम सूत्रकू
 ओ तिस अंतर्यामीकू जानताई । सो ब्रह्मचित्
 है । यह ३ । ७ । १ यो । ओ यो वा
 एतदक्षरं मार्गविदित्वाऽस्मिँल्लोकं जुहोति”
 कहिये हे मार्ग । जोई इस अक्षरकू न जानिके
 इस लोकविषं हामताई” । इस । ३ । ८ । १०
 आदिक वाक्यन अथदशानकी स्तुति ओ चकार-
 कटि भेदभानकी निंदारूप अर्थवाद कहाई । १४ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ २६३

एतस्य वा अक्षरस्येत्यादितो युक्तिरीरिता ।
तदस्थलक्षणस्योपन्यासेन परमात्मनः॥१५॥

६ उपपत्तिः—“एतस्य वा अक्षरस्य
प्रशासने गार्गि ! सूर्याचंद्रमसौ विधृतौ
तिष्ठतः ” । कहिये “हे गार्गि ! इस अक्षरकी
आज्ञाविषै सूर्यचन्द्र धारण कियेहुये स्थित होवै-
हैं” । इत्यादि ३ । ८ । ६ रूप वाक्यतै
परमात्माके तदस्थलक्षणके उपन्यासकरि उपपत्ति
कहीहै ॥ १५ ॥

बृहदारण्यक श्रुत्यास्तृतीयस्य समिष्यते ।
तात्पर्यमद्वये लिंगैरोभिस्तु परमात्मनि॥१६॥

बृहदारण्यकोपनिषद्के इस तृतीयअध्यायका ।
इन लिंगोंकरि अद्वयपरमात्माविषै- तात्पर्य ।
सम्यक् अंगीकार करियेहै ॥ १६ ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायर्लिङ्गकीर्त्तनम् ॥ ४ ॥ ५

इंयश्च किमुपक्रम्याभय स उपसंहृतिः ।
सामान्यतो विशेषेण यत्र त्वस्येति धाक्यतः

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) ‘ इंधो ह
वै नाम’ । कहिये “ इध वेसा मसिद्ध नाम
ह” । ४ । ० । २ । वैसे सामान्यनै ‘किं
उपांतिरय पुरुष इति’ । कहिये ‘ विस
उपोतिवाला यह पुरुष है’ । ४ । ३ । २ वैसे
विशेषकरि उपक्रमकरिके । (२) ‘ अभयं वै
जनक ! मासोऽसि ” । कहिये “ हे जनक !
तु अभयकू मात भयाई’ । ४ । ० । ४ वैसे ।
वा स वा न्य महानज आत्मा ’ । कहिये

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३६५

“सोई यह महान्-अज-आत्मा” । ४ । ४ ।
२५ ऐसै सामान्यतै उपसंहार है औ “यत्र
त्वस्य सर्वमात्मैवाभूत्” । कहिये “जहाँतो
सर्व आत्माहीं होताभया” इस ४ । ५ । १५
वाक्यतै विशेषकरि उपसंहार है ॥ १७ ॥

तद्देवा ज्योतिषां ज्योतिरायुर्होपासतेऽमृतम्
इत्यादिवहुभिर्वाक्यैरभ्यासः स्पष्टमीक्ष्यते

२ अभ्यासः-तद्देवा ज्योतिषां ज्योति-
रायुर्होपासतेऽमृतम् । कहिये “इस ब्रह्मकूं
देव ज्योतिनका ज्योति आयु अरु अमृतरूप
उपासतेहैं” । ४ । ४ । १६ इत्यादि बहुत-
वाक्यनकरि अभ्यास स्पष्ट देखियेहै ॥ १८ ॥

विज्ञानारमगृहो च न तं परयत्पपूर्वता ।
अथाकामयमानो य इत्यादिवदुभिः कलम्

३ अपूर्यता - " विज्ञानारमरे ! केन
विजानीयात् " । कहिये ' अर मेनेयि ! विज्ञा-
ताप् किसकरि जानना " । ४ । ५ । १५ औ
" अगृहो न हि गृह्यते " । कहिये " जाते
प्रदण करनेरु अयोग्य है । ताते नहीं प्रदण
करियहै । ४ । ४ । २० औ " न तं परयति
कश्चन । कहिये " ताक् शास्त्रगुरुके उपदेश-
दिना काईवी नहीं दगताहै " । ४ । ३ । १४
इत्यादि वाक्यभक्त मित्र प्रमाणानुरूपी अविषय-
नारूप अपूर्यता है ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ६३७

४ फलः—“अथाकामयमानो यो ” ।
कहिये “ औ जो निष्काम है ” । इत्यादि
४।४। ६-८ बहुतवाक्यनकरि फल कहाहै
॥ १६ ॥

मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति
एत एतमु हैवेत्यादिवाक्याच्च स्तुतिः स्मृता॥

५ अर्थवादः—मृत्योः स मृत्युमा-
प्नोति य इह नानेव पश्यति ’ । कहिये ‘सो
मृत्युकूं पावताहै । जो इहां नानाकी
याई’ देखताहै’ । ४ । ४ । १६ ऐसै औ
‘ एतमु हैवते न तरतः ’ । कहिये “ इस
ज्ञानीकूं ये पुण्यपाप तरते नहीं ” । ४ । ४ ।
२२-२३ इत्यादि वाक्यतैं अर्थवाद्रूप निंदा
अरु स्तुति कहीहै ॥ २० ॥

यद्वै तन्नैति प्राणस्य प्राणं चैव न वा अरे ।।

पत्युः कामाय नैवायं पतिर्हि भवति प्रियः

इत्यादिवाक्यजातेभ्योपपत्तिः परिकीर्तिता।

घृहदारण्यकश्रुत्यारचतुर्थाध्यायं युधाः ॥

तात्पर्यमद्वये पद्मभिरेवमे लिंगकैर्विदुः ।

अग्नेधूम इवेमानि लिंगान्धरय परात्मनः ॥

६ उपपत्तिः—‘ यद्वै तन्न परयति ’ ।

कहिये “ जहाँ सुपुत्रिविधे तिमरूपकं नदी

देवताहै ” । ४ । ३ । २३-२० देखें । श्री

“ प्राणस्य प्राणमुत्त ” कहिये “ प्राणके यी

प्राणकू जानतेहैं ” ४ । ४ । १८ देखें । श्री

‘ न वा अरे ! पत्युः कामाय पतिः प्रियो

भरत्यात्मनस्तु कामाय पति प्रियो भव-

ति ’ । कहिये ‘ अरे मीत्रेयि ! पतिके कामअर्थ

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३६६

पति प्रिय नहीं होचैहै । आत्माके तो काम
अर्थ पति प्रिय होचै' ॥ २१ ॥ इस ४।५।६
आदिक ४।५। ८-१३ वाक्यनके समूहकरि
ब्रह्मरूप आत्माके बोधनकी युक्तिरूप उपपत्ति
कहीहै ॥ पंडित इस बृहदारण्यकरूप उपनिषद्-
भागके चतुर्थाध्यायगत ॥ २२ ॥ अद्वैतविषै
तात्पर्यकूं इन पङ्क्तिगोंसैं जानतैहैं । औ अग्निके
निश्चायक धूमरूप लिंगकी न्यांईं इस ग्रन्थक-
'अभिन्न ब्रह्मके निश्चायक ये लिंग हैं । [ऐसैं
जानना] ॥ २३ ॥

इति संक्षेपतः प्रोक्ता पङ्क्तिगानां विचारणा
दशोपनिषदां तद्वत्तामन्यास्वपि योजयेत् ॥
इसरीतिसैं संक्षेपतैं दशउपनिषदनके पङ्क्तिग-
नका विचार कहा । ताकी न्यांईं ता (विचार)कूं
अन्यउपनिषदनविषै वी जोडना ॥ २४ ॥

दोषोऽप्यत्रोपयुक्तत्वादगुण एवेति चित्यताम्
सारग्रहणशीलैस्तु पितृभ्यां बालवाक्यवत्

इत्यप्रधिविधे क्वचित् दोष की उपयोगी होनेमें
“गुणही है” ऐसी मारग्राही स्वभाववाले क्वचिन्
करि विचारनेफ् योग्य है ॥ माता पिताकरि
विनोदार्थ उपयोगो बालकके फल वाक्यकी
न्याई ॥ २४ ॥

इति श्रीबृहदारण्यकोपनिषद्ब्रह्मसंहितासंज्ञितं नामै-

काश्च प्रकरणं समाप्तम् ॥ २९ ॥

इति धीत्रिचार्त्तद्रोक्ष्ये धीमत्पद्महंसपरि-
भाजकाऽऽचार्य्यापुमरस्यनी-पूज्यपाद-
शिष्य-वामाद्वरशर्मविदुषा विरचिता
सर्वाकाध निषट्लिङ्गसप्रहनामिन्द-
षोडशीकलाया प्रथमविभाग.

समाप्त ।

॥ अथ षोडशकलाद्वितीयविभाग-
प्रारंभः ॥ १६ ॥

॥ वेदान्तपदार्थसंज्ञावर्णन ॥

अथवा

॥ लघुवेदान्तकोश ॥

॥ ललितछन्दः ॥

निष्कलं निजं वेदहीं चंद ।

षट्दश कला ब्रह्ममै नदे ।

निरवयेव जां निष्कलंक सो ।

इकरसं सदा अंगना न सो ॥ ३६ ॥

हिरण्यगर्भ औ अद्भुता नमो ।

पवन तेज क भूमि इन्द्रिभो ।

मन अनाज औ १८०शक्ति सत्तपो ।

करमलोक १८१नामामनूजपो ॥३७॥

पटदश कला एहि जानिले ।

जडउपाधिको धर्म मानिले ।

अनुगताभयोपुष्पसूत्रवत् ।

निज विदात्म पीताम्बरो हि सन् ॥३८॥

॥ १८० ॥ वल ॥

॥ १८१ ॥ म-पद्म जय ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३७३

॥ पदार्थ द्विविध ॥ २ ॥

अध्यात्मताप २-आत्माकृं आश्रय करके
वर्तमान जो स्थूलसूक्ष्मशरीर सो अध्यात्म है ।
तद्गत जो ताप (दुःख) सो अध्यात्मताप है ॥

१ आधिनापः-मानसताप ॥

२ व्याधिनापः-शारीरताप ॥

अध्यास २-भ्रांतिज्ञानका विषय औ
भ्रांतिज्ञान ॥

१ अर्थाध्यास-भ्रांतिज्ञानकाविषय जोरुपादि
वा देहादिप्रपञ्च सो ॥

२ ज्ञानाध्यास-भ्रांतिज्ञान (सर्पादिकला वा
देहादिप्रपञ्चका ज्ञान) ॥

असम्भावना २—असम्भवका ज्ञान ॥

१ प्रमाणगत असम्भावना—प्रमाण (धेद)
गत असम्भवका ज्ञान ॥

२ प्रमेयगत असम्भावना—प्रमेय (प्रमाणके
विषय मोक्षआदिक) गत असम्भवका ज्ञान ॥

अहंकार २—

१ शुद्धअहंकार—स्वस्वरूपका अहंकार ॥

२ अशुद्धअहंकार—देहादिधनआत्माका अहं-
कार ॥

१ सामान्य अहंकार—देहादिधर्मके उद्देश
में गठित । कवल “ अह (मैं) ” ऐसा
स्फुरण ॥

२ विशेषअहंकार—देहादिधर्म (नामजाति-
आदिक) का उद्देश करिक “ अह (मैं) ”
ऐसा स्फुरण ॥

कला] ॥ वेदांतपदाथेसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३७५

(१) मुख्यअहंकारः—देहादियुक्त चिदाभास
औ कूटस्थ (साक्षी) का एकीकरण करिके ।
मूढकरि सारे संघातविषै “अहं” शब्दकूँ
जोड़िके जो “अहं (मैं)” ऐसा स्फुरण
होवै सो मुख्य (शक्तिवृत्तिसँ जानने
योग्य अहंशब्दके अर्थकूँ विषय करनेवाला)
अहंकार है ॥

(अमुख्यअहंकारः—विवेकीकरि [१] व्य-
वहारकालमें केवल देहादियुक्त चिदाभास-
विषै औ [२] परमार्थदशामें केवलकूटस्थ
विषै “अहं” शब्दकूँ जोड़िके जो “अहं
(मैं) ऐसा स्फुरण होवैहै सो दोभांतीका
अमुख्य (लक्षणावृत्तिसँ जानने योग्य अहं
शब्दके अर्थकूँ विषय करनेवाला) अहं-
कार है ॥

अज्ञान :-

- १ समष्टि अज्ञान—बनकी न्याईं वा जातिकी न्याईं वा जलाशय (तडाग) की न्याईं एक बुद्धिका विषय ॥
- २ व्यष्टि अज्ञान—वृक्षनकी न्याईं वा व्यक्ति नकी न्याईं वा जलबिंदुकी न्याईं अनेक बुद्धिनका विषय ॥
- १ मूलाज्ञान—शुद्धचेतनका आच्छादक (ढाँपने वाला) अज्ञान ॥
- २ तृलाज्ञान घटादिअवच्छिन्नचेतनका आच्छादक अज्ञान ॥
- अज्ञानकी शक्ति २—अज्ञानका सामर्थ्य ॥
- १ आवरणशक्ति—अधिष्ठानके ढाँपनेवाली जो अज्ञानविषै सामर्थ्य है सो ॥
- २ विक्षेपशक्ति—प्रपञ्च ओ ताके प्रितरकी जनक जो अज्ञानविषै सामर्थ्य है सो ॥

कला । ॥ वेदान्तपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ । ३७७

५ उपासना २—

१ सगुणउपासना—कारणब्रह्म (ईश्वर) औ
कार्यब्रह्म (हिरण्यगर्भ आदिक) की उपासना ॥

२ निर्गुणउपासना—शुद्धब्रह्मकी उपासना ॥

गन्ध २—१ सुगंध ॥ २ दुर्गंध ॥

जाति २ — अनेकधर्मि (आश्रय) नविदै
अनुगत जो एकधर्म सो ॥

१ परजाति—“ घट है ” ऐसैं सर्वत्रअनुगत
जो सत्ता है । ताकूं न्यायमतमें पर (श्रेष्ठ)
जाति कहतेहैं ॥

२ अपरजाति—सत्ताहैं भन्न घटत्वआदिक
जातिकूं न्यायमतमें अपर (अश्रेष्ठ) जाति
कहतेहैं ॥

३ व्याप्यजाति—व्यापकजातिके अन्तर्गत
(न्यूनदेशवर्ती) जो जाति । सो व्याप्यजाति
है । जैसे मनुष्यजातिके अंतर्गत (एकदेश

गतः) ब्राह्मणत्वं क्षत्रियत्वं आदिकं जातिषां
है । ये व्याप्यजातिषां है ॥

२- व्यापकजाति-व्याप्यजातिर्लक्ष्य-अधिकदेश-
विदे स्थित जो जाति सो व्यापकजाति है ।
जैसे ब्राह्मणत्वं आदिकव्याप्यजातिर्लक्ष्य-अधिक-
देशविदे स्थित मनुष्यत्वजाति है सो व्यापक-
जाति है । ये व्याप्य श्री व्यापक दो भेद
अपरजातिके है ॥

निग्रह २-

१ क्रमनिग्रह-क्रमनियम आदिकसदृशयोगके
कर्मकारि क्रमसे जो वित्तका निरोध होय
है । सो क्रमनिग्रह है ॥

२ तटनिग्रह-प्राणनिरोधरूप दृढकारिके पा
रमभयाभादिकमुद्रानके मध्य-किसी एक-
मुद्राके सम्प्राप्तकारि जो वित्तका निरोध
होय है । सो तटनिग्रह है ॥

केला] ॥ वेदांतपंदाथसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३७६

निःश्रेयस २—मोक्ष ॥

१ अनर्थनिवृत्ति ॥ २ परमानन्दप्राप्ति ॥

परमहंससंन्यास २—

१ विविदिषासंन्यास—जिज्ञासाकरिके ज्ञान प्राप्तिअर्थ किया जो संन्यास सो विविदिषासंन्यास है ॥

२—विद्वत्संन्यास—ज्ञानके अनंतर वासनाक्षय मनोमाश औ तत्त्वज्ञानाभ्यासद्वारा जीवन्मुक्ति के विलक्षण आनन्दअर्थ किया जो संन्यास सो विद्वत्संन्यास है ॥

प्रपञ्च २—१ बाह्यप्रपञ्च ॥ २ आन्तरप्रपञ्च ॥

प्रज्ञा २—१ स्थितप्रज्ञा ॥ २ अस्थितप्रज्ञा ॥

लक्षण २—

१ स्वरूपलक्षण—सदाविद्यमान हुया व्यावर्तक
लक्षण ॥

२ तदस्थलक्षण—कदाचित् हुया व्यावर्तक
लक्षण ॥

वाक्य २—१ अनातरवाक्य ॥ २ महावाक्य ॥

वाद २—१ शक्तिविषयाद् ॥ २ अत्रच्छेदयाद् ॥

धिपरीतभायना २—१ प्रमाणगत धिपरीत-
भायना ॥ प्रमेयगत धिपरीतभायना ॥

शब्द --१ धर्मकपशब्द ॥ २ ध्वनिरूपशब्द ॥

शब्दसंगति २—१ शक्तिवृत्ति ॥ २ लक्षणावृत्ति ॥

संपादि २—१ देवीसंपत्ति ॥ २ आसुरीसंपत्ति ॥

संशय २—१ प्रमाणगतसंशय ॥ २ प्रमेयगत
संशय ॥

समाधि २—१ मविकल्प ॥ २ निर्विकल्प ॥

सूक्ष्मशरीर २—१ समधि ॥ २ व्याधि ॥

मूलशरीर २—१ समधि ॥ २ व्याधि ॥

पदार्थ त्रिविध ॥ ३ ॥

अध्यात्मादि ३—१ इन्द्रिय (अध्यात्म) ॥
 २ देवता (अधिदैव) ॥ ३ विषय (अधि-
 भूत) ॥

अन्तःकरणदोष ३—

१ मलदोष—जन्मजन्मांतरोंके पाप ॥

२ चित्तेपदोष—चित्तकी चंचलता ॥

३ आवरणदोष—स्वरूपका अज्ञान ॥

अर्थवाद ३—निंदाका वा स्तुतिका बोधक-
 वाक्य ॥

१ अनुवाद—अन्यप्रमाणकरि सिद्धअर्थका
 बोधकवाक्य । जैसे “ अग्नि हिमका भेषज
 है ” यह वाक्य है ॥

२ गुणवाद—अन्यप्रमाणविरुद्ध विधेयअर्थका
 गुणद्वारा स्तावकवाक्य । जैसे प्रकाशरूप

लक्षण २—

१ स्वरूपलक्षण—सदाविद्यमान हुया व्यावर्तक
लक्षण ॥

२ तद्रूपलक्षण—कदाचित् हुया व्यावर्तक
लक्षण ॥

वाक्य २—१ अन्तर्वाक्य ॥ = महावाक्य ॥

वाक्य २—१ प्रतिविधवाक्य ॥ २ अयच्छेदवाक्य ॥

विपरीतभाषना २—१ प्रमाणगत विपरीत-
भाषना ॥ प्रमेयगत विपरीतभाषना ॥

शब्द -- धर्णरूपशब्द ॥ २ ध्वनिरूपशब्द ॥

शब्दसंगति २—१ शक्तिवृत्ति ॥ २ लक्षणावृत्ति ॥

संपत्ति २—१ दैवीसंपत्ति ॥ २ आसुरीसंपत्ति ॥

संशय २—१ प्रमाणगतसंशय ॥ २ प्रमेयगत
संशय ॥

समाधि २—१ मविषरूप ॥ २ निर्विकल्प ॥

सूक्ष्मशरीर २—१ समधि ॥ २ व्यष्टि ॥

स्थूलशरीर २—१ समधि ॥ २ व्यष्टि ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३८३

आत्माके भेद ३-

१ मिथ्यात्मा—स्थूलसूक्ष्मसंघात ॥

२ गौणात्मा—पुत्र ॥

३ सुखात्मा—साक्षी (कूटस्थ) ॥

आनन्द ३-

१ ब्रह्मानन्द—समाधिविषे आविर्भूत या
सुषुप्तिगत जो विवभूत आनन्द है सो ॥

२ विषयानन्द—जाग्रत्स्वप्नविषे विषयकी
प्राप्तिरूप निमित्तसे एकाग्र भये चित्तविषे
आत्मास्वरूपभूत आनन्दका जो क्षणिकप्रति-
विम्ब होवैहै सो ॥ याहीकुं लेशानन्द औ
मात्रानन्द बी कहतेहैं ॥

३ ४ ५

७ ८ ९

१० ११ १२

१ तितैं उत्थान आदिक

२ आनन्द अनुभूत होवै-

गुणकी समताकरि स्तावक, "यूप (यहका खम) आदित्य है" यह धार्य है ॥

३ भूतार्थवाद-स्वार्थविषे प्रमाण हुया लक्षण सँ विधेयार्थकी स्थापना बोधकषोध्य ।
अतः 'यज्ञदस्त पुरंदर' यह धार्य है ॥

अवधि ३—सीमा (इह) ॥

१ बोधकी अवधि ॥ २ धैर्यकी अवधि ॥

३ उपरामकी अवधि—वित्तनिरोधरूप
उपरति (उपशम) की ॥

अवस्था ३—तीनवेदके व्यवहारके काल ॥

१ ज्ञानप्रवृत्ति ॥ २ स्वप्नप्रवृत्ति ॥

३ सुषुप्तिप्रवृत्ति ॥

आत्मा ३—

१ ज्ञानात्मा—बुद्धि ॥

२ महानात्मा—महत्तत्त्व ॥

३ शान्तात्मा—सुखप्रद ॥

कला १] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३८३

आत्माके भेद ३-

१ मिथ्यात्मा—स्थूलसूक्ष्मसंघात ॥

२ गौणात्मा—पुत्र ॥

३ सुरुयात्मा—साक्षी (कूटस्थ) ॥

आनन्द ३-

१ ब्रह्मानन्द—समाधिविषै आविर्भूत या सुषुप्तिगत जो विवभूत आनन्द है सो ॥

२ विषयानन्द—जाग्रत्स्वप्नविषै विषयकी प्राप्तिरूप निमित्तसँ एकाग्र भये चित्तविषै आत्मास्वरूपभूत आनन्दका जो दृष्टिकप्रति-
चित्र होवैहै सो ॥ याद्वीकू' लेशानन्द औ मात्रानन्द वी कहतेहैं ॥

३ चासनानन्द-सुषुप्तिमें उत्थान आदिक उदासीनदशाविषै जो आनन्द अनुभूत होवै-
है सो ॥

आन्धपादि ३—अंधता आदिक नेत्रके धर्म ॥
 इहां आन्ध्य । अंधता) रूप नेत्रके धर्म जो
 है सो बधिरता मूकता आदिक अन्य इन्द्रियनके
 धर्मका तो सूचक है । औ मांघ अह पटुत्य
 ती सर्व इन्द्रियनके मुख्य जानै ॥

१ आ० ४४—घण्टुकरि सर्वथा स्वयिपयका
 अग्रहण ॥

० मांघ—इन्द्रियकरि स्वयिपयका स्वराग्रहण ॥

३ पटुत्य—इन्द्रियकरि स्वयिपयका स्पर्शग्रहण ॥

उद्देशादि ३ —

१ उद्देश—नामका कीर्तन ।

२ लक्षण—ग्रन्थाधारणधर्म । (एकरूपि धर्तने
 वाला धर्म)

१ परीक्षा—पदरुति (अतिग्राहि आदिक
 दोषनका विचार) ॥

कला] ॥ वेदान्तपदार्थमंज्ञावर्णन ॥१६॥ ३८५

एषणा ३—इच्छा वा वासना ॥

१ पुत्रैषणा ॥ २ वित्तैषणा ॥

३ लोकैषणा—सर्वलोक मेरी स्तुति करें ।
कोई मेरी निंदा करे नहीं । ऐसी इच्छा
वा परलोककी इच्छा ॥

कारण ३—कर्मके साधन ॥

१ मन ॥ २ वाणी ॥ ३ काय ॥

कर्तव्यादि ३—

१ कर्तव्य—करनैकं योग्य ज्ञानके साधन ॥

२ ज्ञातव्य—ज्ञाननैकं योग्य ज्ञानका विषय
(ब्रह्म श्रु श्रुत्माका एकत्व) ॥

३ प्राप्तव्य—प्राप्त करनैकं योग्य ज्ञानका फल
मोक्ष ॥

कर्म ३—१ पुण्यकर्म ॥ २ पापकर्म ॥ ३ मिश्र-
कर्म ॥

कर्म ३—

- १ संचितकर्म—जन्मांतरोंविषे संघष कियेकर्म
 - २ आगामिकर्म—घटेमानजन्मविषे कियमाणकर्म
 - ३ प्रारब्धकर्म—घटेमानजन्मका आरंभकर्म ॥
- कर्मादि १—

- १ कर्म—वेदविहितकर्म ॥
- २ विकर्म—वेदसे विरुद्धकर्म ॥
- ३ अकर्म—वेदविहित औ वेदविरुद्ध उभय विधकर्मका अकरण ॥

कारणधाय १—

- १ आरंभधाव—जैसे पितामहआदिकके किये पुत्रसे गृहका जब नाश होवे तब तिसविधे स्थित ईष्टआदिकमाममोसे फेर न गीतगृहका आरंभ होवेहे । तेमें कार्यरूप पृथ्वीआदिक के नाशनाक कारणपरमाणु ज्यू केत्युं रहते-हे । निनने फेरअन्यपृथ्वीआदिकका आरंभ

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३८७

होवैहै ॥ ऐसै न्यायमतसै आरंभवाद मान्याहै ॥
यामै कार्य अरु कारणका भेद है ॥

१ परिणामवाद-जैसै दुग्धका परिणाम
(रूपान्तर) दधि होवैहै । तैसै सांख्यमतमें
प्रकृतिका परिणाम जगत् है । औ उपासकोंके
मतमें ब्रह्मका परिणाम जगत् औ जीव है ॥
ऐसै तिनौनै परिणामवाद मान्याहै । यामै
कार्य अरु कारणका अभेद है ॥

२ विवर्तवाद-जैसै निर्विकाररज्जुविपै रज्जु-
रूप अधिष्ठानतै विपमसत्तावाला अन्यथा
स्वरूप सत्य होवैहै । सो रज्जुका विवर्त (कल्पि-
तकार्य) है ॥ तैसै निर्विकारब्रह्मविपै अधिष्ठा-
नब्रह्मतै विपमसत्तावाला अन्यथास्वरूप जगत्
होवैहै ॥ सो ब्रह्मका विवर्त (कल्पितकार्य) है ॥
ऐसै वेदांतसिद्धांतमें विवर्तवाद मान्याहै । यामै
बी कार्य अरु कारणका बाधकृत अभेद है ॥

काल ३—१ भूतकाल ॥ २ भविष्यत्काल ॥
३ वर्तमानकाल ॥

जाग्रत् ३—

- १ जाग्रत्जाग्रत-वर्तमानजाग्रत्विषै जो स्वरूपा साक्षात्कार होवे सो ॥
- २ जाग्रत्स्वप्न जाग्रत्विषै जो भूत या भविष्य अर्थका चित्तनरूप मनोराज्य होवेहै सो ॥
- ३ जाग्रत्सुषुप्त-जाग्रत्विषै समकरि जड़ी भूत धृति हार्थ सो ॥

जीव ३—

- १ पारमार्थिकजीव-साक्षी (बूटस्थ) चेतन ॥
- २ व्यावहारिकजीव-साभास अत करणरूप जाव ।
- ३ प्राणिमासिकजीव-साभासअत करणरूप व्यावहारिकजीवमें स्वप्नविषै अभ्यस्त जीव ॥
- १ विश्व-जाग्रत्विषै तीनदेहका अभिमानी जीव

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ३८६

२ तैजस—स्वप्नविषै स्थूलदेहके अभिमानकूं छोड़के सूक्ष्म औ कारण इन दो देहका अभिमानी वही जीव ॥

३ प्राज्ञ—सुषुप्तिविषै स्थूलसूक्ष्मदेहके अभिमानकूं छोड़के एक कारणदेहका अभिमानी वही जीव ॥

ताप ३—दुःख ॥

१ अध्यात्मताप—स्थूलसूक्ष्मशरीरविषै होता जो है आधि औ व्याधिरूप दुःख । सो अध्यात्मताप है ॥

२ अधिदैवताप—देवताकरि जो शीत उष्ण अतिवृष्टि अनावृष्टि विद्युत्पात भूकंपआदिक दुःख होवैहै । सो अधिदैवताप है ॥

३ अधिभूतताप—स्वशरीरतैं भिन्न चक्षुगोचर-प्राणि (चोर व्याघ्र शत्रु आदि) नकरि होता है जो दुःख । सो अधिभूतताप है ॥

नादादि ३—

१ नाद—ॐकार वां शब्दगुण वां पराश्चादिकं
४ घाटी ॥

२ बिन्दु—ॐकारका अलक्ष्यअर्थरूप तुरीयपद ॥

३ कला—ॐकारकी अकारादि मात्रा परागणी-
रूप अक्ष (शब्दका अवयव) ॥

निवृत्ति ३ (तादात्म्यकी निवृत्ति) :—

१ अमजकी निवृत्ति—ज्ञानसँ सांति
(अविषेक) के नाशकरी अमजतादात्म्यकी
निवृत्ति होवेहै ॥

२ सहजकी निवृत्ति—सहजतादात्म्यको
ज्ञानसँ बाध आ ज्ञानके देहपातके अनतर
नाश होवेहै ॥

३ कर्मजकी निवृत्ति—कर्मजतादात्म्य प्रारब्ध-
भागक अत भय ज्ञानाकी निवृत्ति होवेहै ॥

पापकर्म ३— १ उत्तृष्टपापकर्म ॥ २ मध्यम
पापकर्म ॥ ३ सामान्यपापकर्म ॥

कला] ॥ वेदातपदार्थसंज्ञावर्णेन ॥१६॥ ३६१

पुण्यकर्म ३-१ उत्कृष्टपुण्यकर्म ॥ २ मध्यम
पुण्यकर्म ॥ ३ सामान्यपुण्यकर्म ॥

प्रपञ्च ३-१ स्थूलप्रपञ्च ॥ २ सूक्ष्मप्रपञ्च ॥
३ कारणप्रपञ्च ॥

प्राणायाम ३-१ पूरक ॥ २ कुम्भक ॥
३ रेचक ॥

प्रारब्ध ३-१ इच्छाप्रारब्ध ॥ २ अतिच्छा
प्रारब्ध ॥ ३ परेच्छाप्रारब्ध ॥

ब्रह्म ३-१ विराट् ॥ २ हिरण्यगर्भ ॥
३ ईश्वर ॥

मिश्रकर्म ३-१ उत्कृष्टमिश्रकर्म ॥ २ मध्यम
मिश्रकर्म ॥ ३ सामान्यमिश्रकर्म ॥

मूर्ति ३-१ ब्रह्मा ॥ २ विष्णु ॥ ३ शिव ॥

लक्षणदोष ३-

१ अव्याप्तिदोष-लक्ष्यके एकदेशविपै लक्षण
का वर्तना ॥

२ आतड्यासिदाप-लक्षके ताई व्यापिके
अलक्ष्यविषे धी लक्षणका वर्तना ॥

३ अस भवदेप-लक्ष्यविषे लक्षणका न वर्तना ।
लोक २—१ स्वर्ग ॥ २ मृत्यु ॥ ३ पाताल ॥

घादादि ३—

१ वाद — गुरुशिष्यका संवाद ॥

२ जल्प — युक्तिप्रमाणकुशलपडितनका परमत
गडग स्वमतमडकं वाद ॥

३ विलडा — मूगनका प्रमाणयुक्तिरहित वाद ।
जिना कउउतका व्याज कराके परपक्षकाही
गजत गा । जैसे आहमिआचायन गडन
प्र रजिग कियाई ॥

विधिराकण ३—

१ अणु २ विधिराकण — अलोकिक विधाया
वि प्र यकवाक्य ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ३६३

२ नियमाविधिवाक्य -प्राप्त दोषक्षनविषै एक
का विधायकवाक्य ॥

३ परिसंख्याविधिवाक्य-उभयपक्षविषै एक
के निषेधका विधायकवाक्य ॥

वेदके कांड ३-१ कर्मकांड ॥ २ उपासना-
कांड ॥ ३ ज्ञानकांड ॥

शरीर ३-१ स्थूलशरीर ॥ २ सूक्ष्मशरीर ॥
३ कारणशरीर ॥

श्रवणादि ३-१ श्रवण ॥ २ मनन ॥
३ निदिध्यासन ॥

श्रवणादिफल ३-१ प्रमाणसंशयनाश (श्रवण-
फल) ॥ २ प्रमेयसंशयनाश (मननफल) ॥
३ विपर्यय नाश (निदिध्यासन फल)

संबंध ३-१ संयोगसंबंध ॥ २ समवायसंबंध
३ तादात्म्यसंबंध ॥

सुषुप्ति ३—

१ सुषुप्तिजाग्रत्—सारिकवृत्तिपूर्वक सुषु-
सुषुप्ति ॥

२ सुषुप्तिस्वप्न—राजसवृत्तिपूर्वक दुःखसुषुप्ति ॥

३ सुषुप्तिसुषुप्ति—तामसवृत्तिपूर्वक गाढसुषु-
सुषुप्त्यादि ३-१ सुषुप्ति ॥ २ मूर्छा ॥

३ समाधि ॥

स्वप्न ३—

१ स्वप्नजाग्रत्—सत्यअर्थका स्वप्नविषय दर्शन ॥

२ स्वप्नभ्रम—स्वप्नविषय रजस्तुल्यपादिघांतिका
दर्शन ॥

३ स्वप्नसुषुप्ति—दृष्टस्वप्नका अस्मरण ॥

हेतुवादि ३-१ हेतु ॥ २ स्वरूप ॥ ३ फल ॥

ज्ञानादि ३-१ साक्षात् ॥ २ ज्ञान ॥ ३ तत्त्व ॥

ज्ञानवानिधायक ३-१ सशय ॥ २ असमा-
यता ॥ ३ विपरीतमायना ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३६५

ज्ञानादि ३—१ ज्ञान ॥ २ वैराग्य ॥

३ उपशम ॥

॥ पदार्थ चतुर्विध ॥ ४ ॥

अनुबंध ४—अपने ज्ञानके अनंतर पुरुषकू
ग्रंथविषै जोडनैवाला ॥

१ अधिकारी—मलविक्षेपरूप दोपरहित औ
अज्ञानरूप दोपरहित हुया विवेकादिब्यासी
साधनकरि सहित पुरुष वेदांतका अधि-
कारी है ॥

२ विषय—ब्रह्म अरु आत्माकी एकता ।
वेदांतशास्त्रका विषय प्रतिपाद्य) है ॥

३ प्रयोजन—सर्वदुःखनकी निवृत्ति औ परमा-
नंदकी प्राप्तिरूप मोक्ष ॥

४ संबंध—ग्रंथका औ विषय का प्रतिपादक-
प्रतिपाद्यतारूप संबंध है ॥

अन्तःकरण ४—

- १ मन—सकल्पविकल्परूप वृत्ति ॥
- २ बुद्धि—निश्चयरूप वृत्ति ॥
- ३ चित्त—चित्तन (स्मरण) रूप वृत्ति ॥
- ४ अहंकार—अहंकारूप वृत्ति ॥

आनादिभक्त ४—

- १ आर्त—अध्यात्मआदिषु दुःखपरि व्यापुल ॥
 - २ जिज्ञासु— भगवत्पुनश्च ज्ञाननै की इच्छा-
वाला ॥
 - ३ अर्थार्थी—या लोक या परलोकके भोगकी
इच्छावाला ॥
 - ४ ज्ञाना—जीयन्मुक्त विद्वान् ॥
- आश्रम ४—१ ब्रह्मचर्य ॥ २ गृह्य ॥ ३
१ वानप्रस्थ ॥ ४ सन्यास ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ३६७

उत्पत्त्यादिक्रिया ४-इहां क्रियाशब्दकरि क्रिया
जो कर्म । ताका फल कहिये है ॥

१ उत्पत्ति—आद्यलक्षण (जन्म)।जैसे कुलाल-
की क्रियाका फलरूप घटकी उत्पत्ति है ॥

२ प्राप्ति—गमनरूप क्रियाका चांछितदेशकी
प्राप्तिरूप फल है ॥

३ विकार—अन्यरूपकी प्राप्ति । जैसे पाक
(रसोई) रूप क्रियाका फलरूप अन्नका
विकार (पलटना) है ॥

४ संस्कार—(१) मलकी निवृत्ति औ (२)
गुणकी प्राप्ति । इस भेदतैं संस्कार दोप्रकार-
का होवै है ॥ (१) जैसे वस्त्रके प्रक्षालन-
रूप क्रियाका फलरूप मलनिवृत्ति है सो
प्रथम है औ (२) कुसुंभमें वस्त्रके मज्जन-
रूप क्रियाका फलरूप रक्तगुणकी उत्पत्ति
है सो द्वितीय है ॥

चित्तनिरोधयुक्ति ४—१ अभ्यात्मविद्या, ॥

२ साधुसंग ॥ ३ वासनात्याग ॥ ४ प्राणापाना

धर्मादि ४—द्व्यारीपुरुषार्थ ॥

१ धर्म—सकाम वा निष्काम जो पुण्य सो ॥

२ अर्थ—इसलोक औ परलोकविषे जो भोगके
साधन धनादिक हैं सो ॥

३ काम—इसलोक औ परलोकका जो भोग सो ॥

४ मोक्ष—दुःखनिवृत्ति औ सुखप्राप्ति ॥

पुरुषार्थ ४—१ धर्म ॥ २ अर्थ ॥ ३ काम ॥

४ मोक्ष ॥

पूजापात्र ४—१ प्रत्यनिष्ठ ॥ २ सुशुद्ध ॥

३ दृढिदास ॥ ४ स्वयमनिष्ठ ॥

प्रमाण ४—प्रमाणावका करण प्रमाण द्वे ॥ इहां

द्व्यारीप्रमाणाका कथन स्थायरीनिर्ण है ॥

१ प्रत्यक्षप्रमाण ॥ २ अनुमानप्रमाण ॥

३ उपमानप्रमाण ॥ ३ शब्दप्रमाण ॥

ब्रह्मविदादि

- १ ब्रह्मचित्—चतुर्थभूमिकाविषै आरूढ ज्ञानी॥
 - २ ब्रह्मविद्वर-पंचमभूमिकाविषै आरूढ ज्ञानी॥
 - ३ ब्रह्मविद्वरीयान्-षष्ठभूमिकाविषै आरूढज्ञानी
 - ४ ब्रह्मविद्वरिष्ठ-सप्तमभूमिकाविषै आरूढ ज्ञानी
- भूतग्राम ४—

- १ जरायुज—मनुष्यपशुआदिक ॥
 - २ अंडज—पक्षीसर्प आदिक ।
 - ३ उद्भिज्ज—वृक्षादिक ॥
 - ४ स्वेदज—यूकामत्कुणआदिक ॥
- मैत्र्यादि ४—

- १ मैत्री—धनवान् वा गुणकरि समान वा ईश्वरभक्त वा विषयी [कर्मोपासक] पुरुष इतिविषै “ये मेरे हैं” ऐसी बुद्धि ॥
- २ करुणा—दुःखी वा गुणकरि निकृष्ट वा अज्ञजन वा जिज्ञास । इतिविषै दया ॥

३ मुदिता—पुण्यवान् या गुणकरि अधिक वा ईश्वर वा मुक्त । इनविषे प्रीति ॥

४ उपेक्षा—पापिष्ठ वा अयगुणयुक्त वा द्वेषी वा पामर । इनविषे रागद्वेषकरि रहिततारूप उदात्तमिता ॥

मोक्षद्वारपाल ४—१ शम ॥ २ संतोष ॥

३ विचार (विवेक) ॥ ४ सत्संग ॥

योगभूमिका ४—१ चाण्नीलय ॥ २ मनोलय ॥

३ बुद्धिलय ॥ ४ अहकारलय ॥

वर्ण ४—१ ब्राह्मण ॥ २ क्षत्रिय ॥ ३ वैश्य ॥

४ शूद्र ॥

वर्तमानज्ञानप्रतिबंधनिवृत्तिहेतु ४—

१ शमादि—यह विषयामकिका निवर्तक है ॥

२ श्रवण—यह बुद्धि की मदताका निवर्तक है ॥

३ मनन—यह बुद्धि का निवर्तक है ॥

४ निदिध्यासन—यह विपरीतभावनाविषे जो दुःखप्रद होवे है नाका निवर्तक है ॥

कला.] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञाचर्णन ॥१६॥ ४०१

वर्त्तमानज्ञानप्रतिबंध ४—१ विषयासक्ति ॥

२ बुद्धिमांथ ॥ ३ कुतर्क ॥ ४ विषयासक्ति

दुराग्रह ॥

विवेकादि ४—१ विवेक ॥ २ वैराग्य ॥ ३ पट्-
संपत्ति ॥ ४ मुमुक्षुता ॥

वेद ४—१ ऋग्वेद ॥ २ यजुर्वेद ॥ ३ साम-
वेद ॥ ४ अथर्वणवेद ॥

शब्दप्रवृत्तिनिमित्त ४—१ जाति ॥ २ गुण ॥
३ क्रिया ॥ ४ संबंध ॥

संन्यास ४—१ कुटीचकसंन्यास ॥ २ बृहदक-
संन्यास ॥ ३ हंससंन्यास ॥ ४ परमहंस-
संन्यास ॥

समाधिविधन ४—१ लय ॥ २ चिद्वेष
३ काषाय ॥ ४ रत्नास्त्राद ॥

स्पर्श ४—१ शीत ॥ २ उष्ण ॥ ३ कोमल ॥
४ कटिन ॥

पदार्थ पंचविध ॥ ५ ॥

अभाव ५—नास्तिप्रतीतिका विषय ॥

१ प्रागभाव—कार्यकी उत्पत्तिमें पूर्व जो कारण का अभाव है सो ॥

२ प्रध्वंसाभाव—कार्यके अनंतर जो अभाव दार्ढ्य है सो ॥

३ अन्योन्याभाव—परस्परविध जो परस्पर-ता अभाव है सो । जैसे रूपभेद ॥ जैसे घटपट्टका भेद है सो ॥

४ अत्यन्ताभाव—तीनिकालविध जो अभाव है सो । जैसे वायुविधै रूपका है ॥

५ सामागिकाभाव—किसी (उदाय लेनेके) समयविध जो भूतलादिकमें घटादिकका अभाव दार्ढ्य है सो ॥

ज्ञा] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४०३

अज्ञानके भेद ५-अज्ञानविषै वेदांतआचार्यन
के मतके भेद ॥

१ मायाअविद्यारूपअज्ञान-केइक (विद्या-
रायस्वामी) अज्ञानकूँ माया (समष्टि-
अज्ञानमयईश्वरकी उपाधि) औ अविद्या
(व्यष्टिअज्ञानमय जीवनकी उपाधि) रूप
मानते हैं ॥

२ ज्ञानक्रियाशक्तिरूपअज्ञान-केइक अज्ञा-
नकूँ ज्ञानशक्ति औ क्रियाशक्ति मानतेहैं ॥

३ विलेपआवरणरूपअज्ञान-केइक अज्ञा-
नकूँ आवरणरूप अरु विलेप (की हेतुशक्ति)
रुह मानतेहैं ॥

४ समष्टिरूपमिन्द्रियरूपमज्ञान-के एक अज्ञानकू
समष्टि (ईश्वरकी उपाधि) श्री व्यष्टि (जीव
की उपाधि) रूप मानते हैं ॥

५ कारणरूपमज्ञान-के एक अज्ञानकू जगत्का
उपादानकारण मूलप्रवृत्तिमय ईश्वरकी
उपाधिरूप मानते हैं श्री तिस पक्षमें कार्य
(अतः कारण) उपाधिवाला जीव मान्या है ॥

उपवायु ५—

१ नाग—उद्गारका हेतु वायु ॥

२ कूर्म—निमग्न मग्नका हेतु वायु ॥

३ कृकल—श्लोकका हेतु वायु ॥

४ दधयत्त—जमुदार्ढका हेतु वायु ॥

५ धनजय—दधुणिका हेतु वायु ॥

कला] ॥ वेशंतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४०५

कर्म ५—

१ नित्यकर्म—सदा जाका विधान होवैहै ऐसा कर्म (स्नानसंध्याआदिक) ॥

२ नैमित्तिककर्म—किसी निमित्तकूँ पायके जाका विधान होवैहै ऐसा कर्म (ग्रहणश्राद्ध-आदिक) ॥

३ काम्यकर्म—कामनाके लिये विधान किया कर्म (यज्ञयागादिक) ॥

४ प्रायश्चित्तकर्म—पापकी निवृत्तिके लिये विधान किया कर्म ॥

५ निषिद्धकर्म—नहीं करनेके लिये कथन किया कर्म (ब्रह्महत्यादिक) ॥

कर्महंद्रिय ५—१ वाक् ॥ २ पाणि ॥ ३ पाद ॥
उपस्थ ॥ ५ गुद ॥

कोश ५—१ अक्षमयकोश ॥ २ प्राणम
कोश ॥ ३ मनोमयकोश ॥ ४ विज्ञानम
कोश ॥ ५ आनन्दमयकोश ॥

केश—

१ अधिष्ठा —

[१] दुःखविषै सुखबुद्धि ॥

[२] अनात्माविषै आत्मबुद्धि ॥

[३] अनित्यविषै नित्यबुद्धि ॥

[४] अशुचिविषै शुचिबुद्धि ॥

यह चारोंप्रकारकी कार्य अधिष्ठा ॥

२ अहिमसा—माही (आत्मा) श्री बुद्धि
वक्तारा ज्ञान (सामान्यग्रहकार) ॥

३ राग—रुद्ध मनि (आरुद्धर्षति) ॥

४ द्वेष—का ॥

५ गतिनिवेश — मरणका भय ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४०७

ख्याति ५-प्रतीति औ कथनरूप व्यवहार ॥

- १ असत्ख्याति—शून्यवादी । असत् (निः-
स्वरूप) सर्पकी रज्जुदेशविषै प्रतीति औ
कथन मानतेहैं । सो ॥
- २ आत्मख्याति—क्षणिकविज्ञानवादी । क्षणिक-
बुद्धिरूप आत्माकी सर्परूपसैं प्रतीति औ
कथन मानतेहैं । सो ॥
- ३ अन्यथाख्याति—नैयायिक । बंबी (रा-
फडा) आदिक दूरदेशविषै स्थित सर्पकी
दोषके बलसैं रज्जुदेशविषै प्रतीति औ कथन
मानतेहैं सो ॥ अथवा रज्जुरूप ज्ञेयका सर्प-
रूपसैं ज्ञान मानतेहैं । सो ॥
- ४ अख्यातिख्याति—सांख्यप्रभाकर मतके
अनुसारी । “ यह सर्प है ” “ यह ”
अंश तो रज्जुके इदं पनैका प्रत्यक्षज्ञान है
औ “ सर्प ” यह पूर्व देखे सर्पका स्मृति-

ज्ञान है । ये दोज्ञान हैं । तिनका दोषकें
बलमें अस्थाति कहिये अविशेक (भेद
प्रतीतिका अभाव) होवैहै । ऐसैं मानतेहैं ॥

५ अनिर्वचनीयख्याति—येशतसिद्धातमें -
रज्जुविषे ताही अविद्याकरि अनिर्वचनीय
(सन्भ्रमन्में विलक्षण) सर्व औ ताका
ज्ञान उपजेहै । ताका ख्याति कहिये
प्रतीति औ कथन होवैहै ॥ ऐसैं मानते
हैं नो ॥

जीवन्मुक्तिके प्रयोजन ५—यद्यपि जीवन्
मुक्तता मानाहु सिद्ध है । तथापि इहा
जाय मुक्ति शब्दकरि जीवन्मुक्तिके विलक्षण
आनन्दका अवस्था (परमआदिकमूढिका) का
प्रमाण है । ताका प्रयोजन कहिये बल पाच
प्रकार है ।

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४०६.

१. ज्ञानरक्षा—अद्यपि एकवार उपजे दृढ-
बोधका नाश नहीं होवै है । यातें ज्ञानरक्षा
आपहीं सिद्ध है । तथापि इहां निरंतर ब्रह्मा-
कारवृत्तिकी स्थिति । ज्ञानरक्षाशब्दका
अर्थ है ॥

२. तप—मन औ इंद्रियनकी एकाग्रता वा
शरीर वाणी औ मनका संयम ॥

३. विसंवादाभाव—जल्प औ वितंडवादका
अभाव ॥

४. दुःखनिवृत्ति—दृष्ट (प्रत्यक्ष) दुःखकी
निवृत्ति ॥

५. सुखप्राप्ति—निरावरण परिपूर्ण औ सवृत्ति-
करूप जीवनमुक्तिके विलक्षण आनंदकी
प्राप्ति ॥

दृष्टान्त ५—जगत्के मिथ्यापनैविष्ये दृष्टान्त
पंचविध है ॥

- १ शुक्तिविषे रजतका दृष्टान्त ॥
- २ रज्जुविषे सर्पका दृष्टान्त ॥
- ३ स्थाणुविषे पुरुषका दृष्टान्त ॥
- ४ गगनविषे नीलताका दृष्टान्त ॥

५ मरीचिकाविषे जलका दृष्टान्त—मध्या
फालमें मरभूमि (ऊपरभूमि) विषे प्रतिबिम्ब
मूर्यके किरण मरीचिका कहियेहैं । तिनहि
जो जल भासता है । नाकूं मृगजल
जाजूजल कहतेहैं । सो ॥

नियम ५—

- १ शौच । २ सतोष ॥ ३ तप ॥
- ४ स्वाध्याय—स्वशास्त्रके वेदभागका
गातायादिकहा जो नित्य पाठ करना है
- ५ ईश्वरप्रणिधान—ईश्वरदिर्गेश्वरउपान

ला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४११

प्रलय ५—

- १ नित्यप्रलय—क्षणक्षणविषै सर्वकार्यनका जो दीपज्योतिकी न्याई नाश होवैहै सो । वा सुषुप्ति ॥
- २ नैमित्तिकप्रलय—ब्रह्माकी रात्रिरूपनिमित्तकरि होता जो है भूरआदि नीचेके तीनलोकनका नाश सो ॥
- ३ दिनप्रलय—ब्रह्माके दिनमें चतुर्दशमन्वंतर होतेहैं । तिस प्रत्येकका जो नाश । सो ॥ बाहीकुं अवांतरप्रलय औ मन्वंतरप्रलय वी कहतेहैं ॥ कोई तो याहीकुं नैमित्तिकप्रलय कहतेहैं ॥
- ४ महाप्रलय—ब्रह्माके शतवर्षके अन्तर जो होताहै ब्रह्मदेवसहित आकाशादिसर्वभूतनका नाश सो ॥

५ आत्यंतिकप्रलय—ज्ञानकरि जो होता है
कारणमहित सकलजगत्का बाध (अन्यंत-
निवृत्ति) सो ॥

प्राणादि ५-१ प्राण ॥ २ अपान ॥ ३ ध्यान ॥
४ उद्दान ॥ ५ समान ॥

भेद ५-१ जीवईश्वरका भेद ॥ २ जीवजीवका
भेद ॥ ३ जीवजडका भेद ॥ ४ ईशजडका
भेद ॥ ५ जडजडका भेद ॥

भ्रम ५—(देखो षष्ठकलाचिर्ष) १ भेदभ्रम ॥
२ कर्तृत्वभ्रम ॥ ३ संगभ्रम ॥ ४ विकारभ्रम
५ लब्धव्यभ्रम ॥

भ्रमनिवर्तकदृष्टान्त ५—(देखो षष्ठकलाचिर्ष)
१ विरप्रतिविम्ब ॥ २ लोहितस्फटिक ॥ ३ घ-
टीकाश ॥ ४ रज्जुसर्प ॥ ५ कनककुंडल ॥
महायज्ञ ५—१ देव ॥ २ अश्वि ॥ ३ पितर ॥
४ मनुष्य ॥ ५ नूनयज्ञ ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४१३

धर्म ५—

१ अहिंसा ॥ २ सत्य ॥ ३ ब्रह्मचर्य ॥

४ अपरिग्रह—निर्वाहसँ अधिकधनका असंग्रह ॥

५ अस्तेय—चोरीका अभाव ॥

योगभूमिका ५—

१ क्षेप—रागद्वेषादिकारि चित्तकी चंचलता ॥

२ विक्षेप—बहिर्मुखचित्तकी जो कदाचित्
ध्यानयुक्तता ॥ सो क्षेपतँ विशेष विक्षेप है ॥

३ सूढ—निद्रातन्द्रादियुक्तता ॥

४ ऐकाग्र ॥ ५ निरोध ॥

वचनादि ५—१ वचन ॥ २ आदान ॥

३ गमन ॥ ४ रति ॥ ५ मलत्याग ॥

शब्दादि ५—१ शब्द ॥ २ स्पर्श ॥ ३ रूप ॥

४ रस ॥ ५ गंध ॥

स्थूलभूत ५—१ आकाश ॥ २ वायु ॥

३ तेज ॥ ४ जल ॥ ५ पृथ्वी ॥

हेतुभास ५—हेतुके लक्षण (साध्यकी साधकता) से रहित हुआ हेतुकी म्याँई भास्ये। ऐसा जो कृपहेतु सो। या हेतुका जो आभास (होय) सो ॥

१ सदाव्यभिचार—साध्य (अग्नि) के आधय (त्वंत्) ओ तारे असाधके आधय (हर) तिनै धर्मनेवाला हेतु। सदाव्यभिचार है ॥ अग्नि त्वंत् अग्निमान् है " प्रमेय होनैने " यह ह्य है। वादीह अनेनांतिकहेतु की कहनेहैं।

२ विकल्पा—साध्यके असाधकता व्याप्त हेतु विरुद्ध है। अग्नि " गुण निय है एकक। विवाहप्रत्य (दामने) यह हेतु है। सो साध्य (निगमा) के असाधकता असाधकता-वर्त व्याप्त है। वादीह जो एकक है सो आभाव है। यहयत् न ह्य नियमानै ॥

सदाव्यभिचार—तारे साध्यके असाधकता

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४१५

साधक अन्यहेतु होवै सो । जैसे शब्द नित्य है । “ श्रवण होनैतैं ” इस हेतुके साध्य (नित्यता) के अभावका साधक । शब्द अनित्य है “ कार्य होनैतैं ” घटकी न्याई । यह हेतु है ॥ जो कार्य होवै सो अनित्य हीं होवै है ॥

४ असिद्ध—शब्द गुण है । “ चानुप होनैतैं ” रूपकी न्याई ॥ इहां चानुपत्वरूप हेतुका स्वरूप शब्दरूप पक्षविषै नहीं है । काहेतैं शब्दकूँ श्रवणजन्य ज्ञानका विषय होनैतैं ॥

५ बाधित—जाके साध्यका अभाव अन्य प्रमाणकरि निश्चित होवै सो । जैसे अग्नि उष्ण नहीं है “ द्रव्य (वस्तु) होनैतैं ” । इस हेतुके साध्य (अनुष्णता) के अभाव (उष्णता) का ग्रहण त्वक्इंद्रियकरि होवै है ॥

ज्ञानइंद्रिय ५—१ श्रोत्र ॥ २ त्वक् ॥

३ चक्षु ॥ ४ जिह्वा ॥ ५ घ्राण ॥

॥ पदार्थ पट्टिध ॥ ६ ॥

अजिहत्स्यदि ६-यति (संन्यासी) के धर्म विशेष ॥

१ अजिहत्स्य-जमपिण्यकी आगति दक्षिणा

२ संपुंसकथ्य-कुमारी । किशोरी (१)
युवकी) आ गृह्याग्नीविने सम
(निषिद्धाग्निता) रूप ॥

३ वसुध-वसुधैव कुटुम्बकम् अधिक सम

४ अधत्य-एकधमुक्तवर्गस्य अधिक दक्षि
समस्त ॥

५ वधिद्वय-वर्णमात्रका अधत्य ॥

६ सुगन्ध-एकवर्णविने सुगन्धता (मृदा

समाधिपदार्थ ६-इत्यतिरहित पदार्थ ॥

१ जीव ॥ २ ईश ॥ ३ सुप्रसन्न

४ दक्षिणा ॥ ५ धनमन्त्रविद्यागर्वध

६ निश्चय भेद ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४१७

अरिवर्ग ६—परलोकके विरोधी आंतर
(भीतरस्थित) शत्रुनका समूह ॥

१ काम—प्राप्तवस्तुके भोगकी इच्छा ॥

२ क्रोध—द्वेष ॥

३ लोभ—अप्राप्त वस्तुकी प्राप्तिकी इच्छा ॥

४ मोह—आत्माअनात्माका वा कार्य (शुभ)
अकार्य (शुभ) का अविवेक ॥

५ मद .. गर्भ (अहंकार)

६ मत्सर—परके उत्कर्षका असहन ॥

अवस्था ६—स्थूलदेहके काल ॥

१ शिशु—एकवर्षके देहका काल ॥

२ कौमार—पांचवर्षके देहका काल ॥

३ पौगंड—षट्सँ दशवर्षके देहका काल ॥

४ किशोर—एकादशसँ पंचदशवर्षके देहका काल ॥

५ यौवन—षोडशसँ चालीशवर्षके देहका काल ॥

६ जरा—चालीशसँ ऊपरके देहका काल ॥

ईश्वरके भग ६—१ समप्रपेक्ष्य ॥ २ समप्र-
धर्म ॥ समप्रयश ॥ ४ समप्रथी ॥
५ समप्रज्ञान ॥ ६ समप्रवैराग्य ॥

ईश्वरके ज्ञान ६—

१ उत्पत्ति ॥ २ प्रलय ॥ ३ गति ॥

४ आगति—इस लोकविषे जीवका आत्मम-
रूप आगति है ताका ज्ञान ॥
५ विद्या ॥ ६ अविद्या ॥

ऊर्ध्व ६ त्वंसारूप सागरकी सहरीया ॥

१ जन्म ॥ २ मरण ॥ ३ बुधा ॥ ४ मृया ॥
५ हर्ष ॥ ६ शोक ॥

कर्म ६—निव्यकर्म ॥

१ स्नान ॥ २ जप ॥ ३ होम ॥

४ अर्पण—देवगुजन ॥

कला । ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४१६

५ आतिथ्य—भोजनके समय आये अभ्यागतके अर्थ अन्नदान ॥

६ वैश्वदेव—अग्निविषै हुतद्रव्यका होम ॥

कौशिक ६—अन्नमयकोश (देह) विषै होनै-
वाले पदार्थ ॥

१ त्वक् ॥ २ मांस ॥ ३ रुधिर ॥ ४ मेद ॥

५ मज्जा ॥ ६ अस्थि ॥

प्रमाण ६—

१ प्रत्यक्षप्रमाण—प्रत्यक्षप्रमाका जो करण
सो प्रत्यक्षप्रमाण है । ऐसैं श्रोत्रआदिक-
पांचज्ञानेंद्रिय हैं ॥

२ अनुमानप्रमाण—अनुमितिप्रमाका करण
जो लिंगका ज्ञान सो अनुमानप्रमाण है ।
जैसैं पर्वतविषै अग्निके ज्ञानका हेतु धूमरूप
लिंगका ज्ञान है ॥

३ उपमानप्रमाण—उपमितिप्रमाका करण
जो सादृश्यका ज्ञान सो उपमानप्रमाण है ।
जैसे गवय (रोम्ह) में गौके सादृश्यका
ज्ञान है ॥

४ शब्दप्रमाण—शब्दीप्रमाका करण जो
लोकित्वादिशब्द सो ॥

५ अर्थावतिप्रमाण—अर्थावतिप्रमाका करण
जो उपपायका ज्ञान । सो अर्थावतिप्रमाण
है ॥ जैसे दिवस अमोघी स्थूलपुरुषके नाभिमें
भाजतव सामरूप अर्थावतिप्रमाका हेतु
स्थूलता (उपपाय) का ज्ञान है ॥

६ अनुपलब्धिप्रमाण—अभावप्रमाका करण
जा पदार्थकी अप्रतीति । सो अनुपलब्धि-
प्रमाण है । जैसे गृहमें घण्टे अभावके
ज्ञान ही हेतु घटकी अप्रतीति है ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४२१

अम ६--१ कुल ॥ २ गोत्र ॥ ३ जाति ॥
४ वर्ण ॥ ५ आश्रम ॥ ६ नाम ॥

रस ६--१ मधुररस ॥ २ आम्लरस ॥
३ लवणरस ॥ ४ कटुकरस ॥ ५ कषायरस ॥
६ तिक्तरस ॥

लिङ्ग ६--वेदवाक्यके तात्पर्यकेनिश्चायक लिङ्ग ॥

१ उपक्रमउपसंहार-आदिश्रंतकी एकरूपता ॥

२ अभ्यास-वारम्बार पठन ॥

३ अपूर्वता-अलौकिकता ॥

४ फल-मोक्ष ॥

५ अर्थवाद-स्तुति ॥

६ उपपत्ति-अनुकूलदृष्टांत ॥

विकार ६--१ जन्म

२ अस्तित्व-पूर्व अविद्यमानका होना ॥

३ वृद्धि ॥ ४ विपरिणाम ॥ ५ अपक्षय ॥

६ विनाश ॥

वेदश्रंग ६-१ शिल्पा ॥ २ कल्प ॥ ३ व्याक-
रण । ४ निरुक्त ॥ ५ छन्द ॥ ६ ज्योतिष ॥

शमाधि ६-१ शुभ ॥ २ दम् ॥ ३ उपरति ॥
४ तितित्ता ॥ ५ भ्रष्टा ॥ ६ समाधान ॥

शास्त्र ६-१ साय्यशास्त्र ॥ २ योगशास्त्र ॥
३ न्यायशास्त्र ॥ ४ वैशेषिकशास्त्र ॥ ५ पुर्य-
मीमांसाशास्त्र ॥ ६ उत्तरमीमांसाशास्त्र ॥

समाधि ६-१ बाह्यदृश्यानुविद्धसमाधि ॥ २
आन्तरदृश्यानुविद्धसमाधि ॥ ३ बाह्यशब्दा-
नुविद्धसमाधि ॥ ४ आन्तरशब्दानुविद्ध-
समाधि ॥ ५ बाह्यनिर्विकल्पसमाधि ॥
६ आन्तरनिर्विकल्पसमाधि ॥

सूत्र ६-१ जैमिनीयसूत्र ॥ २ आश्वलायनसूत्र ॥
३ श्रावस्मयसूत्र ॥ ४ बौधायनसूत्र ॥
५ कात्यायनसूत्र ॥ ६ वैयानसीयसूत्र ॥

कंजा] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णेन ॥ १६ ॥ ४२३

॥ पदार्थ सप्तविध ॥ ७ ॥

अतलादि ७—१ अतल ॥ २ वितल ॥

३ सुतल ॥ ४ तलातल ॥ ५ रसातल ॥

६ महातल ॥ ७ पाताल ॥

अवस्था ७—चिदाभासकी क्रमत्तै तीन बंधकी
औ च्यारी मोक्षकी हेतु दशा ॥

१ अज्ञान—“नहिं जानताहूं” इस व्यवहार-
का हेतु जो आवरणविक्षेपहेतुशक्तिवाला
अनादिअनिर्वचनीयभानरूप पदार्थ सो ॥

२ आवरण—“नहीं है । नहीं भासता , है ”
इस व्यवहारका हेतु अज्ञानका कार्य ॥

विक्षेप—धर्मसहितदेहादिप्रपञ्च औ ताका
ज्ञान ॥

४ परोक्षज्ञान ॥ ५ अपरोक्षज्ञान ॥

६ शोकनाश—विक्षेपनाश (भ्रान्तिनाश) ॥

७ तृप्ति—ज्ञानजनित हर्ष ॥

चेतन ७—

- १ ईश्वरचेतन—मायाविशिष्ट चेतन ॥
- २ जीवचेतन—अविद्याविशिष्ट चेतन ॥
- ३ शुद्धचेतन—निरुपाधिक चेतन ॥
- ४ प्रमाताचेतन—प्रमाता जो अत करण तिसकरि अवच्छिन्नचेतन । प्रमाताचेतन है ॥
- ५ प्रमाणचेतन—इन्द्रियद्वारा शरीरसे गद्विर निकसिके घटादिविषयपर्यंत पहुँची जो वृत्ति । सा प्रमाण है । तिसकरि अवच्छिन्नचेतन । प्रमाणचेतन है ।
- ६ प्रमेयचेतन—प्रमेय जो घटादिविषय तिसकरि अवच्छिन्न (अन्योर्स भिन्न रिया) चेतन । प्रमेयचेतन है ॥
- ७ प्रमाचेतन—घटादिविषयाकार भई जो वृत्ति सो प्रमा है । तिसकरि अवच्छिन्न चेतन या तिसरिषे प्रतिरिखत चेतन प्रमाचेतन है । याहीकु प्रमिनिचेतन श्री फराचेतन वी कहतेहैं

द्रव्यादिपदार्थ ७—नैयायिकमतमें जे द्रव्य-
आदिसप्तपदार्थ मानेहैं । वे ॥

१ द्रव्य—न्यायमतमें [१] पृथ्वी [२] जल
[३] तेज [४] वायु [५] आकाश
[६] काल [७] दिशा [८] आत्मा
[९] मन । ये नव द्रव्य (गुणनके आश्रय-
रूप पदार्थ) मानेहैं । वे ॥

२ गुण—न्यायमतमें रूपसैं आदिलेके संस्कार-
पर्यंत २४ गुण मानेहैं । वे ॥

३ कर्म—न्यायमतमें [१] उत्क्षेपण (उंचे
फेंकना) [२] अपक्षेपण (नीचे फेंकना)
[३] आकुंचन [४] प्रसारण औ
[५] गमन । ये पंचविधकर्म मानेहैं । वे ॥

४ सामान्य—न्यायमतमें पर (सत्ता) औ
अपर (घटत्वादिक) इस भेदतैं द्विविध
जाति मानीहै । सो ॥

५ समवाय—वेदानमतमे जद्वां जद्वा तादा
न्यसयध मान्याद् तद्वां तद्वां न्यायमतमे
सवधविशेष (नित्यसयध) मान्याद् । सो ॥

६ अभाव—[१] प्रागभाव [२] मध्यसा
भाव [३] अन्योन्याभाव [४] अत्यता
भाव श्री [५] सामयिकाभाव । यह पय
विध नास्तिप्रतीतिके विषयरूप यदार्थ ॥

७ विशेष—न्यायमतमे जे परमाणुसके मध्य-
गत अतस्तस्यवाशरूप यदार्थ मानेद् । ये ॥

धानु ७—

१ रस-सूत्रम (युक्त्यपाय) । मध्यम (अन्नका
सार) श्री स्थूल (मल) भेदने तीनप्रकारके
जो भुक्तअन्नके विभाग होयेंद् । तिनमेंसे
मध्यमविभाग दे । सो ॥

२ अधिग ॥ १ मास ॥

४ मेव—श्येनमांस (चर्मा) ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४२७.

५ मज्जा—अस्थिगत सचिक्कणपदार्थ ॥

६ अस्थि ॥ ७ रेत ॥

भूरादिलोक ७-१ भूर्लोक ॥ २ भुवर्लोक ॥

३ स्वरलोक ॥ ४ महर्लोक ॥ ५ जनलोक ॥

६ तपलोक ॥ ७ सत्यलोक ॥

मौनादि ७-१ मौन ॥ २ योगासन ॥ ३ योग ॥

४ तितिक्षा ॥ ५ एकांतशीलता ॥ ६ निःस्पृ-

हता ॥ ७ समता ॥

रूप ७-१ शुक्ल ॥ २ कृष्ण ॥ ३ पीत ॥

४ रक्त ॥ ५ हरित ॥ ६ कपिश ॥ ७ चित्र ॥

व्यसन ७-१ तन ॥ २ मन ३ क्रोध ॥ ४ विषय ॥

५ धन ॥ ६ राज्य ॥ ७ मेवकव्यसन ॥

ज्ञानभूमिका ७-(देखो या ग्रंथकी त्रयोदश-

कलाविषय) १ शुभेच्छा ॥ २ सुविचारणा ॥

३ तनुमानसा ॥ ४ सत्त्वापत्ति ॥ ५ असं-

सक्ति ॥ ६ पदार्थाभाविनी ॥ ७ तुरीयगा ।

॥ पदार्थ अष्टविध ॥ ८ ॥

पाश ८-१ दया ॥ २ शका ॥ ३ भय
४ लज्जा ॥ ५ निंदा ॥ ६ कुल ॥ ७ शील ।
८ धन ॥

पुरी ८-१ ज्ञानेन्द्रियपञ्चक ॥ २ कर्मेन्द्रियपञ्चक ।
३ अन्न करणचतुष्टय ॥ ४ प्राणादिपञ्चक ।
५ भूतपञ्चक ॥ ६ काम ॥ ७ त्रिविधकर्म ।
८ धामना ॥

प्रकृति ८-१ पृथ्वी ॥ २ जल ॥ ३ अग्नि ।
४ वायु ॥ ५ आकाश ॥

६ मन-इहा मनश्च दशकरि समष्टिमनरू
अहकारका ग्रहण है ॥

७ बुद्धि-इहा बुद्धिश्च दशकरि समष्टिबुद्धिरू
महत्तत्त्वका ग्रहण है ॥

कला] ॥ वेदान्तपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४२६

अहंकार—इहां अहंकारशब्दकरि महत्त-
त्वं पूर्वं शुद्धअहंकारके कारणअज्ञानरूप
मूल प्रकृतिका ग्रहण है ॥

ह्यन्तर्गके अंग ८—

- १ स्त्रीका दर्शन ॥ २ स्पर्शन ॥
- ३ केलिः—चोपडआदिकलीडा
(खेल) ॥
- ४ कीर्तन ॥ ५ गुह्यभाषण ॥
- ६ संकल्प—चितन (स्मरण) ॥
- ७ निश्चय ॥ ८ इनका त्याग ॥

इन अष्टमैथुनसं विपरीत ॥

- मद ८—१ कुलमद ॥ २ शीलमद ॥ ३ धनमद ॥
४ रूपमद ॥ ५ यौवनमद ॥ ६ विद्यामद ॥
७ तपमद ॥ ८ राज्यमद ॥

मूर्तिमद :-

- १ पृथ्वीमद—अस्थिमांसादिपृथ्वीके तत्त्वनका अभिमान ॥
- २ जलमद—शुक्लशोणितआदिक जलके तरंगनका अभिमान ॥
- ३ तेजमद—बुधाआदिकतेजतत्त्वनकी अधिकत
- ४ पवनमद—चलन (विदेशगमन) धावन आदिक वायुके तत्त्वोंकरि युक्तता ॥
- ५ आकाशमद—कामप्रोधादिक आकाशके तरंगकरि युक्तता ॥
- ६ चन्द्रमद—शीतसतारूप चन्द्रके गुणकरि युक्त होना ॥
- ७ सूर्यमद—सताप (क्रोधादि) रूप सूर्यके गुणकरि युक्त होना ॥
- ८ आत्ममद—विद्याधनकुलआदिक आत्माके सवधिनका अभिमान ॥

कैला] । वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४३१

शब्दशक्तिमहणहेतु ८--१ व्याकरण ॥

२ उपनाम ॥ ३ कोश ॥ ४ आसवाक्य ॥

५ वृद्धव्यवहार ॥ ६ वाक्यशेष ॥ ७ विवरण ॥

८ सिद्धपदको सन्निधि ॥

समाधिके अंग ८--१ यम ॥ २ नियम ॥

३ आसन ॥ ४ प्राणायाम ॥ ५ प्रत्याहार ॥

६ धारणा । ७ ध्यान ॥ ८ सविकल्पसमाधि ॥

॥ पदार्थ नवविध ॥ ९ ॥

तत्त्व ६--किसी महात्माके मतमें लिंगदेहके
नवतत्त्व मानेहैं । वे ॥

१ श्रोत्र ॥ २ स्पर्श ॥ ३ चक्षु ॥ ४ जिह्वा ॥

५ घ्राण ॥ ६ मन ॥ ७ बुद्धि ॥ ८ चित्त ॥

९ अहंकार ॥

संसार ६--१ ज्ञाता ॥ २ ज्ञान ॥ ३ ज्ञेय ॥

४ भोक्ता । ५ भोग्य ॥ ६ भोग ॥ ७ कर्त्ता ॥

८ करण ॥ ९ क्रिया ॥

पदार्थ दशविध ॥ १० ॥

नाडिका औ देवता १० —

- १ इडा (घट्ट) वामनासिकागत चंद्रनाडी ।
हरि देवता ॥
- २ पिंगला (सूर्य) दक्षिणनासिकागत सूर्यनाडी
ब्रह्मा देवता ॥
- ३ सुपुष्णा (मध्यमा) नासिकाके मध्यगतनाडी
रुद्र देवता ॥
- ४ गाधारी (दक्षिणनेत्र) इन्द्र ॥
- ५ हार्दिनाजिह्वा (वामनेत्र) वरुण ॥
- ६ प्रथा (दक्षिणकर्ण) ईश्वर ॥
- ७ गणस्त्रिर्ना (वामकर्ण) ब्रह्मा ॥
- ८ कुट्ट (गुदा) पृथ्वी ॥
- ९ अश्वघुषा (नेत्र) सूर्य ॥
- १० शाग्रती (नाभि) चन्द्र ॥

॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४३३

शृंगारादिरस १०—१ शृङ्गाररस ॥ २ वीर-
रस ॥ ३ करुणारस ॥ ४ अद्भुतरस ॥
५ हास्यरस ॥ ६ भयानकरस ॥ ७ वीभत्स
रस ॥ ८ रौद्ररस ॥ ९ ॥ शांतिरस ॥
१० प्रेमभक्ति वा ज्ञानरस ॥

पदार्थ एकादशविध ॥ ११ ॥

ज्ञानसाधन ११—

१ विवैक ॥ २ वैराग्य ॥ ३ पदसंपत्ति ॥

४ मुमुक्षुता ॥

५ गुरुपसत्ति—विधिपूर्वक गुरुके शरण
जाना ॥

६ श्रवण ॥ ७ तत्त्वज्ञानाभ्यास ॥ ८ मनन ॥

९ निदिध्यासन ॥

१० मनोनाश—इहां मनशब्दकरि रजतमसै
लत्त्वगुणका तिरस्काररूप मनका स्थूलभाव

कहियेहैं । ताका नाश कहिये ग्रहाभ्यास-
की प्रवृत्ततासँ रजतमके तिरस्कारकरि जो
सर्वगुणका आविर्भाव होवैहैं । सो ॥

११ वासनाक्षय ॥

पदार्थ द्वादशविध ॥ १२ ॥

अनात्माके घर्म १२—

१ अनित्य ॥ २ विनाशी ॥ ३ अशुद्ध ॥

४ नाना ॥ ५ क्षेत्र ॥ ६ आवृत्त ॥

७ विकारि ॥ ८ परप्रकाश ॥ ९ हेतुमान्

१० कर्माद्य—परिच्छिद्य (देशकालवस्तुहृत
परिच्छिद्यवाला)

११ सगी ॥ १२ आवृत्त ॥

आत्माके घर्म १२—

१ नित्य—उत्पत्ति अरु नाशतँ रहित ॥

२ अद्वय—घटनेवदनेसँ रहित ॥

मला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४३५

३ शुद्धः—मायाअविद्यारूप मलरहित ॥

४ एकः—सजातीयभेदरहित ॥

५ क्षेत्रज्ञः—शरीररूप क्षेत्रका ज्ञाता ॥

६ आश्रय—अधिष्ठान ॥

७ अविक्रयः—अविकारी ॥

स्वप्रकाशः—अपनै प्रकाशविषय अन्य
(स्वपर) प्रकाशकी अपेक्षासँ रहित हुया
सर्वका प्रकाशक ॥

८ हेतुः—जालेके कारण ऊर्णजाभिकी न्याई
औ नख अरु रोम (केश) नके कारण
पुरुषकी न्याई जगत्का अभिन्ननिमित्त
(विवर्त) उपादानकारण है ॥

९ व्यापकः—अपरिच्छिन्न (परिपूर्ण) ॥

११ असंगी—सजातीय विजातीय औ स्वगत-
स्पर्धंधरहित ॥

१२ अनावृतः—सर्वथा आवरणतँ रहित ॥

ब्राह्मणके व्रत १२—

१ ज्ञान ॥ २ सत्य ॥ ३ शम ॥ ४ दम ॥

५ श्रुत—शाम्बाभ्यास ॥

६ अमाससूर्य—परके उन्मर्षका असद्वनरूप
जा मग्नर तिसरै रहितपना ॥

७ लज्जा ॥ ८ तितिक्षा ॥

९ अनसूया—गुणोंकेविषै दोषका आरोपरूप
असूयासै रहितता ॥

१० यज्ञ ॥ ११ दान ॥

१२ धैर्य—काम श्री क्रोधके वेगना रोकना ॥

महत्ताहेतुधर्म १०—१ धनदयता ॥

२ अभिजन—कुटुम्ब ॥ ३ रूप ॥ ४ तप ॥

५ श्रुत—शाम्बाभ्यास ॥

६ यांज—शत्रुवनका नेज ॥

७ तज ॥ ८ प्रभाव ॥ ९ बल ॥

१० पौण्ड्र ॥ ११ बुद्धि ॥ १२ योग ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन । १६ ॥ ४३७

॥ पदार्थ त्रयोदशविध ॥ १३ ॥

भागवतधर्म १३—भक्तवत्भक्तनके धर्म ॥

१ सकामकर्मके फलका विपरीत दर्शन ॥

२ धनुर्गृह्णुत्रादिविषै दुःखबुद्धि औ चलबुद्धि ॥

३ परलोकविषै नरेश्वरबुद्धि ॥

४ शब्दब्रह्म औ परब्रह्मविषै कुशलगुरुप्रति

गमन ॥

५ गुरुविषै ईश्वरबुद्धि औ निष्कपटसेवा ॥

६ परमेश्वरविषै सर्वकर्मसमर्पण ॥

७ भक्तिवैराग्यसहित स्वरूपानुभव । साधुसङ्ग ॥

८ शौच । तप तितिक्षा । मौन ॥

९ स्वाध्याय । आर्जव (सरलस्वभाव) ब्रह्मचर्य ।

अहिंसा औ द्वंद्वसमन्व (शीतउष्णआदिक
द्वंद्वधर्मके सहनका स्वभाव) ॥

१० सर्वत्रआत्मारूप ईश्वरका दर्शन ॥

११ कैवल्य (एकाकी रहना) । अनिकेत

(गृह न बाधना) । एकांन (विविक्त)

चीरवस्त्र + सतोष ॥

१२ सर्वभूतनविषै आत्माके भगवद्भावका दर्शन ।

ओ भगवद्रूप आत्माविषै सर्वभूतनका दर्शन ॥

१३ जन्मकर्मवर्णाधमादिकरि देहविषै निरभिमान
श्री स्वपरयुद्धिका अभाव ॥

॥ पदार्थ चतुर्दशविध ॥ १४ ॥

त्रिपुटी १४—

ज्ञानेन्द्रियकी त्रिपुटी ।

इन्द्रिय	देवता	विषय
अध्यात्म	अधिदेव	अधिभूत
१ श्रोत्र ।	दिशा ।	शब्द ॥
२ त्वचा ।	वायु ।	स्पर्श ॥
३ अक्षु ।	सूर्य ।	रूप ॥
४ जिह्वा ।	घरण ।	रस ॥
५ घ्राण ।	अश्विनीकुमार ।	गंध ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४३६

कर्मेन्द्रियनकी त्रिपुटी ॥

६ वाक् ।	अग्नि ।	वचन (क्रिया) ॥
७ हस्त ।	चन्द्र ।	लेनादेना ॥
८ पाद ।	वामनजी ।	गमन ॥
९ उपस्थ ।	प्रजापति ।	रतिभोग ॥
१० गुद ।	यम ।	मलत्याग ॥

अतःकरणकी त्रिपुटी ॥

११ मन ।	चन्द्रमा ।	संकल्पविकल्प ॥
१२ बुद्धि ।	ब्रह्मा ।	निश्चय ॥
१३ चित्त ।	वासुदेव ।	चितन ॥
१४ अहंकार ।	रुद्र ।	अहंपना ॥

पदार्थ पंचदशविध ॥ १५ ॥

मायाके नाम १५-१ माया ॥ २ अविद्या ॥
३ प्रकृति ॥ ४ शक्ति ॥ ५ सत्त्वा ।
६ मूला ॥ ७ नूला ॥ ८ योनि ॥ ९ अव्यक्त
१० अज्याकृत ॥ ११ अज्ञा ॥ १२ अज्ञान

१३ तमः ॥ १४ तुच्छा ॥ १५ अनिर्वचनीया ॥

॥ पदार्थ षोडशविध ॥ १६ ॥

कला—१ हिरण्यगर्भ ॥ अद्वा ॥ ३ आ-
काश ॥ ४ वायु ॥ ५ तेज ॥ ६ जल ॥
७ पृथ्वी ॥ ८ दर्शेन्द्रिय ॥ ९ मन ॥ १०
अन्न ॥ ११ बल ॥ १२ तप ॥ १३ मन्त्र ॥
१४ कर्म ॥ १५ लोक ॥ १६ नाम ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये वेदान्तपदार्थ-
संज्ञावर्णननामिका षोडशीकला—द्वितीय-
विभागः समाप्तः ॥

॥ संस्कृत दोहा ॥

श्रीविचारचन्द्रोदय शुद्धां धिय समाप्य ।
विचार्येति परानन्दे नत्तदज्ञानमधाप्य ॥१॥

१ पूर्वमीमांसा	अनंत प्रवाहरूप संयोगवियोगवान्	परमाणु	०	भोक्ता
२ उत्तरमीमांसा (वेदांत)	नामरूपक्रियात्मक मायावा परणाम चेतनका धिचत्	अभिन्ननिमित्तो पादानईश्वर	मायाविशिष्ट- चेतन	अविद्यगविशिष्ट- चेतन
३ न्याय	परमाणु आरंभित संयोगवियोगजन्य आकृतिविशेष	परमाणु ईश्वर- सादनव	नित्यहृच्छाज्ञा नादिगुणवान विभुकर्त्ता १०	ज्ञानादिचतुर्दशगु- णवान् कर्त्ता भो- क्ता जडनिभुनाना
४ वैशेषिक	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार
५ सांख्य	प्रकृतिपरिणामत्रयो विशतिः द्वात्मक	त्रिगुणात्मक- प्रकृति	०	असंग चेतन विभु नाना भोक्ता
६ योग	प्रकृतिपरिणामत्रयो विशतिनित्वात्मक	कर्मानुसार प्र- कृति औ नञि ध्यामक ईश्वर	क्लेशकर्मविपा- क आशय असं- ख्य पुरुषविशेष	असंग चेतन विभु नाना कर्त्ता भोक्ता

शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली पुस्तकें ।

दशीमूल	१॥)
दशी भा० टी०	१०)
चार सागर निश्चलदास कृत	...		२)
चार सागर पीताम्बर कृत भा० टी०			८)
शान्त संग्रह	=)
इन्दर विलास बड़ा सटीक	...		२॥)
दान्त विनोद	=)
दान्त मत दर्शन	॥॥)
अष्टावक्र गीता भाषा टीका	...		१॥)
चरक भाषा टीका	१०)
प्रकटित भा० टी०	३॥)
नाड़ी ज्ञान तरंगनी अनुपान तरंगनी			
सहित भाषा टीका	१॥)

मिलने का पता—

हरिप्रसाद भागीरथ लिमिटेड,

प्राचीन पुस्तकालय बम्बई नं० २

सोल एजेंट—

रघुनाथदास पुरुषोत्तमदास अग्रवाल,

चूना कंकड़, मथुरा यू० पी०

पदार्थ	२ यथेष्ट	६ चर	७ साच	८ साचसाधन
१ पूर्वोत्पादा	निष्ठिदु कर्म	नरकारिदुष्ट मय	रक्तप्रति	उद्दिविहितकर्म
२ उत्तरमासा	पविषा	पविषादराय	इविषाकर्मनिष्ठु- सिपूवक परमानद- समापदिन	प्रक्षा मैवज्ञान
३ ग्याय	सज्जान	सविगतिदु	गविगतिदुःखाद्य	दुतरभिज्ञात्मज्ञान
४ ग्वेपक	सज्जान	एकविगतिदु	एकविगतिदुःखाद्य	दुतरभिज्ञादज्ञान
५ सावित्र	सवित्रैक	इष्टादमाद- प्रवित्रदुःख	त्रिविषदुःखस	प्रकृतिपुष्टयवित्रैक
६ पाग	यत्रैक	अष्टिपुष्टयवशेण इष्टय सविषादि	अष्टालपुष्टयवशेण साचयुक्त कर्मनिष्ठ	निष्ठिदुष्टयवशेण

